गुरुनानक महाकाव्य

राजस्थान प्रकाशन
त्रिपोलिया बाजार, जयपुर-2

गुरुनानक महाकाव्य

रामकृष्ण शर्मा

प्रोफेसर हिन्दी विभाग
महारानी श्री जया कालेज
भरतपुर

प्रकाशक :
भाषा प्रकाशन मन्दिर
त्रिपोलिया बाजार,
जयपुर-2

कम्पोजिंग :
जनरल कम्पोजिंग एजेन्सी
किशनपोल बाजार,
जयपुर-3

मुद्रक :
मॉडर्न प्रिन्टर्स,
गोदों का रास्ता,
जयपुर-3

संस्करण :
1989

मूल्य :
95,00

लेखक :
रामकृष्ण शर्मा

प्राक्कथन

गरिमामय इस महाराष्ट्र के, जन जन को कवि का संदेश।
व्यक्ति बहुत छोटा होता है, सबसे ऊँचा होता देश ॥
आओ हम सब हिलमिल जीवें, भ्रातृभाव की सुधा पियें।
जननी अक्षय रहे हमारी, हम दिन चार जियें न जियें ॥

सभी विश्व में वंद्य हमारी, पावन भू की जय जय हो।
सत्य, अहिंसा, सदाचार के, आदर्शों की सदा विजय हो ॥
यह उपवन मघवा-कानन से, शुचितर-सुरभित धन्य बना।
विविध कलित कलिका कुसुमों का, भू पर स्वर्ग अनन्य बना ॥

धन्य धन्य हे भारत जननी ! तेरा गौरव अक्षय हो।
कोटि कोटि शुचि संतानों की, मातृभूमि तेरी जय हो ॥
तू माता हिन्दू-मुस्लिम की, सिक्ख-ईसाई की जननी तू।
बौद्ध-जैन की जन्मदायिनी, नेहमयो तेरी जय हो ॥

सब तेरी संतान सुमन सम, यश की सुरभि सदा महके।
जन गन मन से गुंजित नभ में, अमर तिरंगे की जय हो ॥
मन्दिर मस्जिद गिरजाघर और गुरुद्वारे की सदा विजय हो।
सह अस्तित्व सदाचारों की, पावन भू की जय जय हो ॥

हिन्दू-सिक्ख सगे भाई हैं, इनका नाता खून का।
देश और वासी का नाता, उपवन और प्रसून का ॥
राष्ट्र एक उद्यान और हम इसकी कलियाँ फूल है।
अपना उपवन स्वयं जलाना, आत्मघातिनी भूल है ॥

सिक्खों को जो अलग मानते, वे हिन्दू अज्ञानी हैं।
रघुवंशी श्रीरामसुवन, लवकुश के वंशज मानी हैं।।
ये हिन्दुत्व-आन के रक्षक, गरिमामय वलिदान कर।
शीश कटाया, नहीं झुकाया, सत्य-सुधा का पान कर।।

गुरुवाणी शुचि अमर सभी के उर में सुधा घोलती है।
तुलसी सूर कवीर आदि की कविता वही बोलती है।।
सिक्ख जाति ने धर्म वचाया, दे दे कर भारी वलिदान।
हिन्दू-सिक्ख लड़ें आपस में, इससे बढ़कर क्या अज्ञान?

रहे एकता, राष्ट्र अमर हो, चढ़ें प्रगति के नव सोपान।
जागा सदियों की निद्रा से, भारत फिर से बने महान।।
जय हो, जय हो भारत माँ की, अमर तिरंगे की जय हो।
दानवता का महानाश हो, मानवता की अमर विजय हो।।

आओ लवकुश की संतानों, रामकृष्ण के वच्चे आओ।
जो कुछ हुआ भुला दो उसको, वन्धु वन्धु को गले लगाओ।।
जो अरि हमको लड़वाते हैं, उनके भेद खोल दो तुम।
अपनों के उर-घाव पुर सकें, ऐसी गिरा बोल दो तुम।।

हिंसा करने को उद्यत जो, उनका क्या ईमान है?
उनका कोई धर्म नहीं है, ना उनका भगवान है।।
उनके कारण हम क्यों भूलें, हम सब एक समान हैं।
एक हमारी भारत जननी, उसकी सब संतान हैं।।

नौका से तूफान लड़े है, तम से लड़ी रश्मि की रेखा।
विष की ज्वाला लड़ी सुधा से, अवगुण गुण से लड़ते देखा।।
हिंसा और अहिंसा जूझीं, इसका हमको नहीं परेखा।
अपनी माँ से घात करे जो, ऐसा हमने कभी न देखा।।

अरि से अरि के यूथ लड़े हैं, भले बुरे को लड़ते देखा।
पाप-पुण्य की सतत लड़ाई, जन्म मरण की कटती रेखा।।
सदा हिंस्र ने रक्त पिया है, इसका भी कुछ नहीं परेखा।
फूल लड़े हों एक बाग के, यह तो हमने कभी न देखा।।

रंग बिरंगे फूल खिले हों, उस डाली का भाग्य धन्य है।
जिसकी संतति हिलमिल रहती, उस माता सा कौन अन्य है।।
सुभग तिरंगा नभ में लहरे, जन गन मन सा अक्षय धन है।
विविध बोलियाँ अंचल भाषा, हिन्दी तो इन सबका मन है।।



आत्म निवेदन

संसार के रंगमंच पर समय समय पर अनेक महान आत्मायें अवतरित होती हैं तथा मानव-लीला कर भूली भटकी मानवता को सही मार्ग दिखाती है। ये महान आत्मायें परमात्मा के बहुत निकट होती है तथा उस विराट शक्ति से प्रेरणा लेकर महान कार्य सम्पन्न करती हैं। आत्मा के विकास की कोई सीमा नहीं है। आत्मा विकास करते करते उस चरम विन्दु तक पहुँच सकती है जिसे ब्रह्म कहा जाता है। सामान्य जन या जीव मात्र में जो आत्मायें निवास करती है वे भी परमात्मा की ही अंशरूपा होती है, किन्तु विकास की अवस्थाओं में पर्याप्त अन्तर होता है। नाली के कीट में भी आत्मा है, हाथी में भी आत्मा है तथा एक महान भक्त या धर्म प्रवर्त्तक में भी आत्मा है, किन्तु भारी भेद है। यह भेद विकास स्तरों का है। यदि मानवों में ही तुलना की जावे तो भी यह भेद स्पष्ट दिखाई देता है। जन्म जन्मान्तर के संस्कार इस भेद के लिये उत्तरदायी होते है। उदात्त गुणों का अभ्यास करते करते व्यक्ति अपनी आत्मा में विराट शक्ति प्राप्त करता रहता है। धीरे-धीरे कलुष समाप्त हो जाते है तथा शुद्ध चेतना शेष रह जाती है। ऐसी आत्मायें परम शक्ति सम्पन्न बन जाती है। वे जन्म-मरण के चक्र से मुक्त होकर भी लोक-हित सम्पन्न करने को अवतरित होती हैं। महान आदर्शों की स्थापना करती हैं। महान मूल्यों को स्थापित करती हैं। अपना कार्य सम्पन्न कर देह के बन्धन को त्याग कर पुन: परम चेतना में जा मिलती है। उनके चरण-चिह्न मानवता के पथ प्रदर्शन हेतु रह जाते हैं। श्री गुरुनानक देव जी ऐसे ही अवतार थे।

श्री गुरुनानक देव जी पर महाकाव्य लिखने की प्रेरणा भी सहसा प्राप्त हुई। इससे पूर्व भगवान महावीर महाकाव्य पूर्ण हो चुका था। भगवान के जो भी अवतार हुये हैं उन सभी को हृदय ने सदैव नमन किया है। धर्म को कभी सीमित क्षेत्र में बाँधकर नहीं देख पाया। पैगम्बर किस धर्म का प्रवर्तक हुआ है, इससे क्या अन्तर पड़ता है ? वह तो मानवता की रक्षा हेतु ही अवतरित हुआ था। चन्द लोग किसी अवतार को केवल अपना बतायें, इससे बढ़कर अज्ञान क्या हो सकता है ? राम, कृष्ण, महावीर, नानक, ईसा, मुहम्मद साहब, परशुराम, गांधी, गौतम-ये किसके थे ? क्या किसी दल विशेष के थे ? कैसा मूर्खतापूर्ण प्रश्न है ? येसब के थे। आज भी इनके आदर्श सबके लिये अनुकरणीय हैं। हृदय इन सभी को एक समान श्रद्धा से नमन करता है।

जब धर्म, सम्प्रदाय बन जाता है तो महान पुरुषों का सब किया-कराया व्यर्थ होने लगता है। और भी निन्दनीय व घृणित अवस्था वह होती है जब धर्म का नाम ले लेकर लोग हिंसा पर उतारू हो जाते हैं। इससे तो पैगम्बर का अवतरण ही निरर्थक हो जायेगा। लड़ो-दुर्गुणों से; लड़ो-बेईमानी से, हिंसा से, चरित्रहीनता से और अनैतिकता से, टकराओ-देशद्रोह से, फूट से, दुर्बुद्धि से, अलगाववादी नीति से तथा आतंकवाद से। इनसे संघर्ष करो एवं इनको पराजित करो। मानव मानव से क्यों लड़ें ? किस धर्म के पैगम्बर ने कहा है ?

श्री गुरुनानक देव जी कम टकराये थे क्या ? उन्होंने कम संघर्ष किया था क्या ? किन्तु किससे ? श्री गुरु महाराज टकराये थे अन्ध-विश्वासों से, कुरीतियों से, बुराईयों से, आडम्बरों से। उनके पास सत्य का अपार बल था। मानवता के प्रति अपार शुभ-कामना थी। जीव मात्र के प्रति अपार प्रेम एवं करुणा थी। जहाँ

जाते, मानों प्रकाश हो जाता । अँधेरा भाग खड़ा होता । सारे संसार में पैदल ही घूमते रहे । जहाँ गये, उसी की भाषा में बोले । उसके हृदय को जीता । तन को जीतना कोई स्थायी जीत नही होती । जीत तो मन की होती है । तर्क भी किया, शास्त्रार्थ भी किया और स्नेह भी दिया । चमत्कार भी दिखाये । परम सिद्ध अवतार पुरुष थे, अतः सिद्धियां भी थीं उनके पास । किन्तु शक्ति का दुरुपयोग कही नही किया । सबके साथ एक सा व्यवहार किया । सबको समान समझा । भेदभाव तो उनकी दृष्टि में था ही नही । हाँ–जहाँ बुराई देखी, वहीं प्रहार किया । सड़े-गले अंग को काटने में थोड़ा भी संकोच नहीं किया । किसी को दुःख हो तो हो, विषाक्त अंग तो काटना ही होगा । यदि शरीर पर कोई जहरीला फोड़ा हो जावे तो उसे तो काटना ही होगा । वही किया श्री गुरुनानक देव जी ने ।

महान पुरुष के अनुयायी भी लाखों करोड़ों लोग बन जाते है । प्रेरणा लेते है । महान आदर्शो को अपनाते है । यहाँ तक तो पूर्ण उचित बात है। स्वाभाविक है । किन्तु जब किसी भी महान अवतार के अनुयायी सकीर्ण सीमाओं मे बन्द होकर मानवता के विराट प्रांगण के टुकड़े करने लगते है तो वे उस महान अवतरण को निरर्थक करने पर उतारू हो जाते हैं । यहीं से त्रुटि का प्रारम्भ हो जाता है । महान अवतार तो मानव मानव के बीच प्रेम, सदाशयता मैत्री तथा शुभाचरण पैदा करने आते है वे तो जोड़ने आते हैं, तोड़ने नही । यदि उनके अनुयायी कहला कर भी कोई हिंसा में लिप्त हों, देश को तोड़ने का प्रयास करें या मानव मानव के बीच घृणा और आक्रोश पैदा करें तो उस अवतार पुरुष की महान आत्मा कितनी व्यथित होती होगी ? वह कैसे क्षमा कर सकेगी ऐसे क्रूर पापियों को ?

महान अवतार श्री गुरुनानक ने धर्म को निर्मल बनाया था।

एक ऐसा पंथ चलाया जिसमें भेदभाव नहीं हो सकता। गुरुद्वारे में सभी का सच्चे हृदय से स्वागत है। जो श्री गुरु महाराज के महान आदर्शों का अनुयायी हो-वही सच्चा सिक्ख है। वह किसी भी जाति का हो सकता है, किसी भी प्रान्त या क्षेत्र का हो सकता है। सच्चा सिक्ख सच्चा देश भक्त होता है। श्री गुरु महाराजों ने बड़े-बड़े बलिदान करके धर्म को बचाया। उन्होंने बड़ी विकराल दुर्दम शक्तियों से संघर्ष कर संस्कृति की रक्षा की। देश का बच्चा बच्चा जानता है सिक्ख वीरों के बलिदान को। सिक्ख और हिन्दुओं में भेद कैसा? वे तो सगे भाई हैं। सिक्खों का उद्‌भव श्री रामचन्द्र जी के पुत्र लव-कुश से है। ये सूर्यवंशी क्षत्रिय हैं। गुरुजी के शिष्य होने के कारण ही ये सिक्ख कहलाते हैं। "खालसा" शब्द का तात्पर्य "शुद्ध" से है। जो अपने आचरण से शुद्ध है वह खालसा है। फिर हिन्दू व सिक्ख पृथक कैसे हो सकते हैं?

श्री गुरुनानक देव जी साक्षात सूर्य थे। उनको दीपक दिखाने का साहस किया गया है। यह श्रद्धा के वशीभूत होकर किया गया दुस्साहस ही है, अथवा बालचापल्य भी माना जा सकता है। श्री गुरुजी के जीवन पर अनेकानेक महाकाव्य लिखे जा सकते है। यह तो मात्र एक श्रद्धा सुमन है, उनके श्रीचरणों में। यह मात्र एक रंक वराटिका है स्वर्णकोष की देहली पर।

अभिलाषा यही है कि देशवासी श्री गुरुनानक देव जी के महान चरित्र एवं गुणों से सत्प्रेरणा लें। जिस पुनीत भारत माता के नानक जैसे सुपुत्र हो चुके हैं, उसकी संतति अपने उत्तरदायित्व को समझे तथा अपनी भारत माता के वक्ष में घ व न करे। जिस वक्ष का दुग्ध श्री राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, नानक, गोविन्दसिंह, जैसे महान पुत्रों ने पिया, उस वक्ष को यदि हम लहूलुहान बनायेंगे तो

हमको परमात्मा भी क्षमा नहीं करेंगे। अपनी भारत माता अमर रहे, अपना तिरंगा सदैव मुक्त गगन में लहराता रहे तथा हम सब हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी, बौद्ध, जैन, आदि सगे भाई बहिन के रूप में इसके रक्षक बनकर इसे पुन: विश्व गुरु एवं सोने की चिड़िया बनादें — तभी हमारा जन्म लेना सार्थक होगा।

☐



हिन्दू–सिक्ख पृथकता समझें, वे भारी अज्ञानी है ।
रघुवंशी श्री रामसुवन, लवकुश के वंशज मानो है ।।
ये हिन्दुत्व आन के रक्षक, गरिमामय बलिदान कर ।
शीश कटाया, नहीं झुकाया, सत्य–सुधा का पान कर ।।



आओ लव-कुश की संतानो ! रामकृष्ण के बच्चे आओ !
त्रुटियों को कर क्षमा, प्रेम से, बंधु-बंधु को गले लगाओ ॥
दुष्टजनों के षड्यन्त्रों के, सारे भेद खोल दो रे ।
प्राणों में अमृत घुल जावे, ऐसे वचन बोल दो रे ॥

अटल सत्य

हिन्दू सिक्ख सगे भाई है, इनका नाता खून का ।
देश और वासी का नाता, उपवन और प्रसून का ।।
राष्ट्र एक उद्यान, और हम इसकी कलियां—फूल हैं ।
अपना उपवन रहे महकता, इष्टदेव अनुकूल हैं ।।

रहे एकता, राष्ट्र अमर हो, चढ़े प्रगति के नव सोपान।
जागा सदियों की निद्रा से, भारत दिन-दिन बने महान।।
जय हो, जय हो, भारत माँ की, अमर तिरंगे की जय हो।
दानवता का महानाश हो, मानवता की अमर विजय हो।।

सर्ग विधान

पूर्व पीठिका

(१) ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभंगुर प्रसादि

बिन सतगुरु के भटक रहे थे, अंधकार में जग के प्राणी।
लड़ते मरते कोलाहल में, लुप्त हुई थी सत् की वाणी।।
पाप रहा था फैल जगत में, लोप हुआ शुभ धर्म का।
भूले थे आदर्श सभी ने, पतन हुआ था कर्म का।।

बिना दया के धर्म म्लान था, नरक-गर्त्त में गिरता था।
एक पैर पर खड़ा हुआ था, पाप-पुंज सिर घिरता था।।
बिन सतगुरु के कोई उसको, नहीं सहारा दे सकता।
दिव्य पुरुष अवतार धरे तब, सत्य-नाव को खे सकता।।

धर्म-वृषभ अति चीख रहा था, धरती के नीचे व्याकुल।
सत्य-दया की नौका डगमग, जीवजन्तु थे सब आकुल।।
सुनी पुकार ब्रह्म ने, अतिशय करुणा उर में धारे थे।
जगती के उद्धार हेतु, गुरु नानक स्वयं पधारे थे।।

सत्य, दया, तप, दान, धर्म के चार चरण थापे जग में।
नाम, दान, स्नान, ज्ञान के कुसुम विकीर्ण किये मग में।।
घृणा-द्वेष को दूर किया औ ऊँच नीच का भेद हिला।
प्रकटे गुरु महाराज, जगत को प्रेम-दया का पाठ मिला।

मंगलाचरण

हे प्रथम पूज्य भगवान ! विश्व के परम विधाता !
हे अनादि ! अक्षय ! अविनाशी ! पालक त्राता !!
करो अनुग्रह नाथ ! माथ झुकता पग-तल में ।
कृपा कोर से कोप--मनीषा खुलते पल में ।।

विविध रूप धर युग युग में धरती पर आते ।
दुष्ट-दलन कर, भक्तजनों के प्राण बचाते ।।
तुम ही ब्रह्मा, विष्णु, सदाशिव, तुम ही रामकृष्ण बनते ।
तुम ही अल्ला, तुम ही ईसा, भव-वितान तुमसे तनते ।।

महावीर बनकर तुम आये, तुम ही जिनवर बुद्ध कहाये ।
तुम ही भक्त जनों के हित में, गुरु साहब नानक बन आये ।।
जब जब भीर पड़ी भक्तों पर, जब जब धर्म-संहार हुआ ।
तब तब रक्षा करने जग की, परम ब्रह्म-अवतार हुआ ।।

पाप-पुंज जब बढते जाते, वसुधा धेनु-रूप धरती ।
तृण धारण कर निज आनन में, नयनों में आँसू भरती ।।
करुणा भरी पुकार मचाती, ब्रह्मलोक को जाती है ।
प्रभु के आगे माथ झुका कर, अपना कष्ट सुनाती है ।।

धर्म-वृषभ क्रन्दन करता है, प्रभु तक रुदन पहुँचता है ।
निद्रा होती भंग ब्रह्म की, दिव्यासन भी कँपता है ।।
इधर-उधर प्रभु दृष्टि डालते, देवदूत घिरते पल में ।
सुरगण आते माथ झुकाये, कंपन होता नभ-जल में ।।

प्रभु कहते 'हे धरती ! बोलो, क्या धीरज अब टूट गया ?
बोलो धर्म-वृषभ ! क्या भू पर पुण्य-सहारा छूट गया ?
बोले सभी देवता प्रभु से, "अन्तर्यामी है प्रभु आप !
किस कारण से जग के प्राणी भोग रहे है कटु अभिशाप ?

हे अग-जग के नाथ ! आपके सिवा जानता कारण कौन ?"
यह कह सबने शीश झुकाया, धारण किया करुणतम मौन ।।
तभी दिव्य-वाणी नभ गूंजी, नारायण ! हे नारायण !!
सबने देखा नारद आये, भरने को जगती का व्रण ।।

बोले "जय जयकार करो सब, पाहि माम् ! हे त्राहि माम् !!
प्रभु की कृपा कोर से जग के सभी बनेंगे बिगड़े काम ।।
मत घबड़ाओ धरती माता ! धर्म प्रकंपित क्यों होते ?
प्रभु लेंगे अवतार शीघ्र ही, हँस जायेंगे सब रोते ।।

प्रभु का सिंहासन लहराया, पल में दृश्य विलुप्त हुआ ।
देवों को चिर दयासिन्धु का, कोई इंगित गुप्त हुआ ।।
मंद मंद मारुत का शीतल एक प्रवाह उमंगित था ।
क्षीरधि के मानस से मोहन अतुलित ज्वार तरंगित था ।।

एक सितारा नभ में चमका, भारी ओज उजास हुआ ।
नभ से धरा ओर द्रुत गति से, आया, यह आभास हुआ ।।
दिव्य तेज का अंश स्वर्ग से धरती ओर बढ़ा आता ।
करने पुण्य स्पर्श नीर-निधि उसकी ओर चढ़ा जाता ।।

कवि का वंदन स्वीकारो हे महा दिव्यता के आगार !
दिया जन्म मानव-तन शुचितम, हृदय मानता है आभार ।।
प्रभु की कृपा कोर का इच्छुक, शत शत बार नमन करता ।
दिव्य-प्रभा-आलोक हृदय में, शाश्वत सरस तोष भरता ।।

हे राम ! हमारे पूज्य पूर्वज, सदा आपकी जय जय हो।
सीता के आदर्शों की इस निखिल सृष्टि में सदा विजय हो ।।
मर्यादा पुरुषोत्तम बनकर, जग को उच्चादर्श सिखाये।
तप की पावन ज्वाला में तप, जगती के तम–तोम हटाये ।।

धन्य जगत की पावन जननी, धन्य तुम्हारे दिव्य चरित्र।
नारी का बन गया जगत में, उज्ज्वलतम गरिमामय चित्र ।।
पुरुषों की जो भोग्या रहती, उसका पूज्य स्वरूप हुआ।
पतन गर्त से निकल स्वच्छ हो, उत्कर्षों का शिखर छुआ ।।

कवि का उर करता है शत शत, आदि काव्य स्रष्टा–वंदन।
जिसकी स्मृति के सौरभ से, कवि-तन काष्ठ बने चंदन ।।
तमसा स्रोतस्विनी धन्य है, प्रथम काव्य का नाद जगा।
धन्य तपस्या का तरुवर वह, अमृतमय फल जहाँ लगा ।।

वाल्मीकि के पावन आश्रम में माता को शरण मिली।
वंदन कवि करता उस थल का जहाँ स्वर्ग की कली खिली ।।
जाये सुवन- सुमन सम सुरभित सौरभ सरसा सब जग में।
कवि के कोटि नमन अर्पित हैं लव-कुश के पावन पग में ।।

जिनकी भावी संतति आगे चल कर ऐसी वीर बनी।
सिक्ख जाति की गौरव गाथा वसुधा पर सुवितान तनी ।।
वंदन करता उन गुरुओं का जिन से हिन्दू धर्म बचा।
सिक्खों ने बलिदान दिये औ' धर्म बचाने व्यूह रचा ।।

पावन वरदगिरा का वंदन, जिससे कवि को बुद्धि मिली।
हिंसा से मुरझाई कलिका, राष्ट्र–प्रेम–शुचि–सुधा खिली ।।
धन्य लेखनी जिसने पावन सतगुरु की महिमा गाई।
हिन्दू–सिक्ख एकता के हित विमल मनीषा सरसाई ।।

कवि की अभिलाषा इतनी है, प्रभु का हो भारी उपकार।
श्रेष्ठ बुद्धि का वर सब पावें, हल्का हो सबका उर-भार॥
जिस मानवता के विकास हित, कितने मन्वन्तर बीते।
उसकी हानि न होने पावे, लक्ष्य मिल सकें मन-चीते॥

गुरु नानक की अमृत वाणी, गूंजे जग के कण-कण में।
हिंसा-द्रोह त्याग कर मानव, प्रेमौषधि भर दें क्षण में॥
हिन्दू—मुस्लिम—सिक्ख—पारसी—ईसाई हिलमिल जीवें।
हिंसा का विष दूर हो सके, भ्रातृ-भाव-अमृत-पीवें॥

सभी देवताओं का वंदन, सभी देवियों का जयकार।
सब पैगम्बर सभी धर्म के, जिनका है भारी उपकार॥
सब की जय हो, मन्दिर-मस्जिद-गिरजाघर औ गुरुद्वारा।
एक ब्रह्म के ये निवास है, वही पिता सबका प्यारा॥

उसका तेज राम ने पाया, वही कृष्ण में दृप्त हुआ।
वही बना गुरु नानक जिससे जगती का उर तृप्त हुआ॥
जो बोले सो अभय, दिव्य ध्वनि, जय जय हे सत श्री अकाल।
सब गुरुओं की चरण वंदना से कट जावे माया-जाल॥

बुद्धि भ्रष्ट होगी कलियुग में, तब होगा नानक अवतार।
सद् शिक्षा देगा सब जग को, करे सभी का वह उद्धार॥
देश वासियों को नानक की, शपथ दिलाता कवि सौ बार।
राष्ट्र एकता अमर रखेंगे, तज दुर्भावों का व्यापार॥

□□

कलयुग आगमन

सर्व प्रथम सतगुरु नानक के, श्री चरणों का है वंदन।
जिनकी छवि के ध्यान मात्र से रजकण भी बनते चंदन।।
धन्य हुई यह सुभग लेखनी, श्री सतगुरु की कथा लिखी।
कवि को कलियुग के तम में भी सतयुग की शुभ छटा दिखी।।

'नानक' ध्वनि अति पुण्य प्रसूता, जो बोले सो अभय बने।
श्री सतगुरु का ध्यान करे जो उस पर धर्म-वितान तने।।
सिक्ख धर्म अति श्रेष्ठ धर्म है, सरल, सहज, अति आस्थावान।
सतगुरु ने जो विटप लगाया, उसके फल हैं सुधा समान।।

आडम्बर से मुक्त, नहीं है भेदभाव का भी बन्धन।
जो भी अमृत पान करेगा, उसका निर्मल हो जीवन।।
सबका स्वागत गुरु-द्वारे में, जाति-पाँति का भेद नहीं।
ढोंग और पाखण्डों के भी इस नौका में छेद नहीं।।

इसके अनुयायी बन जाते, सीधे सच्चे वीर महान।
देश-धर्म हित कर देते हैं, हँसते-हँसते जीवन दान।।
डरते नहीं किसी से भी वे, स्वाभिमान का अक्षय धन।
'गुरु ग्रन्थ साहिब' की वाणी बनती उसका शुभ जीवन।।

'वाहे गुरु' का मंत्र बोल कर हर बाधा को तर जाते।
अपने देश-धर्म-रक्षा-हित तन-मन अर्पण कर जाते।।
आगे से वे कभी न लड़ते, किन्तु उन्हें छेड़े कोई।
तो वे दबते नहीं किसी से, कभी न मर्यादा कोई।।

कलयुग में मानव-रक्षा हित, सतगुरु ने जो ज्ञान दिया।
उसी मार्ग पर चलते जाते, जिनने अमृत पान किया॥
कलयुग में जो पाप बढ़ा है, उसकी गहरी निर्झरणी।
गुरु की वाणी बन जाती है, उसमें उद्धारक तरणी॥

परमेश्वर ने काल चक्र में चार भाग निर्मित कीने।
पहला सतयुग कहलाता है, सत्‌चित्‌ आनंद कर दीने॥
त्रेता होता भाग दूसरा, यज्ञ धर्म से मोक्ष मिले।
द्वापर में है दान शीलता, धर्म-भाव की कली खिले॥

कलयुग चौथा काल सृष्टि का, निम्न कर्म बढ़ते जाते।
हिंसा, मत्सर, मोह, द्वेष के सघन पर्त्त चढ़ते जाते॥
आपापूर्ता, भोगलालसा, क्रोध-स्वार्थ-अन्याय घने।
उमड़ घुमड़ कर पावस घन से, मानस-नभ पर सघन तने॥

मर्यादा को भूल सभी नर, करते है कुकृत्य अनेक।
कर्तव्यों को विस्मृत करके, कूप-वारि के बनते भेक॥
भेदभाव बढ़ते जाते हैं, ऊँच नीच अरु छूआछूत।
मायावी जीवन जीते जन, जैसे हों सब प्रेत-भूत॥

झूँठ बोलना, धोखा देना, बन जाता ज्यों सहज स्वभाव।
गिर जाता है रहन सहन भी, गौरव-गरिमा का अभाव॥
नारी जो देवी होती है, गिरता उसका भी चरित्र।
गिरती जाती भावी संतति, लक्षण दिखते है विचित्र॥

ध्यान न रहता कर्म धर्म का, शूद्र कर्म बढ़ते जाते।
पतित जनो पर आँख मीचकर अंधे बन चढ़ते जाते॥
भ्रष्टाचार निरन्तर बढ़ता, नेता हो जाते है भ्रष्ट।
जनता उनके पीछे चलती, पाती है अनकहने कष्ट॥

जनक और जननी का भी तो मान नहीं करती संतान।
भावी संतति विकृत होती, बढ़ता है दुर्दम अभिमान।।
जो परिवार सम्मिलित रहते, उनमें बढ़ता जाता स्वार्थ।
दान, दया, आतिथ्य और मिट जाते हैं समुचित परमार्थ।।

कृत्रिम शिष्टाचार, कपट से पूर्ण और सतही होते।
उर होते संकीर्ण भाव घुट-घुट कर करुणा से रोते।।
जो कर्तव्य-भावना मानव-जीवन को सार्थक करती।
वह स्वार्थों की तीक्ष्ण चोट से मर्माहत होकर मरती।।

विद्या जो प्रकाश की दाता, घोर अविद्या से दबती।
क्रूरजनों के म्लान उरों में हिंसा की माया फबती।।
धर्म रसातल को जाता है, बढ़ता है अधर्म का ज्वार।
दीन दुखी हो त्रस्त ध्वस्त सहते हैं दुष्टों के प्रहार।।

अस्त व्यस्त मर्यादा होती मूल्य टूटते ही जाते।
पेय अपेय सभी कुछ पीते, भक्ष्य अभक्ष्य सभी खाते।।
कहते शब्द अनर्गल मुख से, म्लान आवरण हो जाता।
कथनी-करनी विकृत होती, लक्ष्य दृष्टि से खो जाता।।

धरती दबती पाप बोझ से, शक्ति उर्वरा होती नष्ट।
मुँदते जाते कोप प्रकृति के, बनी भयावह देती कष्ट।।
अनावृष्टि, अतिवृष्टि, रुग्णता, आते है दुर्भिक्ष अकाल।
त्राहि त्राहि मचती धरती पर, लहराते है दुर्गुण व्याल।।

अमृत बेले का महत्त्व जब घटने लगता है द्रुततम।
रजनीचर बढ़ते धरती पर, घटते सतोगुणी उद्यम।।
देर रात तक जगते प्राणी, देर सुबह तक निद्रा-मग्न।
उषा काल के मुख जो अमृत, उसकी महिमा होती भग्न।।

ऐसा जब कलिकाल भयावह नर को देता दानव रूप।
तृष्णा का सागर लहराता, भरता है अधर्म का कूप॥
नाम, दान, स्नान छूटते तमोगुणी बनती जलवायु।
स्वास्थ्य बिगड़ता, घटती जाती नर-नारी की औसत आयु॥

ऐसे विषम काल में गुरु की आवश्यकता होती है।
वाणी सुनने कर्ण तरसते, दृष्टि भंगिमा रोती है॥
गुरु नानक साहिब से लेकर गुरु गोविन्दसिंह अवतार।
विषम समय में मार्ग दिखाया, जन-जन मानेगा आभार॥

महाराज श्री गुरु नानक जी, प्रकटे बनकर अंगद देव।
ज्योति समाई ज्योति, गुरुजी बनकर आये अमर देव॥
लीन हुये वे ब्रह्म ज्योति में प्रकटे रामदास महाराज।
गुरु श्री अर्जुन देव बने वे लाये सत्य धर्म का राज॥

गुरु श्री हरगोविन्द साहिब जी, उनके ही अवतार हुये।
राह दिखाई सच्ची जग को, स्वर्ग लोक सोपान छुये॥
आये गुरु हरिराये साहिब, किया डूबतों का उद्धार।
ज्योति समाई ज्योति लिया फिर हरिकृष्ण साहिब अवतार॥

नवें गुरु श्री तेग बहादुर, किया धर्म हित सिर बलिदान।
गुरु गोविन्दसिंह में लय हो किया सत्य का अमृत पान।
दसवें गुरु महाराज धन्य हैं, झेले भारी अत्याचार।
गुरु ग्रन्थ साहिब को देकर गुरु गद्दी परलोक प्रसार॥

धन्य गुरु महाराज दसों ही धर्म हेतु अवतार लिये।
कष्ट झेल कर भारी सिर पर, अमृतमय उपदेश दिये॥
इन गुरुओं के बलिदानों को, जो भूलेगा वह गद्दार।
हिन्दू सिक्ख सगे भाई हैं, लड़ें भिड़ें तो है धिक्कार॥

कान खोल कर सुनो हिन्दुओ, कान खोल कर सिक्ख सुनो।
रामचन्द्र की सब संतानें, रक्त-एकता-ज्ञान गुनो।।
एक जनक है, एक मात है, सगे भैन भैया हम सब।
हिलमिल कर सब प्रेम करेंगे, गति सुधरेगी अपनी तब।।

गुरु नानक ने मार्ग दिखाया, आओ उस पर सभी चलें।
जो वर्फीले प्रस्तर अपने मार्ग अड़े है, आज गलें।।
दस गुरुओं की पावन वाणी, सुधा घोल दे कानों में।
अपनी नौका बढ़ती जावे भ्रमर और तूफानों में।।

हिन्दू सिक्ख प्रेम से बोलो, भारत माता की जय जय।
अमर तिरंगे की जय जय हो, जन गन मन की सदा विजय।।
जय नानक की जय कवीर की, यीशु मुहम्मद की जय हो।
राष्ट्र अखंडित रहे हमारा, गुरु वाणी की सदा विजय हो।।

□□

सर्ग–2

गुरु नानक अवतरण

धन्य धन्य वह पावन पट्टी, धन्य अलौकिक लेखनी।
कलम दवात धन्य वह स्याही, धन्य तेजमय हीरकनी॥
शत शत बार धन्य वह सतगुरु, जिसने लिखी अमर वाणी।
शीश नवाता अलख पुरुख को, वरद गिरा हो कल्याणी॥

षट सहस्र वर्षों के पहिले, मुनि–त्रिकाल दर्शी श्री व्यास।
अमृत वेले शून्य समाधि में मग्न कर रहे नव आभास॥
जगन्नाथ नगरी में उनकी स्मृति पहुँची दसवें द्वार।
भावी काल देखते जैसे रखे हथेली पर फल चार॥

चारों काल सामने आये, सबसे पहिले था सतयुग।
सत्यनारायण वासुदेव की भव्य प्रतिमा थी सम्मुख॥
हवन–सुरभि औ मन्त्रोच्चारण वेदपाठ औ शुद्ध विचार॥
सतोगुणी सब जीव–जन्तु थे, प्रेमपूर्ण सबका व्यवहार॥

था अकाल शुचि पुरुख उसी का सुखमय शासन था सब ओर।
सब नर–नारी सीधे सच्चे कोई नहीं था गुण्डा चोर॥
सत्य अहिंसा जीव दया औ' परोपकार सबका आदर।
थे निर्भीक, वीर, सत–ज्ञानी, केवल प्रभु का रखते डर॥

काल दूसरा त्रेता आया, नेत्रों के सम्मुख ज्यों चित्र।
राम–राज्य में प्रजा सुखी थी, शासक–शासित रहते मित्र॥
रावण जैसे दैत्य हुये जो साधु संत के थे भक्षक।
लेकिन उनका वध करने को राजा राम जगत रक्षक॥

काल तृतीय सामने आया द्वापर जिसका रहा नाम
बढ़े छद्‌म छल द्यूत-युद्ध औ' होने लगे सघन दुष्काम ।।
दुर्योधन की राजनीति में बढ़ी अनीति और अन्याय।
भरी सभा में द्रुपद सुता के चीर हरण का दुष्ट उपाय ।।

लेकिन राजा कृष्ण सदृश जो दानव-दल का करें विनाश ।।
करें न्याय का स्थापन अरु भक्त हृदय में पूरित आश ।।
गीता का उपदेश दिया जो जीवन को सार्थक कर दे।
कायरता को दूर हटाकर उर में शौर्य-दर्प भर दे ।।

काल चतुर्थ सामने आया, वह था कलियुग दुर्दम घोर।
लगे देखने व्यास दृश्य जो, मचा हुआ था भारी शोर ।।
छीना—झपटी, कपट—द्वन्द्व औ, भारी फैला भ्रष्टाचार।
धर्म—कर्म, मर्यादा खंडित, दूषित था सबका व्यवहार ।।

काँप उठे ऋषि वेद व्यास भी गया न देखा ऐसा दृश्य।
हरे हरे की ध्वनि मुख निःसृत अनुभव था अपूर्व विशिष्य ।।
मुनिवर जैमिनि को बतलाया अपना कटु अनुभव नूतन।
कलियुग की कर याद व्यास का पीड़ित-कंपित था तन-मन ।।

जैमिनि बोले "हे मुनि ! बोलो कैसे होगा सबका त्राण ?
भावी कष्ट आपने देखे, कैसे हो जग का कल्याण ?"
वेद व्यास फिर ध्यान मग्न थे विश्व बदर ज्यों थामे हाथ।
शिष्य प्रकंपित करें प्रतीक्षा हाथ जुड़े थे, अवनत माथ ।।

खुले नेत्र इन्दीवर ऋषि के अधरों पर नेहिल मुस्कान।
पहिले बोले मंत्र मांगलिक केन्द्रित था प्राची में ध्यान ।।
फिर बोले "हे शिष्य सुनो, जब कलियुग में होय घोर अनर्थ ।
पुरुख अकाल भेजते जग में अवतारे [illegible]

ईश्वरीय-वल लेकर आता पाप नष्ट करने की शक्ति।
म्लेच्छजनों से मुक्ति दिलाता पैदा करता धर्म-भक्ति ॥
इस कलियुग में आयेंगे गुरु नानक ईश्वर अवतारी।
धर्म बचायेंगे दुष्टों से शक्ति ज्ञान देंगे भारी ॥

वासुदेव नारायण स्वामी हुये सत्य युग के अवतार।
त्रेता में श्री रामचन्द्र ने किया भक्तजन का उद्धार ॥
द्वापर में श्री कृष्ण पधारे, कलियुग में गुरु नानक देव।
पाप अधर्म नष्ट होते हैं, विजयी होता सत्यमेव ॥

सुनकर वाणी वेदव्यास की शिष्य वर्ग में था उल्लास।
कलियुग का भय दूर हुआ श्री गुरुनानक-दर्शन की आश ॥
नारद ने वीणा ली कर में त्रिभुवन की हरनी थी पीर।
होगा नव अवतार ब्रह्म का गुरु-गरिमा में धीर गंभीर ॥

समय बीतता गया और कलियुग का रूप निकृष्टतर था।
पन्द्रह सौ छब्बीस विक्रमी सन् चौदह सौ उनहत्तर था ॥
कार्तिक की थी शुभ्र पूर्णिमा शीतल मन्द बयार चली।
अमृत वेले सुखद प्रहर में वसुधा को शुभ ज्योति मिली ॥

राए भोए की तलवंडी में रहते श्री कालूराय।
उनकी अर्द्धांगिनी तृप्ता जी, हर्षित थी उत्तम पति पाय ॥
जन्म हुआ तेजस्वी शिशु का शुभ लक्षण थे चारों ओर।
जीव-जन्तु ने कभी न भोगा इससे सुखमय मंगल भोर ॥

अर्द्ध रात्रि से एक घड़ी ऊपर का अनुपम काल था।
अनुराधा नक्षत्र परम शुभ, उदय हुआ शुचि बाल था ॥
सत्ताइसवा नक्षत्र सिद्ध चौरासी बावन औ नव नाथ।
चौसठ योगिनि भूत प्रेत औ, सुर-असुरों का नमित माथ ॥

दाई दौलता चकित हुई थी, प्रसव अनेकों करवाये।
लेकिन ऐसे अद्भुत लक्षण किसी बाल में कब पाये ?
हरदयालु पंडित भौंचक्के, ज्योतिष के अनुपम लक्षण।
बालक का ग्रह-चक्र अनूठा, नव इंगित मिलते क्षण-क्षण ॥

तरु-शाखों के नीड़ नीड़ में मृदु कलरव सुख देता था।
पाटल कुन्द कंज मृदु सौरभ, उर कंपित कर लेता था ॥
सुर बरसाते पुष्प गगन से, नारी गाती मंगल गीत।
लगता था ज्यों कलियुग पर अब सतयुग की ही होगी जीत ॥

सुर बरसाते सुमन, देवियाँ नभ में मंगल गाती थीं।
वाद्य वृन्द की सुभग मंडली मधुमय नाद बजाती थीं ॥
पूर्व दिशा से सूरज चमका स्वर्ण प्रीतिमा बिखरी थी।
सभी दिशायें स्वच्छ, धरित्री अनुपम होकर निखरी थी ॥

माता हुई निहाल सुवन के मुख-मंडल की छवि को हेर।
इतर नारियाँ पुलकित मन थीं, लगता था ज्यों शावक शेर ॥
धन्य हुए थे पिता श्री भी, मन में था अतुलित उत्साह।
यही चाह थी [illegible] बदले मानवता को राह ॥

परिवारी थे पुण्य पुरोहित पण्डित श्री गोपाल दास।
कालूराय ने उन्हें बुलाया झट पत्रा ले [illegible]
रीति नीति औ' शास्त्र मर्यादा जीवन नर का ज्योतिष [illegible]
देख पुरोहित ने बतलाया बालक था अद्भुत [illegible]

अवतारी के शुभ लक्षण थे, ब्रह्म तेज था आनन पर।
सुखद सुभग स्मित अधरों पर, सुरभित त्वक् सारे तन पर॥
ऐसी थी वह सुघर बनावट, निर्मित थी विधना कर से।
कल्प वृक्ष का सरस सुधोपम फल भू आया अम्बर से॥

ओम नाद था साँस साँस में, जिव्हा पर अंकित था ओम।
भ्रकुटि मध्य सहस्रारि चक्र था, सुभग काकली पर था सोम॥
इड़ा पिंगला ऊर्जस्वित थी, तेज फूटता बाहर था।
कुंडलिनी की सुभग चेतना, ऊर्ध्वमुखी अभ्यंतर था॥

मुग्ध पुरोधा लखि बालक को माना दिव्यज बालक था।
अमृत वेले के उद्‌भव से नामकरण शुभ नानक था॥
पंडित ने यह अर्थ बताया "ना" का अर्थ नाद होता।
प्रथम लहरती ध्वनि निसृत जो, सुधाधार का मधु सोता॥

वर्ण द्वितीय ह्रस्व अति कोमल, दुर्गुण पथ का है निषेध।
ब्रह्मकर्म हित अंकित "क" है, कलियुग का करने को भेध॥
उचित बात को जीवन भर यह सिंहनाद के साथ कहेगा।
कितना कोई लोभ दिखाये दुर्गुण पथ से दूर रहेगा॥

जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र ने रावन मारा।
जैसे यदुपति कृष्ण चन्द्र ने असुर कंस का तन संहारा॥
उसी भांति यह म्लेच्छ वंश पर विजयी हो शुभ कर्म करेगा।
नया धर्म का पंथ चलेगा, पाप हटाकर पुण्य भरेगा॥

"नानक" नाम ब्रह्मपर्यायी, दुर्गुण नाशक पुण्य-विधाता।
सतगुरु सत की वाणी बोले, पाप संहारक जग का त्राता॥
गुरु की वाणी जो सुन लेगा, उसका होगा सत्वर त्राण।
पंथ चलेगा, अभय रहेगा, सत श्री अकाल से जग-कल्याण॥

कुल-पंडित की बातें सुनकर सबके उर में था आनन्द।
दिव्य गुणों से अन्वित बालक, अत्याचार करेगा बन्द।।
जो थे कुटिल म्लेच्छ नर द्रोही, धर्म-विरोधी नर पामर।
उनका होगा नाश, धर्म-ध्वज फहरेगी सारी भू पर।।

हवा चली कुछ नई नई सी, पुष्पों का सौरभ नव था।
प्रात शाम द्विप्रहरी निशिभर (मारुत) का मृदु नवरव था।।
अधिक दुग्ध अब देतीं गायें, फसल लगी होने भरपूर।
उचित वृष्टि भी उचित समय पर हुये जलाशय जल से पूर।।

अनायास भय लगा शठों को, धर्म विरोधी मंद हुये।
अत्याचार भ्रष्ट कुत्सित सब कर्म अचानक बंद हुये।।
कभी कभी अज्ञात दिशा से, आती ध्वनि "सतगुरु की जय"।
वन के पक्षी जीव-जन्तु भी छोड़ रहे नैसर्गिक भय।।

देखे जाते नये दृश्य कुछ, कुछ अनुभव थे नये नये।
मोर सर्प बैठे संग संग थे, एक घाट मृग शेर गये।।
दूध शेरनी का मृगछौना, पीते थे संकोच बिना।
शावक-सिंह मृगी-शावक से पीते स्तन छिना छिना।।

शकुन हो रहे श्रेष्ठ श्रेष्ठतर, पनिहारिन गगरी जल भर।
आतीं गातीं गीत मधुरतम, कोंपल किसलय की मर मर।
झूले झूलें नारि नवेली, गामें मधुमय राग मल्हार।
रसमय बातें रस बरसाते, उर से उर का बढ़ता प्यार।।

चोर-उचक्के, लुच्चे-गुंडे, पापी अपराधी भयभीत।
जब से शिशु अवतारी जनमा, होने लगी न्याय की जीत।।
अन्यायी अब स्वतः काँपते, रुके अनैतिक कुत्सित कर्म।
देव देवियाँ स्वर्ग सुखी थे, उनको ज्ञात [illegible] यह मर्म।।

धन्य भूमि के भाग्य पुरस्स अवतारी आया वन कृपालु।
अघ का घट भंजन करने को प्रकटे स्वामी परम दयालु॥
मानवता की विजय हेतु अब नव इतिहास लिखा जाये।
स्वर्णिम पृष्ठ अंक हीरक मे लिखा जाय "सतगुरु आये"॥

विश्व-गुरु सतगुरु नानक की जय बोलो सब सौ सौ बार।
दस गुरुओं को माथ टिकाओ उनका हो शत जय जयकार॥
सिक्ख धर्म की जय बोलो औ वाह गुरु की फतह कहो।
वाह गुरु का कहो खालसा, पंथ धर्म में सदा रहो॥

भगवान मेरे देश की दुष्पाप से रक्षा करें।
गुरुदेव बालक रूप में शुभ धर्म लीलायें करें॥
निशि दिन करे यह नव प्रगति औ धर्म की रक्षा करे।
इसके लिए हर जन जिये औ अंत इसको ही मरे॥

सर्ग–3

बाल–लीलायें

आदि विधाता ब्रह्मा की जय, पालन कर्ता विष्णु महान।
सबका हित करने वाले शिव शंकर दें रक्षा का दान॥
सब अवतारों की जय जय हो, सबका है कवि उर में ध्यान।
सभी धर्म के पैगम्बर, जग को देते हैं स्वर्ण विहान॥

ईश मनुज तन धारण करते, नर लीला हित आते हैं।
स्वर्ग लोक को ही जग हित में वसुधा पर ले आते हैं।
उच्चादर्शों के हित जीते, कष्ट उठाते हैं भारी।
त्याग, तपस्या, सत्य, धर्म से अर्जित शक्ति सुधा न्यारी॥

बालक रूप ईश–पर्यायी, होता स्वर्गधरा का जीव।
स्वार्थ, कपट, दुर्गुण के जग से दूर, दिव्यता ज्यों संजीव॥
बाल रूप भगवान जहाँ पर करते नित क्रीड़ा विस्तार।
वह थल स्वर्गोपम बन जाता कृत्य कृत्य होता संसार॥

धन्य भाग्य भारत की भू के, यही रहा लीला का धाम।
सब अवतारों के शुचि दर्शन, इसी भूमि पर हुये ललाम॥
राम, कृष्ण की जन्मस्थली और प्रकटे यहीं बुद्ध, महावीर।
नानक जैसे दिव्य संत ने इसी धरा पर धरा शरीर॥

प्रभु की बाल रूप लीला का यह आनन्द अन्यत्र कहाँ।
भारत ऐसी भूमि रीझते ईश्वर के अवतार जहाँ॥
कलियुग के अवतारी नानक, रीझे इसी पुण्य भू पर।
धन्य हुई माता तृप्ता जी, दिव्य पुरुष को दूध पिलाकर॥

जैसे चन्द्रकला बढ़ती है, तृप्ता का सुकुमार बढ़ा।
शैशव में ही अद्भुत लक्षण, दिव्य शिखर सोपान-चढ़ा॥
सुन्दर मुख इन्दीवर लोचन, चारों ओर प्रकाश किरण।
सांसों से सौरभ विस्फारित, ओंकार की ध्वनि क्षण क्षण॥

साधारण बालक ज्यों रोता, कभी न रोया यह सुकुमार।
स्वर्ग लोक की ओर झाकता, दिव्य शक्ति का था अवतार॥
बिना दीप के रहा उजाला, बिना पुष्प के सुरभि घनी।
मानो मणिमय ऊर्द्ध शिखर पर, कल्प लता सुखसार तनी॥

किंवा रत्न राशि उज्ज्वल घन, पाटल पद्म प्रसून खिले।
हवन शिखा की पुंज प्रीतिमा को आहुति शुभ गंध मिले॥
या कि सलिल के वडवानल से नीरज सुमन सुगंध मिली।
उदयाचल की प्रथम रश्मि से मिलकर-चंपक कली खिली॥

कैसी थी वह तेज राशि जो अध तम को पल में हरले।
सभी उदात्त गुणों का अम्बुधि मानस गागर में भरले॥
साँस साँस में सुरभि अनूठी किलकारी में कलरव था।
चितवन में ब्रह्मत्व-छटा सी, मानों इंगित नीरव था॥

कभी पालने में शिशु मुख से ऐसी ज्योति फूटती थी।
उदयाचल में सूर्य प्रभा से मानों क्षपा टूटती थी॥
माता गाती कभी लोरिया मीलित दृग शिशु के होते।
श्याम जलज के युगल पटल में अलि के दो शावक सोते॥

तृप्ता माता लोरी गाती।
स्वर्ण पालना रेशम डोरी, धीरे धीरे लाल झुलाती।
आ री निंदिया ! सुला लाल को, क्यों नहीं जल्दी आती॥
देखो पलक कल्प पादप पर, तन्द्रिलता कल लता सुहाती॥

आओ परियां ! दिव्य देवियां ! नवल अप्सराओ आओ ।
मैं झोटे देती मुख पाती, मधुर मधुर गाने तुम गाओ ।।

आओ वन की सुभग देवियो ! जल परियो ! तुम भी आना ।
मेरी आंखों के तारे को मधुर स्वप्न निधियां लाना ।।
युग युग जिये नाथ की थाती, जगती का शुभ त्राण करे ।
हो सार्थक मातृत्व तभी जब जीवमात्र-कल्याण करे ।।

जगत-गुरु बढ़ता जैसे चन्द्र कला ।

फिसल पालने से घर-ऊपर, मां भागी, त भागसु चला ।।
घुटरुन चलता सरपट भागा, मुड़ मुड़कर पीछे झांके ।
माता चकित, भ्रमित सब सखियां, शिशु के कौतुक प्रति यांके ।।

देहली लांघ चौक उल्लंघित, अरी देख वह खड़ा हुआ ।
प्रस्तर शिला विशाल सामने, उसे हटाने अड़ा हुआ ।।
गजब हो गया सखियां देखो, शिला हिली उस ओर हटी ।
दांत तले अंगुली दे देखें, आंखें सबकी फटी फटी ।।

अरी मां । बालक अवतारी ।
इसकी क्रीड़ा, कौतुक इसके, असामान्य विस्मयकारी ।।
जिधर देखता पुष्प बरसते, हँसता तो मोती झरते ।
आतप तन से असम्प्रवत सा बादल छाया सी करते ।।
लगता है जैसे कुछ देवी और देव तन सूक्ष्म धरे ।
हर क्षण इसकी सेवा करते, उर में हर्षोल्लास भरे ।।

अभी आयु का अति छोटा है, पर मानों प्रतिभा का कोष ।
जीव मात्र प्रति दया दिखाता, कभी किसी पर रच न रोष ।।
कभी कभी दुख देख अन्य के, आंखें गीली हो जातीं ।
मानो दुख को दूर भगाने हेतु सोच में खो जातीं ।।

बड़ी बहिन थी सुभग नानकी, रखती थी अद्वितीय प्यार।
राजा भैया को गोदी ले देती उसको खूब दुलार॥
ले जाती थी उसे खिलाने तलवंडी के इधर उधर।
अद्भुत बालक ध्यान मग्न हो जाता दृश्यों में लखकर॥

ऐसे ऐसे प्रश्न पूछता बहिन चकित हो जाती थी।
शुचि समाधि में शिशु नानक की चेतनता खो जाती थी॥
कभी कभी वह कहता 'जीजी! जीव मात्र हैं एक समान।
भेदभाव है व्यर्थ सभी का उचित एक सा ही सम्मान॥

सब ही सब से प्यार करें तो सबका ही होगा कल्याण।
हर जन का कर्तव्य यही है करे सभी का सक्षम त्राण॥
धर्म बड़ा होता है सबसे, इसकी रक्षा है कर्तव्य।
इसके लिए प्राण भी दे दो, यही मान्यता सबसे भव्य॥

छोटा बालक बड़ विषय की जब व्याख्या करता गंभीर।
बहिन नानकी पुलकित होती कितना ज्ञानी मेरा वीर॥
ऐसा था आकर्षण उसमें अनगिन बालक घिर आते।
खेल खिलाता आध्यात्मिक वह जिनमें वे अनुभव पाते॥

बार बार वह एक बात को दोहराता बल दे देकर।
म्लेच्छों से निज धर्म बचाना, चाहे तन मन धन देकर॥
धर्म हेतु ही जो नर पुंगव, मिट जाते हर्षित होकर।
वे ही सब कुछ पा लेते हैं, अपने सब कुछ को खोकर॥

धर्म बड़ा होता प्राणों से, तीनों लोकों के शासन से।
धर्म विरोधी नष्ट करेंगे, पूरी निष्ठा, पूरे मन से॥
कभी न झुकना धर्म क्षेत्र में, दूषित मत होने दो इसको।
उसका जीवन राख-सदृश्य है, धर्म नहीं प्यारा जिसको॥

निन्दा करना महापाप है कभी किसी के धर्म की।
व्यक्ति स्वयं मर्यादा रक्खे, अपने समुचित कर्म की ।।
सच्चा धर्म वही होता है, जिसमें अमृत पान मिले।
सभी बराबर माने जावें, सबके उर की कली खिले ।।

गुरु साक्षात ब्रह्म होता है, उसका पंथ सही पथ है।
गुरुद्वारे में सहजभाव से होता इनका शुभ अर्थ है ।।
"सति करतार" जाप करना है जीवन नौका की पतवार।
श्री सतगुरु को ध्यान करोगे हो जाओगे भव से पार ।।

इसी प्रकार रोज वह बालक देता ज्ञान भरे उपदेश।
आयु बहुत छोटी थी लेकिन नाप लिया था ज्ञान देश ।।
कालूराय चकित थे इससे पटवारी का करते काम।
सति करतार जाप करते थे, कभी न लेते खोटा दाम ।।

तलवंडी के राजा तक भी पहुँची चर्चा बाल की।
लगी फैलने यश की गाथा माँ तृप्ता के लाल की ।।
शेख जिला प्रसिद्ध हुआ ननकाना साहिब तीर्थ थली।
जिसने दर्शन किये बाल के मनोकामना खूब फली ।।

धन्य वह बालक जो ब्रह्म अवतार हुआ,
घन्य वह भूमि जन्म भूमि पद पा गई।
धन्य माता तृप्ता अरु जनक कल्याण राय,
पुत्र की सुगंध सारी जगती में छा गई ।।
धन्य बाल लीला अरु धन्य उपदेश दिव्य,
विश्व धर्म हेतु दिव्य शुक्ति धरा आ गई।
धन्य भाग्य कवि तेरी लेखनी भी धन्य हुई,
नानक से सत की सुकथा मन भा गई ।।

□

सर्ग–4

शिक्षा दीक्षा

धन्य हैं सत–जनों के चरण, जगत को देते हैं चिर त्राण।
धन्य है सतगुरु वाणी अमर, जीव का जो करती कल्याण॥
धन्य वे माता पिता महान, जिन्होंने ऐसे जाये लाल।
धन्य है ऐसा शुचि बलिदान रखा है ऊँचा सबका भाल॥

धन्य वे सतगुरु नानक देव, चलाया सिक्ख धर्म अति भव्य।
पंथ की शरण गये जो लोग, हुये वे अभय किये कर्तव्य॥
धन्य सब गुरु, उनके उपदेश, धन्य है धर्म हेतु बलिदान।
हुआ कवि–उर श्रद्धा से युक्त, धन्य है अपना देश महान॥

हुये नर से नारायण सत, बने वे ईश्वर के अवतार।
तपस्या करनी पड़ी अनंत, भूमि का हरने को अघ–भार॥
रही यह लीला भूमि महान, साधना के अतुलित उत्कर्ष।
सिद्धियाँ और सुनिधियाँ प्राप्त, स्वर्ग से किये विचार विमर्श॥

हुये कलियुग अवतारी देव, लगे बढ़ने ज्यों चन्द्र अमंद।
ज्ञान का अम्बुधि गहन अनन्त, दिव्यता के उद्वेलित छंद॥
धरा पर दिखने लगा सुकाल, लगा ज्यों होगा जग–कल्याण।
धर्म में जीवन लक्षण प्रकट, अभी तक जो लागत म्रियमाण॥

हुई थी सात वर्ष को आयु, निभाते थे जीवन के धर्म।
लोक—गुरु के गृह को प्रस्थान, पूर्ण करने विद्या के कर्म॥
एक पाण्डे जी गोपाल दास, चलाते तलवंडो चटसाल।
कराते श्रम मे विद्याभ्यास, पहुँचते थे पढ़ने बहु बाल॥

माघ शीर्ष तिथि शुभ पचम थी, उदित रोहिणी कल नक्षत्र ।
वृहस्पति वार जोगिनी दाँये, शकुन मांगलिक यत्र तत्र ।।
पटवारी जी निज प्रिय सुत की, विद्या का लेने शुभ दान ।
गुरु–गृह–प्रेषण को तत्पर थे, वरद गिरा का पूजन ध्यान ।।

बाल नानक ब्रह्मचारी रूप, गये श्री पाण्डे की चटसाल ।
निभाये लौकिक रीति रिवाज, किया विद्या अर्जन तत्काल ।
कहा शिक्षक ने बोलो "ओउम" बाल नानक बोले 'गुरुदेव' ।
बताओ पहिले इसका अर्थ, याद रक्खें हम जिसे सदैव ।।

चकित थे, पांधे एकाएक, जानते नहीं "ओउम" का अर्थ ।
बिना जाने ही उसका सार, बोलना बुलवाना है व्यर्थ ।।
कहा होकर अत्यन्त विनम्र, डाल दो तुम ही तात 'प्रकाश' ।
बाल नानक के चारों ओर, दिखाई दिया अपूर्व उजास ।।

सात वर्षों का बालक दिव्य, लगा समझाने गुरु को ज्ञान ।
"ओउम" की व्याख्या करी अनूप, कराया सत अमृत का पान ।।
धर्म का बीज "ओउम" का नाद, धर्म से रक्षित है संसार ।
"दीखता जाल मोह् मस मस्स, करो मति के कागद पर सार" ।।

"ओउम" है प्रथम नाद निस्पृत, धर्म आस्था का परम प्रतीक ।
खोलकर ब्रह्म रन्ध्र के द्वार, बनाती उर्द्ध लोक तक लीक ।।
जागती कुंडलिनी अविलम्ब, चक्र से करती अमृत पान ।
सुनाई देता अनहद नाद, मोक्ष का मिलता है अवदान ।।

"ओउम" कहने से होती अर्द्ध, श्वास की गति अमृत के कोष ।
प्राणमय परिष्करण उत्ताल, त्वरित मिट जाते सारे दोष ।।
"ओउम" की ध्वनि से होता शुद्ध, जगत का पर्यावरण अशेष ।
इसी मे रहता सदा निवास, [illegible] ब्रह्मा, विष्णु, महेश ।।

सुना पाण्डे ने अद्भुत ज्ञान, चकित था रहा देखता मौन।
भला शैशव में प्रभु के सिवा बता सकता ये बातें कौन ?
भरा था ज्ञान, प्रेम, वैराग्य, दमकता था चेहरे पर तेज।
बहुरिया आत्मा कर तादात्म्य, पौढ़ती अहा पिया की सेज ॥

शिष्य अब गुरु का भी गुरु बना, तना था श्रद्धा भक्ति वितान।
खुले थे अन्तर्वर्ती चक्षु, बन गया उनका सिक्ख महान ॥
ज्ञान की सीमा नहीं, अनन्त, जन्म के जुड़ते हैं संस्कार।
पुण्य, तप, सद्गुण, शुभ आचार, बताते ईश्वर का अवतार ॥

एक दिन बैठे थे शिशु घिरे, अर्थ करते गीता का नव्य।
उधर ही आये कालूराम चकित थे देख दृश्य वह भव्य ॥
पूछ बैठे क्या करते लाल ? कहा गीता के सप्त श्लोक।
बताता हूँ इनका ही अर्थ, हरण करना है सबका शोक ॥

सुनो हे पूज्य पिता ! श्रीकृष्ण, सिखाया जो अर्जुन को ज्ञान।
वही है जीवन का शुचि सत्य, मिटाता जीवन का अज्ञान ॥
एक ओंकार वेद का प्रथम, नाद है अलख पुरुष का नाम।
गायेगा श्रद्धा भक्ति समेत, पायेगा अलख निरंजन धाम ॥

फारसी पढने नानक देव, बनाने लौकिक विद्या पीन।
बिठाये काजी की चटसाल, नाम था उसका कुतुबुद्दीन ॥
कहा काजी ने बोलो "अलफ", कहा नानक ने "क्या है अर्थ ?
बिना समझे करते उपयोग, इसी से होता महा अनर्थ" ॥

नहीं सोची काजी ने कभी अर्थ की मर्म भरी यह बात।
रहा भौचक्का एकाएक, उसे भी अर्थ नहीं था ज्ञात ॥
कहा 'बालक हे ! मुझको नहीं तनिक भी इसका अब तक ज्ञान'।
बताओ तुम्हीं "अलफ" का अर्थ, दूर कर दो मेरा अज्ञान ॥

आयु भी नानक की अति अल्प, किन्तु वे सौ जन्मो के संत।
धर्म, तप, पुण्य, मनन, शुभ कर्म, ज्ञान, वैराग्य असीम अनंत।
बने थे ईश्वर-रूप अपार, दीखते तीनों लोक त्रिकाल।
जानते सब संस्मृति का चक्र, सुचारी थे सत् श्री अकाल ।।

फारसी में ही बोले देव, चकित थे काजी कुतुबुद्दीन।
ज्ञान के अम्बुधि मध्य अबाध, तैरती तीव्र बुद्धि की मीन ।।
कहा "यक अरज गुफत जो पेश, मला दर गोश कुन करतार।
अलफ का अर्थ गहन गंभीर, बताता सृष्टि-चक्र व्यापार ।।

सृष्टि-रचना का मूल रहस्य, अनामी को मिलता है नाम।
निर्गुणी होता गुण से युक्त, अकामी से जुड़ जाता काम ।।
दीखने लगता, जो अदृष्ट, अलौकिक लेता लौकिक रूप।
नित्य अविनाशी अज अविराम, प्रकट होता है धारि स्वरूप ।।

सुप्त ज्यों मारुत हीन तरंग, जागता जैसे जल का ज्वार।
हवा से हिलते निश्चल पात, गगन में छाते जलद अपार ।।
बुल बुले उठते जल के बीच, धारते भाँति भाँति के रूप।
अग्नि रहती प्रस्तर में सुप्त, घर्षणा देती उसे स्वरूप ।।

तत्व की शक्ति बीज में सुप्त, अंकुरित होती सृष्टि प्रमाण।
प्रकृति की जड़ता बने सचेष्ट, पुष्प में सुरभि, पिंड में प्राण ।।
रक्त आमिष मज्जा से दुग्ध, नयन की अग्नि सलिल की धार।
तप्तता लाती मेघ वितान, धरित्री का उर्वर आधार ।।

अरूपी तत्व एक जड़ रूप, प्रकट हो जाते रूप अनेक।
पुरुष से होती प्रकृति अभिन्न, ब्रह्म से माया एकम एक ।।
तूलिका से ज्वाला के जाल, चूलिका से है सृष्टि विधान।
"अलफ" वह मूल शक्ति का बीज, ज्ञानघर्षण से विधि-संधान ।।

हुये काजी के दा दृग बंद, श्रद्धा से सहज झुक गया माथ।
खुले दोनों अन्तर के चक्षु, किया अनुभव हो गया सनाथ ।।
भाव से सजदा किया विनम्र, पिता से कहा ईश-अवतार।
नही है साधारण यह बाल, झुकेगा इसको सब संसार ।।

पढ़ाये भला इसे क्यों कौन, पढ़ायेगा यह सब ब्रह्माण्ड।
ज्ञान विद्या गुण अम्बुधि रूप, अभी से ऐसा प्रखर प्रकाण्ड ।।
धन्य है तृप्ता जैसी मात, धन्य है जन्मद कालूराय।
धन्य ननकाणा साहिब धरा, नहीं अब रहा जगत असहाय ।।

धर्म की रक्षा होगी नित्य, अधर्मी का होगा अवसान।
जियेंगे स्वाभिमान के साथ, सभी नर नारी वृद्ध जवान ।।
भगेगा भेदभाव का भूत, सभी का जीवन गरिमा पूर्ण।
करेंगे जीवन-अमृत पान, कुप्रथा होंगी चूर्ण विचूर्ण ।।

यही है मेरी भावी दृष्टि, जन्म लेगा ऐसा शुभ धर्म।
सभी अनुयायी होंगे वीर, करेंगे पंथ हेतु शुभ कर्म ।।
बनेगा जगती-गुरु यह वीर, करेगा मर्यादा का त्राण।
सभी का होगा उच्च चरित्र, और मानवता का कल्याण ।।

स्वयं सब विद्याओं मे दक्ष, पूर्ण था ज्ञान, ध्यान, विज्ञान।
विश्व की भाषाओ का ज्ञान जन्म से मिला उसे वरदान ।।
सभी ग्रन्थों का अद्भुद ज्ञान, तर्क में था बालक बेजोड़।
स्वल्प सा ही उसका सम्पर्क, जिन्दगी में ला देता मोड़ ।।

विकट विद्वान, ज्ञान के कोष, लगे करने शिशु से शास्त्रार्थ।
पराजित हो जाते तत्काल, सीखते नव दर्शन का अर्थ ।।
और बन जाते सच्चे सिक्ख, श्री सत गुरु से अमृत पान।
टेकते गुरु द्वारे पर माथ, लगाते अलख पुरुष में ध्यान ।।

न जाने कैसा शिश का तेज, प्राप्त जो करता शुभ सम्पर्क।
उसे ही मिलता नया प्रकाश, उदय ज्यों होता तम में अर्क।।
बड़े अभिमानी कट्टर क्रूट, अकड़ते आते शिशु के पास।
किन्तु झुक जाते अपने आप, सहज ही सिवस धर्म के दास।।

समस्या कैसी भी निरुपाय, उसे सुलझा देते तत्काल।
प्रश्न कैसा भी गूढ़ प्रगाढ़, सही उत्तर दे देता बाल।।
सभी वर्गों के नर औ नारि, चले आते उत्तेजित लोग।
शान्त होकर फिरते निज सौध, हमेशा को कट जाता रोग।।

गहन गंभीर स्वभाव विशुद्ध, नयन से छलका जाता प्यार।
पास में जो भी आता व्यक्ति, लुभाता उसको मृदु व्यवहार।।
विरोधी भी बन जाते मित्र, दुष्ट बन जाते सज्जन शुद्ध।
मूर्ख में भी जग जाती बुद्धि, और बन जाता प्रखर प्रबुद्ध।।

लोह ज्यों छूकर पारस खण्ड, स्वर्ण बन जाता है तत्काल।
बैठकर दो क्षण नानक पास, बकों के बनते स्वर्ण मराल।।
मलय-तरु का पाकर स्पर्श, बनें ज्यों-चंदन शूल बबूल।
उसी विधि नानक का सम्पर्क, बदल देता सोने में धूल।।

द्विप्रहरी में जलती ज्यों धरा, सुशीतल होती वर्षा काल।
दुग्ध का करके मन भर पान, विषैली ज्वाला तजता ब्याल।।
उसी विधि श्री चरणों में पहुँच, सुशीतल होता जन समुदाय।
खर्च होता पापों का पुंज, पुण्य की बढ़ती अतुलित आय।।

इसी विधि लगा बीतने काल, खुल रहे थे सद्गुण के कोष।
निरन्तर आते प्यासे लोग, मिल रहा था पीयूषी तोष।।
कर रहे थे जो अत्याचार, उन्हें होती भय की अनुभूति।
पुण्य करने में बढ़ता हर्ष, दिव्यता की थी विमल विभूति।।

दिव्य बालक के उर में नित्य, बढ़ रही ब्रह्मभाव की प्रीति।
अलौकिक शत लक्षण के मध्य निभानी भी थी लौकिक रीति॥
आयु जब नौ वर्षों की हुई, जनेऊ के हित किया विधान।
हुये एकत्रित बांधव लोग, विधाता की इच्छा बलवान॥

मंत्र की ध्वनि औ पूजा पाठ, पुरोहित कुल के हरीदयाल।
बिठा नानक को आसन बीच जनेऊ रहा गले में डाल।
तभी बोले श्री नानक देव, हृदय में आप न करना रोष।
नही पहनूँगा इसको गले, जनेऊ में है भारी दोष॥

पहनना ऐसा मुझे जनेऊ, पूर्ण निर्दोष और निर्विकार।
आपने भी तो अपने कंठ, नहीं रक्खा है उसको धार॥
मानता पांधा ब्रह्मस्वरूप, भक्ति से झुका हुआ था माथ।
किन्तु औरों को देने ज्ञान, पूछने लगा उठाकर हाथ॥

बताओ नानक क्या है दोष ? चाहते कैसा यज्ञोपवीत ?
कौन से होते लक्षण दिव्य ? कौन सी उसकी उत्तम रीत ?
जहाँ तक मेरी कहते बात, पहन रक्खा है निसन्देह।
उसे माना जाता कुविचार, जनेऊ बिना कुलच्छन देह॥

हुये नानक अतिशय गंभीर, तेज छाया मुख चारों ओर।
बताने लगे ज्ञानयुक्त बात, बुद्धि अम्बुधि ज्यों उठी हिलोर॥
सुनो हे कुल के पंडित पूज्य, जनेऊ ऐसा पहनो सुक्त।
दया की जिसमें लगे कपास, और संतोष सूत से युक्त॥

ग्रन्थि हो जत की लगी सुपुष्ट, और सत् के बट्टा हों श्रेष्ठ।
नहीं गल जल पायेगा कभी, नहीं होगा दूषण से नेष्ठ॥
धन्य हैं ऐसे पुरुष महान, जनेऊ ऐसा हो जिन पास।
व्यर्थ यह खाना पूरी कर्म, नहीं है कोई मतलब खास॥

जनेऊ पहनें, बोलें झूठ, कर्म में भरा रहे व्यभिचार।
नहीं हैं शुद्ध भावना, हृदय कलुष से भरा हुआ आगार॥
व्यर्थ है ऐसा ढोंगी वेष, नहीं मुझको किंचित स्वीकार।
जनेऊ पहना दो सतपूर्ण, करूँगा उसको अंगीकार॥

सुने उस बालक के उद्गार, पुरोहित चकित प्रशान्त अवाक।
उपस्थित जन भी गद्गद् धन्य, जम रही थी सद्गुण की धाक॥
तभी बोले श्री कालूराय, पुत्र ! मानो वृद्धों की बात।
करो जो युग युग से करणीय, बनो आज्ञाकारी प्रिय तात॥

तभी बोले श्री नानक देव, मुझे वह आज्ञा है स्वीकार।
वयोवृद्धों का उर में मान, अवज्ञा कभी न अंगीकार॥
सभी कह उठे धन्य। हे धन्य!! हुये कुल, ग्राम, देश जग धन्य।
ज्ञान, सम्मान, नम्रता युक्त, नही देखता सुत ऐसा अन्य॥

उपस्थित पांधा श्री गोपाल, पुरोहित कुलगुरु हरीदयाल।
जनेऊ पहनाकर तत्काल, सुशोभित किया तिलक से भाल॥
आह! वह कैसा सुन्दर दृश्य, बाल ब्रह्मचारी तेज अनन्त।
विजय पाकर भी था नतग्रीव, बनेगा जगती-गुरु शुचि संत॥

युगों में आते ऐसे पुरुष, धन्य हो जाता सब संसार।
मिटा देते ये पाप प्रमाद, सिखा देते जीवन का सार॥
कृपा गुरुवर नानक की हुई, मिटाये ढोंग और पाखंड।
सिखाये शुद्ध सरल व्यवहार, राष्ट्र की महिमा रहे अखंड॥

चलाया ऐसा सुन्दर धर्म कि जिसमें सब जन रहें समान।
विविध जो भेदभाव, मिट जाँय, बढ़े मानवता का सम्मान॥
गुणों का ही उन्नयन अनन्त, देवसम सब मानव हो जाँय।
सुधामय जगती माँ का वक्ष, पुत्र-पुत्री कर पान अघायें॥

दिव्य शक्ति आती है जो विश्व में उद्धार हेतु,
दीखते हैं विविध अलौकिक चमत्कार।
त्यागते हैं जन दोष दुर्गुण कपट द्वन्द्व,
अनायास शुभ सभी जन का सदाचार॥
राष्ट्र, भाषा, संस्कृति औ सभ्यता प्रगति करें,
हर उर मध्य सद्गुण प्रति छाता प्यार॥
सतयुग देव, त्रेता राम, कृष्ण द्वापर में,
कलियुग मध्य श्री नानक का अवतार॥



सर्ग-5

अलौकिक चमत्कार

जय हो जय हो उन देव जनों की जय हो।
जिनसे जगती में पाप पुंज का क्षय हो ॥
हैं धन्य भाग्य जो प्रभु अवतारी बनते।
तपती वसुधा पर शीतल ताने तनते ॥

सत धर्म दीप की ज्योति सुधा बरसाती।
श्री सतगुरु वाणी नेह लता सरसाती ॥
मिट जाती जग से दुख नीरद की छाया।
पुण्यात्मा जन को मिलता हर्ष सवाया ॥

भगवान आपकी कृपा कोर हरषाती।
शुचि भक्त-हृदय की वीणा मंगल गाती ॥
हे सतगुरु ! जग पर दया करो, प्रभु आये।
अनुपम अतिलौकिक चमत्कार दिखलाये ॥

वह नानक नामी बालक था अवतारी।
दुख नाशक, पालक, भक्त-हृदय-भय-हारी ॥
वह दिन दिन चिन्तन मग्न ध्यान का धाता।
गंभीर मौन ज्यों जगती-भाग्य-विधाता ॥

श्री कालू महता इस हालत से चिन्तित।
करते को अपना पुत्र कर्म से अन्वित ॥
बोले "हे बेटा ! श्रम मेरा कुछ हरने।
ले जाओ भैंसें वन की ओर विचरने ॥

थे आज्ञाकारी बालक आज्ञा मानी।
चल दिये भैंस ले वन की ओर मुनानी ॥
थे वीतराग, निर्लिप्त ध्यान में डूबे।
कुछ देर रहे थे वृक्ष आड़ में ऊबे ॥

सहसा जाने क्या बात ध्यान में आई।
वे हरित घास पर लेटे, निद्रा छाई ॥
पर पशु तो पशु हैं कहां ज्ञान अभिप्रेती।
वे चरने पहुँचे जमींदार की खेती ॥

चर रही भैंस जब, जमींदार वहां आया।
निज हानि देखकर उर में क्रोध समाया ॥
चर गई फसल सब, एक न तांतू छोड़ा।
तब जमींदार ने अपना घोड़ा मोड़ा ॥

पहुँचा वह सीधा रायबुलार कचहरी।
थी भृकुटी बंकिम, भाव उठ रहे जहरी ॥
निज माथ ठोक कर आग बबूला होकर।
तब कही राय से कथा धैर्य को खोकर ॥

हे राय ! सुनो फरियाद, सताया आया।
कालू महेता का पुत्र भैंस निज लाया ॥
छोड़ी खेतों में भैंस फसल सब खाई।
यह नई मुसीबत भारी सिर पर आई ॥

है आप न्याय की मूर्ति, दोष-दुःख हारी।
दोषी को देना दंड न्याय अविकारी ॥
यह कहते कहते कंठ रुद्ध हो आया।
शासक ने तत्क्षण नानक को बुलवाया ॥

आये श्री नानक दिव्य तेज के धारी।
ज्यों अमा-निशा में विद्युत द्युति छविकारी ॥
जैसे तारक दल मध्य चन्द्र उग आया।
या मरु थल सैकत राशि जलधि लहराया ॥

ज्यों द्विजकुल मंडल मध्य हंस का शावक।
या क्षार-कणों के मध्य दहकता पावक ॥
पुष्पों के संचय वीच खिला हो शत दल।
सब सरिताओं के ललित मध्य गंगा जल ॥

ज्यों विविध धातु गण बीच स्वर्ण की आभा।
किसलय संपुट में खिला कल्पतरु गाभा ॥
रत्नों में हीरा कौस्तुभ ज्यों मणियों में।
हो कामधेनु गौमध्य शेष फणियों में ॥

वैसे ही नानक जन संकुल में शोभित।
थे नयन सभी के दिव्य छटा से लोभित ॥
आते ही ऐसा लगा कि आतप भागा।
सब जग का सुख सौभाग्य स्वतः ही जागा ॥

देखा वह तेजस ओज प्रेम उद्वेलन।
झरता हो ज्यों पीयूष सिक्त हो तन मन ॥
दो घड़ी विमोहित रहे बुलार सभागे।
सहसा नत मस्तक हुये तेज के आगे ॥

फिर भी लौकिक कर्तव्य निभाना था ही।
वादी प्रतिवादी देंगे स्वतः गवाही ॥
पूछे नानक से प्रश्न हानि क्यों कर दी ?
उत्तर था मानों वरद गिरा ध्वनि भर दी ॥

बोला "हे न्यायी ! चलो स्वयं थल देखो।
क्या हानि लाभ है, देख, न्याय अवरेखो ।।
मानी शासक ने बात खेत पर आया।
पर बिना हानि के अन्न लहरता पाया ।।

टूटा था कण भी नहीं, हानि नहीं पाई।
फिर कैसे कहता फसल महिप-दल खाई ?
था जमीदार भी चकित हुआ क्या टौना।
वह दृश्य अलौकिक, अद्भुत औ अनहौना ।।

जो पल भर पहिले खुँदे रुँदे टूटे थे।
वे कैसे इतने सघन नये फूटे थे ।।
था नहीं चिन्ह भी भैंस उधर आई थी।
ना एक तन्तु भी फसल कहीं खाई थी।

वह भारी लज्जित हुआ खेत का स्वामी।
बन गया सिक्ख वह नतमस्तक अनुगामी ।।
न्यायी शासक वह राय बुलार चकित था।
पकड़े नानक के चरण महा पुलकित था ।।

हो गया पंथ का दास, श्रीगुरु-चेला।
ज्यों भँवर-जाल से कर ले, कूल धकेला ।।
नभ बीच सुरों ने पुष्प राशि बरसाई।
आनन्द अश्रु से नयन कोर भर आई ।।

ऐसे कौतुक हर दिवस दिखाई देते।
जिनसे जन, मन में श्रद्धा धन भर लेते ।।
था पता चल रहा सबको, था "अवतारी"।
वह ब्रह्म तेज था पुण्य धर्म विस्तारी ।।

था ग्रीष्म काल अति तीव्र धूप ध[illegible]
अकुलाते थे सब जीव उष्णता स[illegible] कर ।
श्री नानक लेकर भैंस खेत पर पहुँचे ।
सो गये पेड़ की छांह हाथ सिर नीचे ।।

ढल गई वृक्ष की छांह धूप मुख आई ।
फिर जिसने देखा दृश्य, बुद्धि भरमाई ।।
आया मोती सा श्वेत लहरता फणधर ।
निज फण से करली छांह सुमुख के ऊपर ।।

वह मार कुंडली बैठा धूप बचाये ।
ज्यों विष्णु देव पर शेष नाग छवि पाये ।।
जो गया उधर को वही चकित भौंचक्का ।
विश्वास हृदय में दिव्य शक्ति का पक्का ।।

तब गये भागते लोग बुलार बुलाया ।
यह दृश्य देखकर उसने शीश झुकाया ।।
जय जय हे ! जय हे ! नाथ ब्रह्म अवतारी ।
शुभ धर्म–विधाता पाप मीचु भयहारी ।।

घिर गये अनेकों लोग शोर पल भर ही ।
हो गया लोप वह सर्प उसी थल पर ही ।।
तब जागे श्री गुरुदेव अधर पर स्मित ।
रह गये उपस्थित लोग चकित स्तंभित ।।

है अभी माल जी साहिब शुभ गुरुद्वारा ।
जो भक्त जनों को देता अतुल सहारा ।।
जो श्री गुरु नानक नाम जाप है करता ।
उसका शुभ जीवन पुण्य धर्म से भरता ।।

बोलो हे भक्तो "सत् श्री अकाल" निज मुख से।
कट जाँय दुखों के जाल, रहो फिर सुख से।
जो दिव्य पुरुष अवतार धार कर आते।
वे निज वाणी से प्रेम सुधा बरसाते॥

सत की नाव, खेवटिया, सतगुरु, सत की वाणी, सत का ज्ञान।
पार लगेगा भव सागर से, जो अमृत कर लेगा पान॥
सच्ची खेती और किसानी, सत का सौदा सत्य दुकान।
कृपा करो गुरु नानक स्वामी, परम दयानिधि कृपा निधान॥

□□

सर्ग-6

सत्य का सौदा

भवसागर जीवन नाव पड़ी।
अघ घोर शिला शुभ मार्ग अड़ी ।।
हरि नाम जपो, हरि नाम जपो।
मन पावन हो तप-वन्हि तपो ।।

गुरु नानक का उर ध्यान करो।
शुचि भाव सुधा भरपूर भरो ।।
यह जीवन धन्य करो तप से।
सब मस्सृति कष्ट हरो जप से ।।

जो जप करता ईश्वर बनता।
शुभ धर्म वितान जगत तनता ।।
जो तप तपता कंचन होता।
सब माया-मल जड़ से खोता ।।

प्रभु ने जिह्वा दी है जप को।
तन के सब अवयव हैं तप को ।।
मन इसीलिये प्रभु में लग ले।
उर जगत निशा से द्रुत जग ले ।।

माथा प्रभु के सम्मुख नत हो।
हर साँस प्रेम में अनुरत हो ।।
तन में भक्तिज शुभ पुलकन हो।
शुचि धर्म-समर्पित धड़कन हो ।।

लोचन शुचि जल से भरे रहें।
हर समय नाथ की कथा कहें॥
कर्तव्य पूर्ण हों जीवन के।
शुभ कोष भरे विद्या धन के॥

जय नानक की जो ब्रह्म रूप।
तृप्ता माँ का वह सुत अनूप॥
आया नर कर्म रचाने को।
दनुजों से धर्म बचाने को॥

उसके कर्तव्य चमत्कारी।
वह नर था ईश्वर अवतारी॥
उसके चरित्र में रहस्य भरा।
सौदा करना था खरा खरा॥

लौकिक जन उनको क्या जानें?
आसानी से वे क्यों मानें?
कालू मेहता थे पटवारी।
लौकिक लाभों में व्यवहारी॥

हर रोज देखते नानक को।
उसके हानिद सब वानक को॥
बेटा धन नही कमाता था।
पर खर्च रोज कर आता था॥

भर पात्र खाद्य ले जाता था।
भूखों को सब दे आता था॥
वह भोज्य साथ वर्तन देता।
बिन माँगे तन-मन-धन देता॥

थे पिता क्षुब्ध माता चिन्तित।
किन ऐमालों से सुत अन्वित।।
यह कैसे जीवन काटेगा?
सब घर कर्जे से पाटेगा।।

कैसे दाम्पत्य चलायेगा?
जब केवल जमा लुटायेगा।।
यदि नहीं कमाने, खर्च करे।
तो राज खजाने जाँय हरे।।

इसलिये एक दिन वे बोले।
"हे पुत्र लोक–परिचित हो ले।।
कुछ काम करो जो आय बढ़े।
जीवन नव सुख सोपान चढ़े।।

यदि भैंस चराने से ऊबे।
तो किस विचार में हो डूबे?
खेती बोने का काम करो।
उत्पादन में ही नाम करो।।

मैं कर देता हूँ सब प्रबन्ध।
लो जुआ उठा रख चलो कंध।।
सबसे उत्तम व्यवसाय यही।
सुत! स्वीकारो, जो बात कही।।

सुनकर नानक गंभीर हुये।
ज्यों वादक तंत्री तार छुये।।
ज्यों अम्बुधि ऊपर से प्रशान्त।
हिल गया सलिल ज्यों वायु भ्रान्त।।

बोले "हे पूज्य पिता ! सुनलें,
निज सुत की इच्छा उर गुन लें ।।
सच खेती सत्य किसानी हो ।
करणीय वही मन मानी हो ।।

बोले श्री मेहता बाल ! अहो ।
सच्ची खेती का अर्थ कहो ।।
जो उत्तर नानक से पाया ।
वह अमर सत्य उर भर आया ।।

"निज मन को तो हाली करलें ।
उर काम क्रोध खाली कर लें ।।
तन की भू में जप तप पानी ।
ईश नाम का बीज बुवानी ।।

तोप सुहागा फेरें ऊपर ।
ऐसी खेती तन-मन भू पर ।।
मानस में हों नम्र विचार ।
प्रेम फसल जीवन-आगार ।।

संसारी खेती निस्सार ।
साथ नहीं चलती उस पार ।।
माया से मोहित संसार ।
विरले सत समझते सार ।।

समझ गये श्री कालूराय ।
यह भी सार्थक नही उपाय ।।
बोले, अच्छा त्याग विचार ।
कर दुकान पर ही व्यापार ।।

बोले नानक, उम्र बीतती।
भजन बिना यह रोज रीतती॥
सत्य नाम का सौदा डाल।
श्रेष्ठ विचारों की चौपाल॥

सच्चा सौदा सत्य दुकान।
सच्ची अपनी आन बान॥
ग्राहक जगती के सब लोग।
सबको कस कर बैठा भोग॥

मुक्त करें उनको बंधन से।
सच्ची सेवा तन मन धन से॥
जीवन अपनी सहज दुकान।
सत्य-भाव से ही सम्मान॥

उत्तर सुन श्री कालूराय।
रोषानल उर में धुँधकाय॥
जो कुछ कहता अस्वीकार।
नहीं कर्म कुछ अंगीकार॥

कैसे इसका समय कटेगा?
कैसे आग्रह बंध हटेगा?
दिन प्रतिदिन चिन्ता का भार।
बेटे का कैसा व्यवहार?

फिर मन दृढ़ कर यत्न किया।
नवल मंत्र सा बोल दिया॥
सोचा लक्ष्य भेद शर है।
निशा-भेद यह प्रात प्रहर है॥

कालूराय चकित भारी।
लौकिक धर्म कर्मचारी॥
पुत्र हेतु मन में चिन्तित।
मोह तरलता से सिंचित॥

सोचा इसे न झंझट भाय।
कुछ आसान काम दिलवायें॥
बोले बेटा! यही मान लो।
सरल नौकरी कर्म जान लो॥

उचित समय पर घर से जाओ।
दिन भर निज दायित्व निभाओ॥
पुनः समय से वापिस आना।
सहज नौकरी कर्म निभाना॥

फिर नानक मुख तेज दिखाया।
नर-तन ब्रह्म ओज भर आया॥
लौकिक जनक दिया सम्मान।
जो कुछ कहा अलौकिक ज्ञान॥

ओउम ओउम का जप करके।
उर में प्रेम-सुधा भरके॥
बोले सत की निर्भय वाणी।
दिव्य सुधा जग हित कल्याणी॥

करें नौकरी हम वह ही।
ध्यान ईश का रहे सही॥
बाँध बुराई, नाम जपें।
सत्य हेतु शुभ ताप तपें॥

बोले, "बेटा ! यह धन लो
घोड़ों के व्यापारी बन लो ।।
यह तो धनवानों का काम ।
धन से ही बढ़ता धनधाम ।।

नानक फिर गंभीर हुआ ।
नया चितना-क्षितिज हुआ ।।
दिया पिता को जो उत्तर ।
याद रखें जग नारी नर ।।

पूज्य पिता ! शुभ कर्म वही ।
सब शास्त्रों का मर्म यही ।।
सत्य प्राप्ति ही है घोड़े ।
बृद्ध जांय अवगुण रोड़े ।।

खर्चे नेकियों का ले साथ ।
धर्म—शक्ति से ऊँचा माथ ।।
कल की कभी न देखें वाट ।
उठे तमूरे का कब ठाट ?

निरकार का शुभ सचखंड ।
पहुँच मिलेगा हर्ष अखंड ।।
ऐसा वणिज सदैव फले ।
मोक्षमार्ग पर सदा चले ।।

लौकिक हानि लाभ है व्यर्थ ।
मायामय अति करें अनर्थ ।।
मैं सच का ही वणिज करूँ ।
परम चेतना सुधा भरूँ ।।

कालूराय चकित भारी।
लौकिक धर्म कर्मचारी ।।
पुत्र हेतु मन में चिन्तित।
मोह तरलता से सिंचित ।।

सोचा इसे न झंझट भाय।
कुछ आसान काम दिलवायें ।।
बोले बेटा ! यही मान लो।
सरल नौकरी कर्म जान लो ।।

उचित समय पर घर से जाओ।
दिन भर निज दायित्व निभाओ ।।
पुनः समय से वापिस आना।
सहज नौकरी कर्म निभाना ।।

फिर नानक मुख तेज दिखाया।
नर-तन ब्रह्म ओज भर आया ।।
लौकिक जनक दिया सम्मान।
जो कुछ कहा अलौकिक ज्ञान ।।

ओउम ओउम का जप करके।
उर में प्रेम-सुधा भरके ।।
बोले सत की निर्भय वाणी।
दिव्य सुधा जग हित कल्याणी ।।

करें नौकरी हम वह ही।
ध्यान ईश का रहे सही ।।
बांध बुराई, नाम जपें।
सत्य हेतु शुभ ताप तपें ।।

धन्य धन्य सब कहें उसे।
नाम मत्तता बीस बिसे ।।
सुधा सिन्धु में रहे निमग्न।
लौकिकता की चिन्ता भग्न ।।

यह जीवन ईश्वर की थाती।
प्रेम तेल प्राणों की बाती ।।
माया की आंधी झकराये।
काम क्रोध बाधा टकराये ।।

ऐसी करे नौकरी जीव।
मिलें निरंकारी चिर थित पीव ।।
ब्रह्म रंध्र में लग्न कुंडली।
सुधा कूप से सिंचत कली ।।

शून्य महल में अष्ट झरोखा।
माया परदा झूठा धोखा ।।
अलख सेज पर पौढ़ बहुरिया।
लम्बी राह पुण्य का खरिया ।।

मन मे सत्य कवच करवाल।
जम के दूत विमुख तत्काल ।।
औघट घाट पहुंच पनिहारी।
इला पिंगला [illegible] नारी।

आत्म तत्व परमात्व बना।
सुभग चेतना तार तना ।।
जल में पात्र, [illegible] में जल।
बोध मर्त्ति [illegible] दल ।।

अज्ञानी जन जानें तन का।
ज्ञानी समझें गूढ़ मिलन को ।।
विस्मृत पथ क्यों लक्ष्य मिले ?
सूर्य प्रभा से कमल खिले ।।

जल में कमल न लागे काई ।
आत्मा माया बीच समाई ।।
घूँघट खोल निरखि लो स्वामी ।
अलख निरंजन अन्तर्यामी ।।

कालूराय झुकाये नैन ।
सुनते रहे सुवन के बैन ।।
समझ गये कुछ नहीं करेगा ।
पता नहीं क्या लेगा-देगा ।।

जो इच्छा हरि की सो होई ।
बदल सके क्या भावी कोई ?
पटवारी निज कर्म लग्न थे ।
नानक सत के ध्यान-मग्न थे ।।

वह रोग ही कुछ और था,
औषधि अलौकिक चाहता ।
वैद्य लौकिक की कभी भी,
उर रही परवाह ना ।।

वह शोक ही कुछ और था,
वह विरह था भगवान का ।
संसार अज्ञानी भला क्या,
अर्थ समझे ज्ञान का ?

धन्य नीर जो रहे कसकता,
धन्य हृदय जो पीर सहे।
अकथ कहानी मर्म भेद की,
कौन किसी से धीर कहे॥

नानक का तो नशा और था,
और तरह का था उन्माद।
केवल संत समझ सकते है,
करते केवल प्रभु की याद॥

हे सतगुरु! वह शक्ति स्रोत दे, कथा सुना दूँ मैं जग को।
भूली बिसरी मानवता को, बता सकूँ सच्चे मग को॥
गुरु नानक की निर्मल वाणी, सुधा घोल दे तन मन में।
हिन्दू-सिक्ख एक होकर ही, रहें प्रेम से जीवन मे॥



सर्ग–7

अलौकिक रुग्णता

जप लो श्री गुरु नाम, बहुत है उनके शुभ उपकार।
दिव्य ज्योति के दर्शन पाओ, सत्यखण्ड का दिव्यागार॥
वाहि गुरुजी शरण दीजिये, परम दयानिधि परमोदार।
कृपादृष्टि से नाथ! आपकी, जीवन–नौका होगी पार॥

भगवान नानक आपकी शत बार जय जयकार है।
शुभ मार्ग सबको ही बताया, जगत पर उपकार है॥
जो ढोंग औ पाखण्ड थे उनको मिटाया मूल से।
जो फँस रही मँझधार में, वह नाव कर दी कूल से॥

सौ बार जय जयकार दसियों ही गुरु महाराज जी।
म्लेच्छ असुरों से हमारी खूब रखली लाज जी॥
धन्य वे बलिदान भारी, कष्ट झेले अनगिने।
शीश कटवाया औ प्यारे पुत्र चूने में चिने॥

कौन है पापी जो ऐसे धर्म की निन्दा करे?
धर्म को ही वे जिये औ धर्म को ही वे मरे॥
सिक्ख है भाई हमारे, धर्मरक्षक वीर है।
जो हमें लड़वा रहे है, दुष्ट औ बिन पीर है॥

भेद है कोई नही, बस दुश्मनों की चाल है।
सिक्ख हिन्दू एक है, अब दुश्मनो का काल है॥
सोच लो हे दुश्मनो! क्यों प्राण देना चाहते?
दो घड़ी में ही मिलोगे तड़फते व कराहते॥

हम किसी को भी नहीं है चाहते दुःख द जरा।
पर सोच लो तम पाप का घट है लबालब अब भरा ।।
बाज आओ अब कुकर्मो घृणित कर्मों से गहो।
मही बनकर प्रेम से हम भी रहें, तुम भी रहो ।।

यह देश अपना है बड़ा, इसमें अनेकों धर्म हैं।
विविध भाषायें अनेकों मान्यतायें कर्म हैं ।।
फूलता है बाग जैसा, फूल-कलियाँ फूलते।
भिन्नता में भी कभी हम एकता नहीं भूलते ।।

क्यों लड़ें हम ? एक माँ की आँख के तारे रहें।
एक ईश्वर है पिता, हम सब उसे प्यारे रहें ।।
भेद क्या है राम में या कृष्ण, नानक देव में ?
क्यों भला फँसते दरिन्दों की कुचाल फरेब में ?

हे हिन्दुओ ! तुमको शपथ है कृष्ण की, श्री राम की।
हे सिक्ख भैयाओ ! तुम्हें सौगध गुरु के नाम की ।।
सौगंध मन्दिर की तुम्हें, सौगन्ध गुरु के द्वार की।
सौगन्ध है तुमको तुम्हारे पूर्वजों के प्यार की ।।

फेंक दो हथियार, आओ प्रेम से मिल लें गले।
राम की संतान हिन्दू, सिक्ख लव कुश से पले ।।
हाय कितनी भूल की है, खून अपनों का बहा।
निर्दोष माता और बहिनों ने भला कितना सहा ?

पुँछ गई माँगें, हुई सूनी अनेकों गोदियाँ।
बहिन बाँधेगी भला किनकी कलाई राखियाँ ?
भाईयों को खो दिया है कौनसी यह वीरता ?
हिन्दुओं से और सिक्खों से प्रणेता पूछता ।।

वश करो अब, ध्यान कर लो धर्म-प्रहरी जो रहे।
याद कर लो कष्ट जो इस धर्म-रक्षा हित सहे ।।
याद कर लो उस जगत गुरु को कि जिसने त्राण कर।
राह दिखलाई सभी को सत्य की कल्याण कर ।।

जगतगुरु नानक ! हमारे हृदय में सद्भाव दो।
सद्गुणों की समृद्धि दो, जिससे न उर दुर्भाव हों ।।
याद करके आपका जीवन, सही शिक्षा गहें।
बाग में ज्यों फूल रहते, हम उसी विधि से रहें ।।

चल लेखनी ! सौभाग्यनी ! लखकर दशा तू आज की।
जो अमृत बरसायगी, तू कह कथा महाराज की ।।
मस्त थे नानक हृदय में भाव थे जग-त्राण के।
मौन होकर सोचते थे कर्म जन-कल्याण के ।।

हो गई विक्षिप्त दिनचर्या, शयन औ जागरण।
भूल जाते खाद्य, जल वस चिंतना ही ऊर्द्ध क्षण क्षण ।।
निकलना भी बन्द था बस थे वहीं लेटे सदा।
जगत के कल्याण का ही ध्यान रहता सर्वदा ।।

इस तरह नर केहरी का वजन भी घटने लगा।
स्वास्थ्य गिरता ही गया तन तेज भी छटने लगा ।।
देखकर यह हाल उनका, जनक को चिन्ता हुई।
शिथिल हो जाते कि जैसे स्पर्श से हो छुई मुई ।।

वैद्य थे हरिदास जी विख्यात सारे क्षेत्र मे।
ज्ञान अनुभव के अलावा दया दर्शित नेत्र में ।।
रोग की पहचान करते थ त्वरित स्पर्श से।
प्राण रक्षक भी कहे जाते अनेकों वर्ष से ।।

थे गये कालू उन्हीं के पास औ लाये बुला।
जगत गुरु को ऊर्द्ध मुख कर पलँग पर लीना सुला॥
पकड़ कर दक्षिण भुजा को देखने नाड़ी लगे।
किन्तु जाने क्यों रहे वे हैमहारे से ठगे॥

कह नहीं पाये कि क्या था रोग औ क्या दें दवा।
वे हुये थे जिन्दगी में विवश पहली मर्तबा॥
देख उनका हाल नानक ने विहँस उनसे कहा।
रोग है यह आन्तरिक जो शुद्ध चेतन ने सहा॥

देखते हो नब्ज भोले वैद्य जी तुम किसलिये?
आत्मा ने बिछुड़ प्रिय से विरह के प्याले पिये।
हृदय को पीड़ित बनाये है विषम सा रोग यह।
विरहणी प्रिय के विरह को किस तरह पाती है सह?

बोले तभी हरिदास जी यदि अंदरूनी रोग है।
तो भी बना दूँ औषधि मैं ज्ञात उसका योग है॥
लेनी पड़ेगी औषधि मुख द्वार से उसके लिये।
आज तक रोगी अनेकों ठीक मैंने कर दिये॥

कह गया यह बात लेकिन हृदय में भयभीत था।
किन्तु नानक के हृदय में प्रीत का नवनीत था।
अपमान करना या अवज्ञा संत जन क्या जानते।
देते सभी को उचित आदर जो सही, वह मानते॥

बोले श्री नानक सुनो हे वैद्य जी अब ध्यान से।
सुखी आत्मा हो भला कैसे बिछुड़ भगवान से?
एक दुःख है बिछुड़ने का एक अभिलाषा मिलन की।
कौन समझेगा कहूँ यदि वेदना इस आर्त्त मन की॥

एक दुख यमदूत का है, झपट पड़ता बाज सम।
दंड देता है उसी को पाप ज्यादा पुण्य कम।।
रोग का भी भय बहुत है, क्या पता कब दाव लो।
तन बहुत कोमल क्षणिक है, चोट दे यो घाव दे।।

आपकी औषधि भला किस काम की इस रोग में।
क्या निकालेंगी बचायेंगी पड़े जो भोग में?
भूल कर भगवान को जो भोग में आ लिप्त है।
वे भला कैसे सुखी जो एषण–विक्षिप्त हैं?

जो दवा हो व्यर्थ असली रोग के प्रतिकार में।
भगवान-भक्ति की न जो रुचि दे सके व्यवहार में।।
भोग से जो मुक्त करके त्यागमय जीवन न दे।
है लाभ क्या उस दवा से, चाहे कोई ले न ले।।

भोग करते है अनेकों रोग तन–मन–आत्म में।
है वही असली दवा जो लय करे परमात्म में।।
वस्तुतः ये रोग तो है दंड भोगी जीव के।
ये जगाकर आस्था दर्शन कराते पीव के।।

जिस तरह चन्दन के तरु मे है सुरभि व्यापी हुई।
उस तरह ही चेतना तप–अग्नि मे तापी हुई।।
है पुरुष–फल श्वास अन्दर तन बना आधार है।
पाप-कर्मो से ही रोधित श्वास का व्यापार है।।

तन रहे यदि स्वर्ण के सदृश्य तप से तप्त हो।
फिर नहीं कोई कभी जग ज्वाला में अभिशप्त हो।।
रोग दुःख सब पार करके ही पहुँचता ध्येय पर।
स्मरण कर ईश का ही प्राप्त करता श्रेय घर।

इसलिये हे वैद्य जी ! क्यों व्यर्थ श्रम करते रहो।
जिस तरह परमात्मा रक्खे ! उस तरह जग में रहो ।।
स्मरण प्रभु का हमेशा, शुद्ध तन मन कर्म हो।
प्रेरणा का स्रोत सच्चा और निर्मल धर्म हो ।।

धर्म की जय हो सदा, शुभ कर्म का विस्तार हो।
'तन तपे, मन हरि जपे, यों जीव का उद्धार हो ।।
पुष्प बनकर जगत उपवन को सुरभि का दान दें।
जन सभी को हर समय शुचि प्रेम निर्मल मान दें ।।

गुरुदेव नानक कह गये ज्यों मलय मारुत चल गई।
वह वैद्य की अभिमान भावी भावना उस पल गई ।।
होकर पुलक तन और निर्मल मन गया आवास को।
भूल क्या पाया कभी वह वैद्य नूतन भास को ?

गुरुदेव जग कल्याण हित नूतन खरा सौदा करें।
विश्व उपवन में सुविकसित, ना दया-पौधे मरें ।।
ब्रह्म की लेकर कलायें, सब जगत का त्राण हो।
द्वेष मिट जावे जगत से सर्व का कल्याण हो ।।



सर्ग-8

खरा-सौदा

जय हो जय हो सतगुरु की, जो तम में राह् दिखाते ।
माया मरीचिका पीड़ित जन को सद्धर्म सिखाते ।।
वे स्वयं सहन कर दुख को, भक्तों को सुख ही देते ।
बस देते ही देते हैं, कुछ नहीं किसी से लेते ।।

तप तप कर सूरज बनकर, जगती का तम हर लेते ।
डूबी जो नौका भव में, सद्धर्म कूल पर खेते ।।
विषपान स्वयं ही करते, अमृत जगती है पाती ।
जो अमन चैन दुनियां में, इन संत जनों की थाती ।।

हे नानक देव जगत के, सतगुरु तुम, राह दिखाई ।
जो भटकी मानवता थी, वह सही मार्ग पर आई ।।
तुमने सब भेद मिटाया, तुमने सब द्वेष मिटाये ।
जो दुश्मन बने परस्पर, उनमें सद्भाव जगाये ।।

सबको देकर गुरुद्वारा, गुरु ग्रन्थ साहब की वाणी ।
सबको ही गले लगाया, वह शरण मिली कल्याणी ।।
आओ सब अमृत पी लो, है भेद नही जन जन में ।
राखो साहस निज उर में, सद्भाव एकता मन में ।।

दुश्मन कुछ नहीं बिगाड़े, यदि स्वाभिमान सिर ऊँचा ।
अड़ जाओ धर्म बचाने, मिट जाय अधर्म समूचा ।।
क्या अर्थ व्यर्थ जीवन का, यदि मान प्रतिष्ठा रीते ।
यों तो कूकर शूकर भी, खाते पीते हैं जीते ।।

जीना तो वह ही जीना, ज्यों दहक रही हो ज्वाला।
छलके प्राणों का आसव, तन ऊर पूर शुचि प्याला ।।
वह जीवन भी क्या जीवन, जो राख समान शमित हो।
वह जिजीविषा है निष्फल जो भय से ध्वस्त दमित हो ।।

यों चलो कि जैसे केहर, चलता है चाल निडर हो।
ऊपर को शीश उठा हो, ज्यों अग्नि शिखायुत शर हो ।।
क्या साहस कोई रोके, या टोके कृष्ण भुजंगी ?
जब ज्वार उठा लहराये वह अम्बुधि मत्त तरंगी ।।

गुरु नानक तेरी जय हो, गौरव गरिमा के दानी।
हे सत्य दया के स्रष्टा ! शरणागत वत्सल मानी ।।
बीता वह शुचितप शैशव, कैशोर्य कुसुम विकसाया।
निज नित्य नियम करनी से अभिराम सुयौवन आया ।।

लौकिक अर्थों में नानक, थे अब तक नहीं कमाते।
वे पिता श्री पटवारी, देते गये खर्च, खिलाते ।।
वे समझ न पाये नानक, कुछ और भाँति का प्राणी।
कह देते जो मन आता, कटु तिक्त क्रोध की वाणी ।।

इच्छा थी उनकी बेटा, कुछ कारोबार सँभाले।
कुछ धन विनियोग करे वह, द्रुत पूँजी खूब कमाले ।।
फिर जैसे होता आया, वैसे ही बने गृहस्थी।
निश्चिन्त धर्म को अर्पित वह जीये वृद्ध-अवस्थी ।।

इस इच्छा से ही मेहता, नानक के पास खड़े हो।
बोले, "हे सुत ! क्यों अब तक तुम आग्रह लिये अड़े हो ?
अब निकलो घर से बाहर, ये बीस रुपये ले जाओ।
कुछ सौदा खरा करो तुम, औ भारी लाभ कमाओ ।।

मन भी वहलेगा इससे, फिर ग्राय-साधना होगी।
जो निष्क्रय रहता निशिदिन, वह हो जाता है रोगी ।।
बोले भाई बाले से तुम भी इसके संग जाना।
फिर नानक बाले दोनों हो गये प्रफुल्ल रवाना ।।

लाहौर नगर को चलते वे चूहड़ काणे आये।
जंगल में खाद्य बिना ही कुछ साधू बैठे पाये ।।
तन तेज म्लान कुछ देखा, कुछ घुटी घुटी बेचैनी।
क्या छुपा रह सका उसमे, वह दृष्टि ग्रमित ग्रति पैनी ।।

वे परम दया के निधि थे, उर में थी करुणा धारा।
भूखे ऋषियों के दल को देना था खाद्य सहारा ।।
वे बीस रुपये थे कर में जो पिता श्री ने दीनें।
उर में ब्रह्मत्व भरा था, थे भाव दिव्यता-भीने ।।

सोचा यह कैसा जग है ? जिसमें मुनि भूखे रहते ?
जो ढोंगी, लोभी, भोगी, वे सुख सरिता में वहते ।।
जो तप तप स्वर्ण सुभग से, कचन से शुद्ध बने है।
उनकी लौकिक यात्रा मे, ये ग्रटके विघ्न घने है ।।

जो महा ग्रधर्मी जन है, ऐश्वर्य लोक में डूबे।
जो धर्म-प्राण पुण्यात्मा, दुख सहते ऊबे ऊबे ।।
संसार चाहता धन है, धन को ही लाभ बताते।
वह सौदा खरा कहाता, जिससे बहु लाभ कमाते ।।

ग्रब ग्रपने पास रुपये है, ये मुनिजन बैठे भूखे।
ये पाप-खेत लहराते, वे पुण्य-खेत हैं सूखे ।।
मुझसे है कहा पिता ने, कुछ लाभ कमाने जाग्रो।
कुछ सौदा खरा करो तुम, फिर ग्राकर मुझे बताग्रो ।।

मन कहता मेरा मुझसे, क्या अधिक लाभ है इससे ?
यदि खाद्य मँगाऊँ धन का, हों तृप्त साधुजन जिससे ।।
यह सौदा खरा सभी से, व्यापार सभी से उत्तम ।
धन का उपयोग यही तो है जगती में सर्वोत्तम ।।

श्री नानक अति भावुक थे था कंठ रुद्ध पुलकन से ।
आँखों में अमृत कण थे, शुचि ज्योति उठी थी तन से ।।
फिर देख साधुजन गण को, कुछ मन में निश्चय धारा ।
बोले फिर बाले से यों, ज्यों बीन-तार झंकारा ।।

हे भाई बाले ! सुन लो, तुम जाओ दौड़ नगर को ।
क्रय करो खाद्य उत्तम शुचि, फिर आओ उसी डगर को ।।
मैं रहूँ यहीं पर तब तक, मुनिजन पर दृष्टि लगाये ।
आतप को रोके नभ में, ये नीरद रवि पर छाये ।।

बाले कुछ हुआ भ्रमित सा, अति रुष्ट राय हो सकते ।
दो पल तक बिन कुछ बोले, वे रहे गगन को तकते ।।
कुछ द्वन्द्व विकट था मन में नानक का कथन अटल था।
वे करें अवज्ञा इनकी, इतना नहीं तन-मन-बल था ।।

श्री नानक अन्तर्यामी, उर-भाव जान कर बोले ।
किस दुविधा में अटके हो, हे बाले भाई भोले ।।
सच मानो यही खरा है, सौदा क्या इससे अच्छा ।
जिस धन से सन्त सुखी हों, वह धन ही धन है सच्चा ।।

जो आज्ञा मिली पिता से, उसका ही पालन होगा ।
है कौन लाभ बढकर यदि, संतों ने धन को भोगा ।
संतों की सेवा जग में, सौभाग्य उदित है होता ।
यदि चूक गया अवसर तो, समझो वह जीवन खोता ।।

यह पैसा धन्य बनेगा, मिट्टी भी स्वर्ण बनेगी।
जब संत शुभाशिष देंगे सुख चादर शीश तनेगी ।।
जो धन को धन अर्जन के, हित में ही लेते देते।
वे सैकत युक्त धरा पर जीवन--नौका को खेते ।।

धन साधन हो सेवा का, शुभ पुण्यार्जन कर पायें।
उपकार करें सब जग का, मंगल के स्रोत बहायें ।।
जो धन दुखियों के दुख का, थोड़ा भी हरण करेगा।
वह सच्चे सुख का दाता, जग में वरदान भरेगा ।।

जाओ हे ग्वाले भाई, अविलम्ब खाद्य ले आओ।
संतों को खिला पिलाकर, जीवन को सफल बनाओ ।।
ग्वाले अब द्वन्द्व रहित था, निर्मल था मन का दर्पण।
जो कुछ था तन मन धन सब, कर दिया धर्म को अर्पण ।।

चल दिया तीव्र पद गति से, तत्काल खाद्य ले आया।
आदर सद्भाव श्रद्धा से, संतों को तृप्त बनाया ।।
व्यय हुआ सकल धन उसमें, पर मन का हर्ष बढ़ा था।
अवतार पुरुष आगे के सोपान सहर्ष चढ़ा था ।।

कुछ ऐसा हर्ष हुआ था, जो तरु फल देकर पाता।
जो हर्ष सरित के उर में, जल दे प्यासे को, आता ।।
ज्यों सागर मोती देकर, गम्भीर और हो जाये।
या मेघ मिटा अपने को धरती की प्यास बुझाये ।।

ज्यों दिनकर जलता पल पल, औरों को प्रभा लुटाता।
दीपक निज प्राण जलाकर, भटकों को राह दिखाता ।।
कल कुसुम लुटाकर सौरभ, हो शुष्क धरा में मिलता।
जब चन्द्र लुटाता अमृत, तो कुमुद प्राण-रस खिलता ।।

दानी को आदत होती, वह सब कुछ अर्पित करता।
इतरों को तुष्ट बनाकर, निज उर प्रमोद सुख भरता॥
लेने में गरिमा घटती देने में गौरव बढ़ता।
जो देता ही देता है, वह ध्येय शृंग पर चढ़ता॥

जो द्रव्य पिता ने दीना, कुछ लाभ अर्जना करने।
वह खर्च किया नानक ने, शुभ संत क्षुधा को हरने॥
आनंद भरा था उर में, माधुर्यमयी स्वर वीणा।
बन रही चेतना सञ्चित, औ दिव्याचार प्रवीणा॥

हतप्रभ से वाले भाई, बस रहे देखते मुख को।
जो पाता है वह जाने, देने के दुर्लभ सुख को॥
सब मुनिजन तृप्त सुखी थे, आशीष सहज ही मिलता।
ज्यों मलयानिल अभिचुंबित नीरज सरवर में खिलता॥

सब देव दुआ देते थे, देवी थी मंगल गातीं।
सब यक्ष और किन्नरियाँ अति भव्य पुष्प बरसातीं॥
जय जय की ध्वनि से सारा, ब्रह्माण्ड गुंजरित होता।
अवतार ब्रह्म का जग में मंगल के तरुवर बोता।

देखा भाई वाले ने, कुछ और तेज उस मुख पर।
वैकुण्ठ धाम न्यौछावर दो क्षण के ऐसे मुख पर॥
नयनों में दया तरलता, होठों पर स्मित रेखा।
वह दृश्य अलौकिक जब तक केवल भक्तों ने देखा॥

फिर लौट पड़े तलवंडी, कर सौदा लाभ अमर का।
घाटा अब कभी न होगा, भय यम से नहीं समर का॥
अमरत्व पुण्य में होता, भय मुक्त पुण्य का कर्ता।
है कर्म हाथ में नर के, वह सदा कर्म फल भर्ता॥

जो जैसा बोये, काटे, करनी का फल है मिलता।
जो निरासक्त यों रहते, पानी में नीरज खिलता।।
युग में बस एक फरिश्ता आता है धर्म बचाने।
निर्लिप्त ब्रह्म को भी तो पड़ते हैं रास रचाने।।

बाले को मर्म बताया वह बंधन मुक्त हुआ था।
औसत कद के उस नर ने फल ऊँचा आज छुआ था।।
चूहड़ काने में अब भी है स्मृति में गुरु द्वारा।
शुभ नाम "खरा सौदा" है भक्तों का अतिशय प्यारा।।

जो गुरुद्वारे में जाकर "वाहे गुरु" मंत्र जपेगा।
उसका यश निर्मल कंचन जगती के द्वार थपेगा।।
तलवंडी में फिर आये, बाले ने बात बताई।
तब पिता रोष में आये, सयम की आन गँवाई।।

अपशब्द क्रोध में बोले, उत्तेजित तन औ मन था।
नानक के उर की निधि में, शुचि सहन शीतता धन था।।
वे लौकिक आत्मज जिनके, उनकी फटकार सहन की।
तनधारी की जो पीड़ा, वह निर्गुण देह वहन की।।

यह बात बढ़ी कुछ आगे, फिर राय बुलार सुनाई।
श्री कालूराय बुलाये अरु मर्म बात समझाई।।
हे मेहता तेरा सुत यह, लौकिकता से है आगे।
जब सब जग सोता रहता, तब यह रहता है जागे।।

यह जो कुछ करता, शुभ है, मत रोको बस करने दो।
निज पुण्य धाम को शुभ से, सकोच रहित भरने दो।।
यदि अति नुकसान करे यह, तो मुझसे भरवा लेना।
पर नानक करे जो चाहे, बस इतनी सुविधा देना।।

यह असामान्य जन देही, परमात्म तत्व का धारी।
जगती का है उद्धारक, सुखकारी, सब दुख हारी ॥
यह धर्म क्रान्ति का रक्षक, मर्यादा पालक सच्चा।
इससे सत पाठ पढ़ेगा जगती का बच्चा बच्चा ॥

जो करे, इसे करने दो, वह अनुकरणीय बनेगा।
जो धर्म चलायेगा, सबको वरणीय बनेगा ॥
ये महापुरुष जगती पर, आते हैं मार्ग दिखाने।
जो अलख पुरुष की बानी, सच्चों को उसे सिखाने ॥

जो सिक्ख बनेगा इसका वह अभय निहाल रहेगा।
सब जग में सुख समृद्धि का अब सहज प्रवाह बहेगा ॥
इसके अनुयायी होंगे, सच्चे, निर्भय, बलशाली।
वे देश-धर्म के रक्षक, मानवता गौरवशाली ॥

उनके हाथों मे भारत, स्वाधीन अखण्ड रहेगा।
आतंक, द्रोह हिंसा, को नही सिक्ख कदापि सहेगा ॥
गुरुद्वारे मे जो जन भी, अमृत का पान करेगा।
वह राष्ट्र एकता हित मे सच्चा बलिदान करेगा ॥

वे सिक्ख नही है सच्चे, जो रक्त बहा खुश होते।
नानक के सब अनुयायी, पाखण्ड भेद मल खोते ॥
जो आये गुरु सेवा में, नही जाति धर्म के बंधन।
जो आक धतूरे काँटे, वे भी बन जाते चंदन ॥

हे कालू महता ! उत्तम संस्कार भाग्य की रेखा।
पाई है तुमने विधि से, जो दिव्य सुवन भव देखा ॥
तुम रहो प्रसन्न उमंगित, अमरत्व नाम पायेगा।
यह बालक कलियुग मे भी, सतयुग सत्वर लायेगा ॥

फिर राय बुलार प्रफुल्लित, जप गुरुवाणी का करते ।
अवतार पुरुष दर्शन से, उर सतचित आनंद भरते ।
सुन कर मेहता थे मोहित, स्वीकार बात सब करली ।
आनन्द अश्रु उर निसृत, करुणामय आँखें भरली ।।

आये निज निलय लुटे से, मिश्रित अनुभाव अनूठे ।
दुनियाँ के ठाट ठमूरे, सब लगते नश्वर भूँठे ।।
लगता ज्यों दीन भिखारी, पा गया कुबेर खजाना ।
या मीन गहन जल डूबी, भूले को मिला ठिकाना ।।

तृप्ता को भेद बताया, वह सरल सुधर्मी नारी ।
आँखों को फाड़े चुप चुप, देखी सुत को छवि न्यारी ।।
वह धन्य जगत की माता, जो जाये सुत अवतारी ।
बनता जग का सुख दाता, शुभत्राता, दुख-भय-हारी ।।

भगवान मेरे देश पर, कुद्ध रीझ कर या खीज कर ।
लाचार होकर भक्ति से या उर दया से भीज कर ।।
आते रहो श्री राम बन या कृष्ण बन नानक प्रभो ।
लीला करो, सुख से भरो, दुख को हरो, वरदा विभो ।।



सर्ग–9

मोदी की कार

हृदय ! सतगुरु की चरण–रज शीश धर।
ब्रह्म से बढ़कर सुखद आशीव कर।।
गुरुकृपा बिना ब्रह्म भी मिलता नहीं।
रवि–किरण बिन जलज ज्यों खिलता नहीं।।

जलज सम मन निर्विकारी रह सके।
गिरा मन की बात जग से कह सके।।
तिमिर जो अज्ञान का, हट जायगा।
मोह का जो कोहरा, फट जायगा।।

धन्य है यह लेखनी जो लिख रही है गुरु–कथा।
दे रही अभिव्यक्ति अब तक मूक थी जो जग–व्यथा।।
हाय मानव ! दूसरों को व्यर्थ क्यों दुःख दे रहा ?
स्वार्थवश अति चार करके, "हाय" उनकी ले रहा।।

~ रह नहीं सकता मनुज क्या, प्रेम से, सद्‌भाव से ?
मुक्त हो सकता नहीं क्या, त्रास के दुर्भाव से।।
देवता औ दानवों के बीच का प्राणी बना।
है खुली दो राह चाहे अशुभ कर या शुभ घना।।

प्रकृति रहती बीच में, दो बिन्दु ऊपर और नीचे।
एक सस्कृति इतर विकृति, अधोपतिता अधिक खीचे।।
लुढ़कना आसान है, चढ़ना कठिन है शिखर का।
अभिशाप अजगर खींचता है, मंद आकर्षण सुवर का।।

धन्य है वह जन कि जो दृढ़ पाप-मच्छों से, बचे।
स्वर्ण से कंचन बने जो तप सुपावक में तचे।।
धन्य है उत्थान नर का, धन्य है गुण शीलता।
पाप प्रेतों को सुमंत्रों की सुधा से कीलता।।

कष्ट मेहता थे बहुत, निज पुत्र के व्यवहार से।
पा रहे निर्देश लेकिन नित्य रायबुलार से।।
जानकी जय राम जी के साथ भेजा रोष से।
ले गये सुलतानपुर वे शुभ निमति के तोष से।।

दीवान थे जैराम भाई उच्च पद शुभ नाम था।
प्रबन्ध दौलत खान के साम्राज्य का ही काम था।।
अतिशय समृद्ध नवाब थे, अति राजसी थे ठाट भारी।
फौज का लंगर अतुल, थे सब जनों के कष्ट हारी।।

खुश हुये जय राम की वह प्रार्थना सुन कर नवाब।
रख लिया लंगर में नानक, देखकर शुभ शुद्ध भाव।।
पन्द्रह सौ ब्यालीस सम्वत में बने मोदी वहाँ।
कार्य था सामान देना शाही लंगर से तहाँ।।

संत थे, भगवान थे, अतुलित तपस्या के धनी।
संसार की समृद्धि उनके इंगितों से ही बनी।।
थी जिधर भी दृष्टि जाती, अतुल वैभव दीखता।
संसार उनके कार्यों से सद्गुणों को सीखता।।

ध्यान में ही मग्न रहते, ज्ञान में स्थित सदा।
ब्रह्म के शुभ सत्य शिव का नूर उनमें सर्वदा।।
सृष्टि के सब प्राणियों का चाहते थे त्राण वे।
जो शरण में आ रहा था, कर रहे कल्याण वे।।

अतुल दानी, है कहाँ उपमान दूँ उनके लिये ?
काम गौ औ कल्प तरु ने वरद कर उनको दिये ॥
जो माँगता पाता वही, इच्छा अधूरी थी नहीं।
जो देखता, झुकता वही, वह तेज देखा क्या कहीं ॥

जो नियम शाहीं नवाबी, हो गये लाचार से।
पा रहे इच्छित सभी जन, उस अतुल भंडार से ॥
थे रहे मोदी अनेकों, किन्तु जलवा और यह।
चल रहे लंगर अनेकों किन्तु रुतवा और यह ॥

अंत होता ही नहीं था, दे रहे भरपूर थे।
खर्च होने से न रीते, कोष ऊरपूर थे ॥
दिव्यता कैसी खुदाई, क्या प्रभो का ओज था।
रिक्त वह लगर न हो-ता, अनगिनत जन भोज था ॥

ले रहे परिधान इच्छित, चाह की, वह ही मिला।
ना शिकायत थी किसी को, ना कोई करता गिला ॥
तुल रहा नवता हुआ, थे ले रहे दो वार भी।
मिल रहा था प्रेम निश्छल, और सद्व्यवहार ही ॥

थोड़े दिन में यह चर्चा थी, प्रकट हुये हैं धरा-कुबेर।
जो कुछ कोई चाहे ले ले, देने में नहीं पल की देर ॥
जो चाहे सो भोजन ले ले, जो चाहे सो ले परिधान।
याचक खाली हाथ न जाता, माँगे चाहे दुर्लभ दान ॥

नानक ने जब गही तराजू, दो तोले तब एक गिने।
नवती झुकती तोल तोलते, कूडा कर्कट स्वयं बिने ॥
"तेरा तेरा" कहते जाते, चौदह कभी न कहते थे।
सभी उपस्थित ग्राहक इससे चकित भ्रमित मे रहते थे ॥

क्या कारण है नानक जी तो "तेरा" ही कहते जाते।
रुक जाती गिनती "तेरा" पर चौदह कभी न कहं पाते॥
बात बढ़ी जिज्ञासा जागी, लगे पूछने क्या है राज?
"तेरा" कहकर क्यों रुक जाते, मर्म बताओ गुरु महाराज॥

बोले नानक "सुनो भक्तजन! जग माया का डेरा है।
उसका उसको अर्पण करके कहना है "प्रभु! तेरा है॥"
"मेरा" कहना मिथ्यावाणी, दर्प जगाता जीव में।
मोह बढाता और-घटाता सच्ची आस्था पीव में॥

तेरा है प्रभु! तुझको अर्पण "तेरा" आगे क्या गिनती।
आत्म मिले परमात्मा पीव को, सच्ची हो उर की विनती॥
कहना है परमात्म पिता से, नानक तेरा वणिक बना।
तू ही मेरी सच्ची पूंजी तेरा ठाट ठमूर तना॥

लोगों को यह भारी भ्रम है, क्यों कहता "तेरा "तेरा"।
चौदह कभी नहीं कहता हूँ यह इनके उर का फेरा॥
भारी भ्रम के भँवर भुलाने, तभी मिटे अरदासि करें।
"तेरा" ही मानें सब जग को उर में तेरी भक्ति भरें॥

बात बढ़ी औ बढ़ते बढ़ते लोधे के कानों पहुँची।
चुगल खोर औ दूत बहुत थे करते ऊँची नीची ऊँची॥
बोले 'माई बाप! आपका मोदीखाना है बर्बाद।
लुटा रहा है नानक उसको नहीं हानि की है तादाद॥

पाँच पाँच सो तोल तोलता गिनता केवल तेरा तेरा।
मोदी खाना लुटा लुटू के भाग करे अज्ञात बसेरा॥
क्या लेंगे फिर आप भाग कर छुप जायेगा जहाँ तहाँ।
आप मुसलमां वह हिन्दू है इसका फिर विश्वास कहाँ॥

अजयराम की जुम्मेदारी, वह निश्चित मारा जाये।
इतनी भारी हानि भला वह कैसे संभव भर पाये।।
यही आपसे विनय हमारी, अब तक का लेखा जोखा।
किसी विज्ञ से जाँच करावें, खुल जायेगा सब धोखा।।

सुनकर लोधा रुष्ट बहुत हो, बुला लिया जै रामदास।
मोदी खाना हमें दिखाओ, करें निरीक्षण हाकिम खास।।
दौलतखान चले क्रोधित हो खुलवाया मोदीखाना।
बुलवाया नानक को तत्क्षण पूर दिया ताना बाना।।

कितना माल भरा था इसमें, कितना नानक ने बाँटा।
"करो निरीक्षण" कह नवाब ने, चढ़वाया शाही काँटा।।
हुये इकट्ठे अधिकारी भी, आरक्षी दलबल था साथ।
पूर्ण राज्य में शोर मचा था, फेंक रहे थे हाथों हाथ।।

किया हिसाब बहुत सख्ती से, नानक बैठे चिन्ताहीन।
ऐसे मस्त मग्न आनंदित, गहन सलिल में जैसे मीन।।
तीन दिवस तक किया निरीक्षण नानक का पलड़ा भारी।
बढ़त हो रही थी नानक की, दूतों की बढ़ती ख्वारी।।

ज्यों ज्यों आगे हुआ निरीक्षण, कर्ज चढ़ा सरकार पर।
नानक की बढ़ती बढ़ बढ़ कर, तीन सैंकड़ा पार कर।।
विस्फारित नेत्रों से लोधा, देख रहा इस मर्म को।
सुखी हुये जै राम बहुत उर, लखि नानक के धर्म को।।

धन्य धन्य कह उठे सभी जन, नभ से फूल बरसते थे।
धरती से उठ स्वर्ग द्वार तक यश के सुमन सरसते थे।।
धन्य नानकी बाई जिसने पाया ऐसा वीर महान।
दौलतखान अचंभित हर्षित देता उर की श्रद्धा दान।।

लाज रही जैं रामदास की, जिसने था दायित्व लियो।
हर्ष विकम्पित हो नवाब ने चरणों का स्पर्श किया।
नानक के आनन पर ऐसा तेज झलकता रविकर सा।
स्वर्ण सुमेरु शिखर सित शोभित अनल वितान प्रभाकर सा॥

चुगलखोर थे लज्जित भारी, छुपा रहे निज निज मुख को।
बहिन नानकी बहुत सुखी थी, कौन जानता उस सुख को।
कहती "मेरा भाई ईश्वर, परम ब्रह्म का अवतारी।
सब जग का दुःख दूर करेगा, सबको देगा सुख भारी॥"

महिमा बढ़कर द्विगुणित थी अब, सब जन लगे झुकाने माथ।
जो भी दर्शन करते उनको लगता ब्रह्म पिता का साथ॥
दौलतखान परम आभारी, सौंप दिया मोदी खाना।
नानक देने लगे और भी उर में भारी सुख माना॥

धन्य चरित्र महापुरुषों के, धन्य धन्य संतों के काम।
महापुण्य होता जो उनका निशि वासर लेते हैं नाम॥
मन में ध्यान धरो नानक का, सब गुरुओं का ध्यान करो।
छोड़ वासना झूँठे जग की, उर में सच्चा ज्ञान भरो॥

जग पर कृपा संत जन करते सुख के बादल छा जाते।
कलियुग में भी सतयुग के से, सुख संतोष शान्ति पाते॥
संतों के शुभ चरण जहाँ भी पड़ते, वही तीर्थ बनता।
दुःख आतप को दूर हटाने पुण्य वितान सुभग तनता॥

जो उपदेश संत देते है, उनसे होता जग-कल्याण।
घृणा द्वेष मत्सर मिट जाते, मिलता जीव मात्र को त्राण॥
गुरु नानक के उपदेशों का पालन करे सभी संसार।
भेदभाव सब मिट जायेगा, सबसे सबको होगा प्यार॥

धन्य हुई भारत की वसुधा, गुरु नानक ने चरण धरे।
सबके उर में प्रेम दया औ मानवता के भाव भरे॥
धर्म बचाया म्लेच्छजनों से, कलियुग में सतयुग लाये।
अनुयायी जो बने हृदय से, उनने सहज ध्येय पाये॥



सर्ग-10

परिणय

चरण—वंदन सतजन का मन ! करो।
श्रेष्ठ भावों का हृदय में धन भरो ।।
भक्ति-श्रद्धा मूल्य जीवन का रहे।
बुद्धि भौतिक लाभ को ही क्यों गहे ?

शुभ हृदय मस्तिष्क पर शासन करे।
प्रेम के पय से सरोवर उर भरे ।।
कंठ गद्‌गद् की गिरा अमृतमयी।
नेत्र-गंगा जल हृदय शाश्वत जयी ।।

धन्य हैं वे जन सदा संतोषधारी।
मन वचन औ कर्म से शुभ धर्मकारी ।।
धन्य हैं जो द्वेष—ईर्ष्या से परे हैं।
हृदय में शुभभाव ही जिनके भरे हैं ।।

अरि नहीं कोई, सभी आत्मीयजन हैं।
हित सभी के उर भरे निर्विकार घन हैं ।।
जीव कोई हो उसे सुख दें सदा।
क्लेश से वे मुक्त रहते सर्वदा ।।

धन्य है भारत धरा जो संत—माता।
धन्य हैं इसके सुवन जो विश्व त्राता ।।
हुये इसके गर्भ से ऋषि मंत्र—दृष्टा।
गोद में खेले मनुज बन सृष्टि—सृष्टा ।।

देवियाँ भी हिन्द की शुभ शक्ति-दाता।
पुरुष नारी—योग से हो सिद्धि पाता।।
रहित जो अर्द्धाङ्गिनी से अंग आधा।
शक्ति के बिन ब्रह्म ने क्या कर्म साधा?

युवक नानक अमित उनका स्वस्थ तन मन।
प्रकृति से होना पुरुष का लोक—बंधन।।
विवाह के प्रस्ताव शुभ आने लगे।
स्वजन परिजन मोद भी पाने लगे।।

मूला चोणा आ गया रंधा विप्रां का।
खुल रहा था मर्म दैवी हासिया का।।
घर बटाला काम पटवारी सुरुचि थी।
नियति उसकी शक्तिशाली और शुचि थी।।

वर्ष पन्द्रह सौ चवालीस सुभग।
ज्येष्ठ का शुभ माह करता धन्य जग।।
प्रथम करी शुभ रश्म, श्री पुल पान, की।
गूँज रही थी ध्वनि मगलमय गान की।।

न्यौछावर में रजत स्वर्ण मोहर गिरे।
ढेर लगे थे याचक चारों ओर घिरे।।
अजब दृश्य था, स्वर्ग उतरता आ रहा।
नृत्य मग्न समुदाय सहर्षित गा रहा।।

आये कालूराम संग तृप्ता रानी।
नौकर रामा की अगुआई छवि छानी।।
साथ लिये थे, मातुल कृष्णा नानी प्रेम मिराई।
नाना राम लुभाया आये, मंडप रंगत छाई।।

पलते परमानंद और मर्दाना डूम गवैया।
तुलसां वांदी, निधे पुरोहित, खड़े भैन औ भैया।।
आये नानक सबको आदर देकर तुष्ट किया।
पूज्य जनों को अभिवादन कर शुभ आशीष लिया।।

शुभ कामना भेजीं नवाब बुलार ने।
असर अपना था दिखाया प्यार ने।।
रीति लौकिक ही निभानी तन धरे की।
याद भी रखनी सदा सौदा खरे की।।

संस्कार मँगनी का हुआ, शुभ लग्न थी।
स्वजन परिजन सुखी, जनता मग्न थी।।
मांगलिक शुभ रश्म शिष्टाचार सारे।
हो रहे संकेत विधि के अजब न्यारे।।

रोज प्रातः मंद शीतल अनिल वहती।
कोष खोले सुरभि उसके साथ रहती।।
विहंगावलि कलरवों में गीत गाती।
पादपों की पंक्ति लहराती सिहाती।।

गगन में नव रंग रंजित जलद डोलें।
मधुर गर्जन कर्ण—पुट पीयूष घोलें।।
चमकती विद्युत लता छवि छिटक न्यारी।
उठा अवगुंठन लजाती नवल प्यारी।।

दीखते थे युगल में सब जीव प्रमुदित।
विरह की दुसह्य पीड़ा सर्व अविदित।।
सुमन सरसित कलिक वर कल केलि करती।
प्रेम की बदली बरसती मोद भरती।।

शकुन चिड़िया दाहिने को दीख जातीं।
पनिहारिने जल से भरे घट झूम लातीं।।
सब गृहों में धेनु द्विगुणित दुग्ध देतीं।
नारियाँ दधि से अधिक नवनीत लेतीं।।

आ गया शुभ दिन हुई ज्योनार भारी।
गा रही थीं नारियाँ शुभ गीत गारी।।
जीमते थे विविध व्यंजन अनगिने जन।
हर्ष से पुलकित सभी के मुग्ध मन तन।।

मग्न मातुल कृष्ण जी शुभ भात लाये।
मुग्ध तृप्ता के पटम्बर तन सुहाये।।
विहँसते कालू सुभग साफा बँधाते।
चीर मुद्रा नारि नर लेते सिहाते।।

गले मिलकर कर कृष्ण से तृप्ता अनंदित।
हर्ष के सीकर नयन से थे प्रवाहित।।
बँट रहे मिष्ठान्न फल व्यंजन बताशे।
बज रही नौबत, नगाड़े, ढोल ताशे।।

दूसरे दिन प्रातः वरयात्रा निकासी।
अश्व पर नानक, सभी के उर हुलासी।।
गब रहे थे गीत, मंगल आरती की।
मात तृप्ता मूर्ति लगती भारती की।।

बज रहे नौबत नगाड़े नृत्य होते।
वारना से हृदय हर्षित भृत्य होते।।
नाच करते युवक युवती मोद पाते।
स्वर्ण चाँदी विविध मुद्रा धन लुटाते।।

लिये ब्राह्मण साथ में [illegible]
लाल चंदी हाथ पूजा [illegible] ।
वेदियों की श्रेष्ठ वर आयाना [illegible] ।
सप्तधानो मधुर नौबत [illegible]

सूचना देने को मूला जी सदन [illegible]
प्रेम में प्रफुल्ल करने सर्व-मन को ।।
विप्र-नापित शकुन लेकर द्रुत गये ।
बाग में अगवानी करने आ गये ।।

साथ कालू जी के लालू जी सजे ।
ऊर्द्ध-ध्वनि से विविध बाजे फिर बजे ।।
जगत मल के साथ शोभित जट्टू मल ।
परस रामा, इन्द्र सैनी जीत उत्पल ।।

जगत राया औं फिरन्दा चल दिये ।
साथ परमानद पलता जैं लिये ।।
कृष्ण रामा पंक्ति में जय राम थे ।
परवों नगरी मार्ग अति अभिराम थे ।।

मरदाने रबाबी अश्व थामे चल रहे ।
थे मिरासी वेदियों से पल रहे ।।
अजीते रँधावे परवों का चौधरी ।
हाथ में थैली रुपये पैसे भारी ।।

समधी मूला जी अतिथि सत्कार में ।
पुष्प हाथों में लिये थे द्वार में ।।
वटेहरी सत्कार उत्तम विधि किया ।
नेग पौली का मुहूपित हो दिया ।।

मिलन था यह वर पुरुष औ प्रकृति का।
या महातप से मिलन था दिव्य धृति का।।
सुभग सरिता मिल रही ज्यों सिन्धु से।
या मिली रेखा अपरमित बिन्दु से।।

थी लता तरु से मिली घन चंचला।
क्षितिज पर ज्यों मिल रहे हों व्योम-अचला।।
प्रणय से सुषमा मिली हो मोद में।
पुण्य आहुति यज्ञ की वर गोद में।।

निरंकारी मिल रहा आकार से।
मिल रही हो सिद्धि ज्यों अविकार से।।
वह अलख था सुलखनो बंधन पड़ा।
बांध लेता है कलाई को कड़ा।।

भाल को बंदी नयन काजल छटा।
ढक रही ज्यों भुवन भास्कर को घटा।।
ज्योत्स्ना शशि से विलग होती नहीं।
ऊष्मा भी रवि-प्रणयी खोती नहीं।।

स्वाति जल की साधिका चिर चातकी।
मीन बनती बिछुड़ जल से पातकी।।
साज के ही साथ रहती रागिनी।
नीरजा रवि के बिना हतभागिनी।।

उठे कर अरविन्द मालायें गले।
प्रणय-शावक हृदय कोटर में पले।।
नेत्र मिलकर नेत्र से कुछ कह गये।
दो हृदय रस-निर्झरी में बह गये।।

देवता नभ से गिराते फूल थे।
सुधा सीकर वारते दिविकूल थे ।।
देवियाँ थी गीत नभ में गा रही।
इन्द्र की परियाँ थिरकती थीं कही ।।

बँट रहे पक्वान्न फल मिष्ठान्न थे।
सुरभिमय परिधान आनन पान थे ।।
दुग्ध के कुल्लड, दही की लस्सियां।
मगध औ नवनीत बालूसाइयां ।।

कहीं किशमिश और काजू कागजी बादाम।
घृत भुने पिश्ते चिरौंजी थे रटीली आम ।।
थे कहीं अखरोट चिलगोज्या मखाने घी तले।
विविध मेजों पर सजे फल लग रहे भारी भले ।।

जो जिसे था रुच रहा वह खा रहा।
अनूठे सत्कार का दरिया बहा ।।
रंगराजों में पुलक थे झूमते।
सुन्दरी समुदाय छत से लूमते ।।

पंडितों की मन्त्र ध्वनि नभ गूंजती।
ब्रह्म–दर्शन कर रहे योगी–यती ।।
थी सुसज्जित सुलखणी परिधान में।
नासिका में नथ सुकुंडल कान में ।।

हाथ में वरमाल सरसिज सुमन की।
युगल कर की चूड़ियां अनमोल खनकी ।।
एक माला हाथ में, नानक लिये।
लोचनों ने प्रणय—रस के घट पिये ।।

मिलन था यह वर पुरुष औ प्रकृति का।
या महातप से मिलन था दिव्य धृति का।।
सुभग सरिता मिल रही ज्यों सिन्धु से।
या मिली रेखा अपरमित विन्दु से।।

थी लता तरु से मिली घन चंचला।
क्षितिज पर ज्यों मिल रहे हों व्योम-अचला।।
प्रणय से सुषमा मिली हो मोद में।
पुण्य आहुति यज्ञ की वर गोद में।।

निरंकारी मिल रहा आकार से।
मिल रही हो सिद्धि ज्यों अविकार से।।
वह अलख था सुलखनो बंधन पड़ा।
बांध लेता है कलाई को कड़ा।।

भाल को वेंदी नयन काजल छटा।
ढक रही ज्यों भुवन भास्कर को घटा।।
ज्योत्स्ना शशि से विलग होती नहीं।
ऊष्मा भी रवि-प्रणयी खोती नहीं।।

स्वाति जल की साधिका चिर चातकी।
मीन बनती बिछुड़ जल से पातकी।।
साज के ही साथ रहती रागिनी।
नीरजा रवि के बिना हतभागिनी।।

उठे कर अरविन्द मालायें गले।
प्रणय-शावक हृदय कोटर में पले।।
नेत्र मिलकर नेत्र से कुछ कह गये।
दो हृदय रस-निर्भरी में बह गये।।

हो गया जब नेग पूरा, मुक्त थे।
एक तन दो—दो उरों से युक्त थे॥
बादलों मे चंचला जैसे समाती।
सुलखिनी नानक हृदय में व्याप्त पाती॥

संध्या उतरी धीरे-धीरे।
मधुर पराग विचुम्बित अलिदल, शीतल मंद समीरे॥
नीड़ नीड़ में खगकुल तन्द्रिल, पलकों पर बोझिलता थी।
नभ उपवन मे रजत सुमन थे, तम-प्रकाश की अनमिलता थी॥

बराती सब पुलकित हर्षित घूम रहे थे इधर उधर।
भूला चौंवे के घर होती भोजन की तैयारी सत्वर॥
दे छिड़काव बिछावन कर दी, रजनीगंधा महक रही।
भट्ठी ऊपर तई कड़ाहे, अन्दर पावक दहक रही॥

विविध व्यजनों का सौरभ भी अनिल सग में महक रहा।
अतुल प्रेम उन्माद उमंगित, हर उर मानो बहक रहा॥
वातायन गवाक्ष छज्जे छत सुमुखी सुषमा से भरपूर।
किड़िर किड़िर कड़ कड़ ध्वनि गूँजी, बजने लगे नगाड़े तूर॥

प्रेम मग्न भोजन हुये, तृप्त प्रफुल्लित प्राण।
जगत जनक सतगुरु बने, जीवमात्र को त्राण॥
जगत पिता जगमात का, शुभ विवाह सम्पन्न।
जीवमात्र को सुख मिला, विमल बुद्धि व्युत्पन्न॥

शोभित वधू सुलक्षिणी, वर श्री नानक देव।
वसुधा का सौभाग्य अति, अनन्त पुरुष की सेव॥
विदा समय करुण उमंगि, बही नयन की राह।
मात पिता के उर बहा, शुचि वात्सल्य प्रवाह॥

कन्या पर-धन की शुचि थाती।
मात-पिता की कौन कहे जब मुनिजन की छाती भरि आती।।
रोने लगते सिद्ध सुधीजन, बेटी अपना गृह तज जाती।
बिलखि उठी जननी कातर हो, वच्छ-विरह मे गायें रंभाती।।

कौन जानता पिता-पीर को, सब दुनियाँ सूनी हो जाती।
बचपन की जो संत सहेली, ढल परे चिड़िया खो जाती।।
कहाँ मिलें, फिर कौन मिलावे, सोच सोच अँखियाँ छलकाती।
तीज श्रावणी भैया आना, अच्छी हो भावज, बुलवाती।।

बाबुल के प्राङ्गण में झूली, राग मल्हार सखी मिल गाती।
सास श्वसुर की कौन कहे अब, रह रह कर दुलहिन सुबकाती।।
सरवर तक पहुँचाने आये।
मंगलमय हो मार्ग तुम्हारा, कभी न तुमको पीर सताये।।

सास श्वसुर अब मात पिता है, ननदुलि भैना, देवर भैया।
पति की अर्द्धांगिनी बन रहना, भवसागर में नाव-खिवैया।।
शुभ चरित्र उज्ज्वल धन होता, मर्यादा की सीमा रेखा।
साध्वी से यमराज काँपता, दृष्टि मिलाकर कभी न देखा।।

जो नारी मर्यादित रहती उसका निलय स्वर्ग बन जाता।
संतति शुभ संस्कार युक्त हो, यश-वितान जग पर तन जाता।।
पति-पत्नी में समझ परस्पर, जीवन का साफल्य मर्म है।
रहें परस्पर पूरक बनकर, यह गृहस्थ का श्रेष्ठ धर्म है।।

कते सूत सा, पंथ सुमन शुचि, दही दूध घृत खूब मिले।
हो सुन्दर व्यवहार प्रेममय, उपवन सम दाम्पत्य खिले।।
जय जग मात सुलक्षिणी, बनी धर्म की धार।
महापुरुष अर्द्धाङ्गिनी, धन्य हुआ संसार।।

संसार में दिव्यात्मा का जब कभी अवतार हो।
शक्ति बनकर नारि उसकी, पुण्यमय आधार हो॥
नारि के बिन नर अधूरा, काम कुछ कैसे करे?
संयोग हो नरनारि का तो, सहज भवसागर तरे॥

हैं अभागे वे पुरुष जो नारि को संताप दें।
स्वर्ग मिल सकता नहीं अरु देवता भी शाप दें॥
प्रेम की साक्षात—प्रतिमा, कल्पतरु की सी कली।
मान दे यदि पुरुष समुचित, वह सदा रहती भली॥

भगवान मेरे देश में नर—नारि शुभ संयोग हो।
सद्‌गृहस्थी हों सुखी तन का न मन का रोग हो॥
पुरुष हों नानक सदृश्य सुलक्षिणी सम नारियाँ।
हरित, सिंचित फलद हों, परिवार रूपी क्यारियाँ॥

□□

सर्ग 11

गृहस्थ धर्म

जय हो जय हो राम हमारे, दशरथनन्दन परमोदार।
जय हो कृष्ण कन्हैया प्यारे, भक्तजनों के प्राणाधार ।।
जय हो जनक दुलारी माता, राधे रानी की जय हो।
कृपा करो सब जग पर स्वामी, मानवता की सदा विजय हो ।।

होता है स्मरण पुण्यमय, मारुतनन्दन का उर में।
तो, माधुर्य-सुधा घुल जाती कवि के तन मन औ स्वर में ।।
संत जनों की कृपा कोर से मायामय भवभय मिटते।
उर की विजय हेतु स्पर्धा में गुण से अवगुण पिटते ।।

संत कबीर सूर तुलसी औ मीरा नानक श्री रविदास।
अंत ने ही रसखान रहीमा, जन-जन के उर करते वास ।।
वंचन थोथे ऊँच नीच के, जाति पाँति कोरी बकवास।
मानव की बस एक जाति है, जाना है ईश्वर के पास ।।

एक भूख है, एक प्यास है, रक्त सभी का होता लाल।
सबने जन्म लिया जननी से, सबको निगले काल कराल ।।
भेद नहीं मानव मानव में, स्वार्थ हेतु ही भेद बने।
जीवन-नौका में दुष्टों ने कर दीने हैं छेद घने ।।

हिन्दू सिक्ख अलग कैसे हैं ? कोई हमें बतावे आज।
बिना बात जो इन्हें लड़ाते, उन पर गिरे गगन से गाज ।।
देखो वंशावली ध्यान से, भ्रम मिट जावेगा तत्काल।
रामचन्द्र के लव कुश बेटे, सोढी वेदी उनके लाल ।।

कुछ सोढी के कुछ वेदी के सिक्ख जाति का शुचि इतिहास।
गुरु गोविन्द सिंह ने वर्णी, वंशावली पर करो विश्वास ।।
गुरु नानक के शिष्य कहाये, शिष्य शब्द ही सिक्ख बना।
हिन्दू-सिक्ख सगे भाई है, शाख अलग पर एक तना ।।

सिक्ख अगर मारें हिन्दू को, भाई की हत्या का पाप।
हिन्दू मारें किसी सिक्ख को तो भी उतना ही अभिशाप ।।
भाई मारे निज भाई को, पुरखे रोते होंगे स्वर्ग।
नरक कुंड में दुःख पायेंगे नहीं मिलेगा शुभ अपवर्ग ।।

गुरु नानक नहीं क्षमा करेंगे भाई के हत्यारे को।
रामचन्द्र का रोप मिलेगा कुलघाती बजमारे को।।
जो आतंक घृणित हिंसा में लिप्त हुये हैं तनमन से।
वे भाड़ैतू अन्य देश के, दास बनाया है धन से ।।

सीमा परे सिखाते लड़ना, घृणा द्वेप भरते मन में।
देश तोड़ने की कोशिश है, आग लगे ऐसे धन में ।।
क्यों हठ करते एक प्रान्त की, सारा देश तुम्हारा है।
जितना प्यारा हिन्दू माँ को, सिक्ख भी सुवन प्यारा है ।।

फेंको खूनी हथियारों को, आओ गले मिलेंगे हम ।
प्रेम करेंगे सच्चे मन मे, जब तक रहता दम में दम ।।
गुरु नानक की शपथ भाइयों, फौरन कर दो लड़ना बंद।
शपथ राम की तुम्हें हिन्दुओं, बनो न हत्यारे जयचन्द ।।

गुरु की कथा लेखनी लिखति, होती कृतकृत परम निहाल।
जो भी पठन श्रवण कर लेगा, भारत माँ का सच्चा लाल ।।
आओ हिन्दू गुरु द्वारे मे, चलकर अमृत पान करें ।
आओ सिक्खो मन्दिर में चल रामचन्द्र का गान करें ।।

गुरुद्वारे में माथा टेकें, गुरु ग्रन्थ साहिब की जय ।
मन्दिर में चल "मानस" सुन लें, 'गीता' सुन होवें निर्भय ।।
रामकृष्ण की माला फेरें जो बोले सो बने निहाल ।
राम राम सत सिक्ख कहेंगे, हिन्दू बोलें सत श्री अकाल ।।

हिन्दू के घर नानक प्रतिमा, सिक्खों के घर सीताराम ।
हिन्दू पढ़ें गुरुमुखी खुश हो, सिक्ख पढ़ें हिन्दी अभिराम ।।
ब्याह शादियां करें परस्पर, मिलकर चलें वंश के नाम ।
पंच ककारे हिन्दू धारें, कंठीमाला सिक्ख ललाम ।।

सुनो देश के वासी भैया ! भैंन और माता कवि से ।
नानक ने अज्ञान हटाया, ज्यों हटता है तम रवि से ।।
जब से ब्याह हुआ नानक का, लगे निभाने कुल के धर्म ।
बिन गृहस्थ आश्रम नहीं होते पूरे विश्वजनों के कर्म ।।

नानक सबका आदर करते, माता-पिता कुटुम्बी जन ।
अर्द्धाङ्गिन ने पति-सेवा में अर्पण कीना निज तन मन ।।
अमृत वेलें तजती शैया, सास श्वसुर के पग छूती ।
एक समान सभी प्यारे थे, नहीं वहां आपापूती ।।

दूध काढ़ कर छाछ बिलोती, घी को रखती ता ता कर ।
चून पीसती, नाज बनाती, पानी लाती गा गा कर ।।
सब्जी दाल सुस्वादु अचारी, चटनी फुलका भात दही ।
ताजा भोजन देती सबको, सीख मानती सास-कही ।।

लाजबीज से रहती घर में, ओढ़ पहनकर सजी धजी ।
रात्रि शयन में सबसे पीछे, उषाकाल में सेज तजी ।।
भिखमंगों को भिक्षा देती, अतिथि जनों का कर सत्कार ।
पति के साथ कुटुम्बी जन से पाती अन्तरतम् का प्यार ।।

चलती थी तो हंस लजाते, गाती तो पिक मौन बनी।
अन्य नारियों में लगती ज्यों आभूषण में हीर कनी ॥
अंग अंग में रूप राशि का सागर लहरें लेता था।
शशि निज सुधा सीकरों को चुन मंजुल मुख को देता था ॥

केश करारे सटकार से, कुंचित लहरें मुख ऊपर।
मानों शतदल अरुणाई पर, अलिदल लूमे झूम कर ॥
माँग भरी सिंदूर पूर यों लगती सरिता सरस्वती।
गंगा यमुना के प्रवाह में मिल जाती हो वेगवती ॥

गौर वर्ण की स्वर्गंगा में श्यामल चिकुर कलिन्दी से।
हिलते मिलते भी अनमिल से पार सेतु सम बिन्दी से ॥
रूपाम्बुधि में भ्रमर उठ रहे भ्रकुटी वक्र सुशोभित थी।
नयनों की बोहित डूबी भी अतिशय प्रेम प्रलोभित थी ॥

थे कपोल या सुमन जलज दो, रूप पराग झरा करता।
स्मित गर्त्त कूप सुषमा का रस से नित्य भरा करता ॥
शुक की चंचु पराजित होती, ऐसी सुघर नासिका थी।
नथ का मोती अधराधर रस पीता हारी अनामिका थी ॥

सीपी किसलय अधर बीच में दंतराजि मुक्तामणि सी।
स्कंधों पर युगल चोटियां लहर रही प्रेयसि फणि सी ॥
चिबुक सुघर ५.ल कंठ मनोहर बनी काकली तंत्री सम।
वक्ष सुमेरु शिखर युग राजत त्रिवली की सुषमा अनुपम ॥

कटि थी या वह कल मृणाल की छड़ी छरहरी लफनी सी।
जानु नितम्ब भार दुसह्य से निज की बनी करधनी सी ॥
पग की अंगुलियों के नख थे अरुण अलक्तक से अभिराम।
हंसक भार दबे जाते ज्यों पुष्प भार से लता ललाम ॥

कटि में किंकिन कनक तरी की, कुहुक रहे ज्यों मंजु मराल।
पग के नूपुर रुनझुन बजते करें नियंत्रित यौवन झाल।।
मेंहदी रची हथेली हँसती परिरंभण रत था हथफूल।
सुघर आरसी स्वर्ण-मुद्रिका बनते रूप सरोवर कूल।।

मदन महीपति के खरशर सी, दृष्टि भंगिमा मर्म भरी।
सुधा हलाहल मद के अम्बुधि उठी प्रणय की मृदु लहरी
पंजे पड़ते धीरे सैकत, गढ़ती ऐड़ी भार नितम्ब।
कहाँ प्रणय अभिसार अलक्षी, प्रिय को इंगित था अविलम्ब।।

नारि पद्मिनी के सब लक्षण उसके तन पर साफ दिखे।
अष्ट अंग थे पूर्ण और त्रिभुवन मोहन सब रंग लिखे।।
कंठ पारदर्शी में होकर पान पीक बाहर दिखती।
तन-सँग चीर उदित थे मानों नियति लेखनी से लिखती।।

सब विद्या और सभी कला में थी पारंगत स्वर्ग कली।
करती थी सब काम हाथ से, यद्यपि सुख में खूब पली।।
सूत कातना कपड़े बुनना सुभग कढाई चित्रकला।
पाक शास्त्र में परम निपुण थी करती थी सब काम भला।।

बोली मीठी नम्र नियंत्रित, आज्ञापालन चित्त प्रसन्न।
सेवाभावी दया द्रवितमति प्रतिभाश्रति प्रत्युत्पन्न।।
पाये शुभ संस्कार पिता से माता से उत्तम व्यवहार।
शीलवान कुलकानि समर्थक जीवन सादा उच्च विचार।।

नानक रहते मग्न ज्ञान में, ध्यान सदा परमेश्वर का।
अर्द्धाङ्गिन उनकी सेवा में, सुप्रबन्ध पूरे घर का।।
धोकर चरण नित्य जल पीती, थाली में जो रहता शेष।
उसका ले प्रसाद सुख पाती, तदनुरूप रखती निज भेष।।

महापुरुष की नारी बनकर नहीं काम्य थे भोग विलास।
बनी साधिका उस साधक की रहती ज्यों तन छाया पास।।
ऋरण था पितृ जनों का उस पर जिसे चुकाती है संतान।
इसीलिये सद्गृहिरणी अमृत तन से भी करना था पान।।

चलता रहे वंश आगे भी, कुल का दीपक ज्योति भरे।
निसंतान के पूर्वज रोते, उनको तर्पण कौन करे?
इसीलिये शुभ धर्म निभाना सहज साधना जीवन की।
सत्व समाहित रुचिर दान सा, दमक उठी आभा तन की।।

देख पैर भारी बहुअल के, तृप्ता ने पकवान बना।
घृत मिश्री मेवा फल पूरित विधिवत पौष्टिक खाद्य घना।।
जो भी दोहद इच्छा होती, सास पूर्ण करती सत्वर।
पुत्र वधू बढकर बेटी से, यही भाव निज उर में भर।।

जो उत्तम नारी होती है, पुत्रवधु से कहाँ लड़े?
वे ही भावी स्वामिन घर की, यही भाव उर बीच बढ़े।।
सास स्वयं भी पुत्रवधू थी, पुत्रवधू भी सास बने।
यह तो नियम चक्र जगती का, जो तोड़ेगा, रारि ठने।।

ननद स्वयं भी भावज होगी, यही सोच व्यवहार करे।
वह यदि दुःख दे निज भावज को, समय परे भुगतान भरे।।
जैसा करता वैसा भरता, अटल नियम है जगती का।
इधर करो सो उधर चुकाओ, संगत कहना सत्यवती का।।

जो दहेज का ताना देकर, दुलहिन को दुख देते हैं।
वे हैं पापी औ अपराधी, सबकी घृणा मोल लेते हैं।।
जो दहेज लेते, अपराधी, देते वे भी अपराधी।
जो भी सजा उचित हो इसकी, भुगते वे आधी आधी।।

अधिक दोष है पुत्र-पक्ष का, बोली लगवाता वर की।
कन्या पक्ष विवश हो जाता, नीलामी करता घर की ।।
कन्या की शादी करनी है, उसे न क्वारी रख सकते।
यही सोचकर दबते जाते, लेने वाले कब थकते ?

बात यहाँ तक बढ़ती जाती, हत्या तक कर देते हैं।
घर उजाड़कर सम्बन्धी का, निज घर को भर लेते हैं ।।
इससे बढ़कर कौन पाप है ? नीच पिशाच कमीने हैं।
जाने किस गलती से इनने, नर तन धारण कीने हैं ।।

थूको इन पर, लानत मारो, घृणा करो धिक्कार दो।
भूत प्रेत या साँप विषैले, इन्हें नरक का द्वार दो ।।
ब्याह हमारी भारत भू पर पुण्य भरा संस्कार है।
उर से उर का गठबंधन है, नहीं देह व्यापार है ।।

ऐसा ब्याह पुण्य होता है, जसा नानकदेव किया।
शुभ संस्कार सुरीति नीति शुचि, प्रेम लिया औ प्रेम दिया ।।
घर पर आदर मिला वधू को, दो पक्षों में प्रेम जगा।
जीवन भर व्यवहार हृदयहर, गरिमा शुचिता आन पगा ।।

कवि को यदि शासन मिले, वसुधा का विस्तीर्ण।
सबका समुचित मान हो, दिशि दिशि प्रेम विकीर्ण ।।
रहे न कोई भूखा प्यासा । कोई न होगा खिन्न उदासा।
सबके हों अधिकार समाना। समुचित रहन सहन शुचि खाना ।।

भेदभाव के गर्त्त पटेंगे। मानवता के मंत्र रटेंगे ।।
मातृभूमि हित वीर डटेंगे। नहीं झुकेंगे शीश, कटेंगे ।।
घर गोदाम न कभी लुटेंगे। कर्म क्षेत्र में सभी जुटेंगे ।।
कभी न होंगे कूँची ताले। सब होंगे सबके रखवाले ।।

सुखी नींद से सब सोयेंगे। ईर्ष्या द्वेष रोष खोयेंगे॥
समता की स्वर्गंगा लहरे। सबका मानस-ध्वज शुचि फहरे॥
जाति पाँति के बंधन टूटें। प्रेम-वृक्ष नव किसलय फूटें॥
सब धर्मों का सम आदर हो। अरि का नहीं किसी को डर हो॥
देश प्राण से भी हो प्यारा। प्रेमाम्बुधि कर्त्तव्य किनारा॥

कवि के प्राणों में सुधा, सिंच जाये संसार।
जीव मात्र को सुख मिले, खुल स्वर्ग के द्वार॥
समय बीतते देर क्या? पूर्ण हुये नव मास।
सुत को जन्म सुलक्षिणी, दिया अपूर्व प्रकाश॥

गृह में मंगल वाद्य बजे।
स्वस्तिक चिन्ह सुभग प्राचीरे, वंदनवार सुद्वार सजे।
नौबत घुरी नगाड़े गड़के, याचक जै जै कार करें।
चारण भाट जगा सब मिलकर, स्वर से पर्यावरण भरें॥

ले ले कर शुभ प्रम बधाई आते जन के यूथ अनेक।
कालू मग्न तृप्त तृप्ता थी, नानक उर में दिव्य विवेक॥
नामकरण के हेतु अनेकों पंडित आये।
देखा ग्रह संयोग राशि के नाम सुझाये॥

श्रीचन्द शुभ नाम सभी ने सुन्दर माना।
सुन्दर बालक चन्द्र छटा युत रमा समाना॥
सुभग भाल की रूप छटा शुभ लक्षण सारे।
नयन कलित अरविन्द सुगुण सौरभ उर धारे॥

कुल का दीपक ज्योति पुंज से किया उजाला।
कालू तृप्ता तृप्त पिया ज्यों अमृत-प्याला॥
देख गुणों का योग और भावी के इंगित।
कहा ज्योतिषी बाल बनेगा संत विश्वहित॥

नींव पड़ेगी परम उदासी सम्प्रदाय की।
परम तपस्या सतयुग के वरदान लायगी ।।
वर्ष चार छः मास बाद फिर शुभ दिन आया।
पुत्र दूसरा बालारुण सम गृह हरषाया ।।

एक गगन में एक चन्द्र ही तम को हरता।
जिस गृह में दो चन्द्र, सुधा का अम्बुधि भरता ।।
नाम लक्ष्मीदास परम समृद्धि ले आया।
फूला फला समाज सुना जिसने सुख पाया ।।

जिस प्राङ्गण में शिशु लीला हो स्वर्ग वही।
मक्खन मिश्री दाल भात औ दूध दही ।।
कहाँ स्वर्ग शुभ गृह से बढ़कर भला मिलेगा ?
शिशु आनन से बढ़कर शतदल कौन खिलेगा ?

बालक की किलकारी गूँजे जिस आँगन मे।
समझो मधुऋतु फूली शुभ मघवा कानन में ।।
बालक है भगवान, स्वर्ग उसका भोलापन।
शिशु क्रीडा हो गृहस्थ जनो को है उत्तम धन ।।

भारत ही वह देश कि जिसमें तीन लोक पति।
धर कर बालक रूप भक्त जन को देते गति ।।
किन्तु स्वर्ग तो वह घर जिसमें दो हों बालक।
दो से अधिक सदा बनते है सब सुख घालक ।।

जिनका रहे नियोजित घर वे भाग्य धनी।
बिना नियोजन मिट्टी बनती हीर कनी ।।
कई शताब्दी पहिले गुरु की दूरदर्शिता।
दो सुत जाये नारि सुलक्खिन हुई हर्षिता ।।

जो गुरु जी के अनुयायी हों, करें नियोजन।
अच्छे हों परिधान मिलेगा अच्छा भोजन ।।

किल्ल पिल्ल जिस घर में होगी दुःखी रहेगा।
सब प्रकार के घोर अभावों डंक सहेगा ।।
शिक्षा स्वास्थ्य सभी में घटिया रोगग्रस्त।
सदा तनावों में अपने से आप त्रस्त ।।

देशभक्त तो सदा करें परिवार नियोजन।
भला देवता मानें दावत खायें निज जन ।।
सदा शेरनी एक सुवन ही पैदा करती।
जिसके यश की सुरभि तीन लोकों को भरती ।।

जगत पूज्य नानक का प्राङ्गण स्वर्गोपम था।
श्रीचन्द से सुवन लक्ष्मीदास न कम था ।।
दोनों की थी जोड़ी जैसे हीरे मोती।
माता उनको निरख सभी चिन्तायें खोती ।।

हर मानव पर पाँच कर्ज ये माने जाते।
ईश कर्ज को प्रभु अर्चन कर भक्त चुकाते ।।
देशभक्त बन मातृभूमि का कर्ज उतारें।
श्री सतगुरू के कर्ज हेतु विद्या विस्तारें ।।

कर्ज पिता-माता का चुकता है उज्ज्वल संतान से।
सामाजिक दायित्व पूर्ण हो जन जन के सम्मान से ।।
शुभ संस्कार जमें बचपन से निष्ठा आस्था का संबल।
पूर्ण विकास करे मानवता, आत्मा में सद्गुण का बल ।।

बचपन से ही शुभ शिक्षा हो, देशभक्ति का हो आधार।
ऊँच नीच औ जाति पाँति का पैदा ही हो नहीं विचार ।।

एक जाति हो भारतवासी, एक धर्म हो मानवता।
एक ध्येय निज राष्ट्र-प्रगति हो, एक शत्रु हो दानवता।।

शिशुओं के उर में शिशुता से, सुन्दर शुद्ध विचार हों।
सदाचार की शुभ दीक्षा हो, निर्मल शुचि आचार हों।।
होड़ लगी हो सदा सभी में, सद्गुण के विस्तार की।
सेवा भावी हों बचपन से, आदत शुभ व्यवहार की।।

अपना राष्ट्र महान हमारा सबसे उत्तम संविधान।
गुट निरपेक्ष नीति है अपनी, सबका उर में मान समान।।
सह अस्तित्व कामना अपनी, विश्व शान्ति ही नारा है।
शोषण से हों मुक्त सभी से अपना भाईचारा है।।

शुल्क मुक्त अनिवार्य सुशिक्षा, सबको अवसर हों समान।
पुत्र पुत्रियाँ सम प्यारे हों, दोनों ही गृह के वरदान।।
विद्यालय शिक्षा स्तर में, कहीं न होवे भेदभाव।
दीन समृद्ध का भी न भेद हो पढ़ने का हो सबमें चाव।।

नैतिकता की शिक्षा देना अपरिहार्य हर स्तर पर।
हो विकास व्यक्तित्व पूर्ण का दबी शक्तियाँ खिलें उभर।।
अध्यापक सब आदर पावें, जैसे गृह में पिता महान।
शिक्षा सिखलाये कुछ कौशल, व्यावहारिक जीवन का ज्ञान।।

गुरु नानक के दोनों बेटे, अर्जित करते शुभ संस्कार।
ध्यान वंश मर्यादा का था, उपज रहे थे श्रेष्ठ विचार।।
दिनचर्या उत्तम दोनों की, सादा जीवन उर सदभाव।
देश भक्ति से ओतप्रोत थे, जीवन में सद्धर्म प्रभाव।।

समय चक्र द्रुत गति से चलता।
जो खो जाता वह ही खलता।।

पाने में उर हर्षित होता।
जगता पाता, सोता खोता ॥

दुनियां पुल है लक्ष्य न मानो।
मायामय को सत्य न जानो ॥
पल पल हरि का नाम जपो रे।
तप ही सच्चा, खूब तपो रे ॥

विषय वासना भोग विलासा।
नीर-बुलबुला, झूठी आशा ॥
क्यों करते हो कपट कमाई ?
झूठी माया क्यों भरमाई ?

र मन ! कर कुछ पुण्य काम रे।
नित्य जपो हरि पुण्य नाम रे ॥
सत श्री पुकार अकाल अनंता।
गुरुवाणी शुभ सत्य कथंता ॥

धन्य धन्य गुरु नानक देवा।
सेवा का फल मिलता मेवा ॥
जो बोलेगा अभय रहेगा।
गुरु अनुकम्पा स्रोत बहेगा ॥

दस गुरु साहिब की कृपा, सिक्ख धर्म की शान।
अमन-चैन जग में रहे, करें गुणा का पान ॥



सर्ग–12

महान त्याग

हे हृदय खो जा प्रभो के ध्यान में।
भक्ति का अमृत मिलेगा पान में।।
आत्मा की भूख मिटती ज्ञान से।
मन नियंत्रित हो सकेगा ध्यान से।।

कृपा करते है प्रभो निज दास पर।
ईश का मिल जायेगा उर पास घर।।
मत भटक तू वन, गिरों की कन्दरा।
ब्रह्म वसते सत्य की पावन गिरा।।

ध्यान कर गुरुदेव का सच्चे हृदय!
प्रकट होगे ब्रह्म तेरे उर निलय।।
नाम उसके भिन्न है वह एक ही।
पार जाने की तरी सुविवेक ही।।

सन्त जन तपते रहे जग हित लिये।
वे नही अपने लिये पल भर जिये।।
स्वर्ण से कुन्दन बने तप आग मे।
बस गई ज्यों मंत्र महिमा राग में।।

पूज्य, गुरुद्वारे जहाँ सतगुरु रमे।
मनुज उर में दिव्यता-अंकुर जमे।।
धन्य है गुरुग्रन्थ साहिब अमृतमय।
धन्य गुरु का पंथ उर को चिर विजय।।

पितृजन का ऋण चुका नानक उऋण।
ब्रह्म के ही ध्यान में वे मग्न क्षणक्षण ॥
रोज जा श्मशान में वे ध्यान करते।
भक्ति अमृत का निरन्तर पान करते ॥

नेत्र रखकर बन्द केवल मौन रहते।
"ना हिन्दू ना मुसलमान" ही मुख से कहते ॥
कृत्रिम दोनों रूप संत का आशय था।
आडम्वर से सत्यधर्म का पूरा क्षय था ॥

कहता कोई नानक तो दीवाना है।
कोई कहता भूत-प्रेत का बाना है ॥
सुनकर हुये नवाव समुत्सुक मर्म को।
काजी बनकर गया जानने धर्म को ॥

काजी बोले "हे नानक ! अब मर्म खोल।
"ना हिन्दू ना मुसलमान" क्या अर्थ बोल ?"
गुरु की आँखें खुलीं खिला ज्यों कंज सुमन।
मंद मंद स्मित चमकी ज्यों चपला घन ॥

"बैठो काजी गूढ़ मर्म की बात सुनो।
पढ़ना रहे अपूर्ण नहीं यदि उसे गुनो ॥
कोई कहता भूत प्रेत बैताल है।
कोई कहता बौराया जग जाल है ॥

प्रेमासव पीकर ही नानक बौराना।
एक धनी को छोड़ अन्य को कब जाना ?
उसकी आज्ञा मान सभी उसको दिया।
सबको त्यागा एक उसी को गह लिया ॥

फिर कहता हूँ ना हिन्दू ना मुसलमान ।
जाकर कहो नवाब मिटा लेवें अज्ञान ।।
काजी लौटा और सूचना दे दीनी ।
सुरभि महकती थी तन से भीनी भीनी ।।

पूछा काजी से यह कैसी सुरभि वही ?
लगता इससे महक उठी है सकल मही ।।
काजी बोला नहीं लगाया तेल फुलेल ।
देखा मैंने अद्भुत गुरुनानक का खेल ।।

मुख पर भारी तेज नयन में तेज पुंज ।
तन सुरभित ज्यों महक उठा हो कुन्द कुंज ।।
मेरे तन में जो सुरभि वहीं से है मिली ।
करके दर्शन हृदय प्रफुल्लित कली खिली ।।

कहता है "ना हिन्दू है ना मुसलमान ।"
शब्द एक से एक मधुर ज्यों पिकी गान ।।
सुनकर बोला "अभी बुलाओ उसे यहाँ ।
मोदी होकर भला घूमता और कहाँ ?"

शाही आज्ञा गुरु नानक के पास गई ।
हृदय-मथानी में चलती थी बुद्धि रई ।।
बोले नानक अब मैं मोदी हूँ नहीं ।
मुक्त घूम सकता हूँ चाहूँ जहाँ कहीं ।।

द्वारपाल हूँ अब मैं प्रभु के द्वार का ।
मोदी हूँ मैं उसके ही आगार का ।।
कह दो वह तो है नवाब लघु राज्य का ।
मेरा प्रभु तो स्वामी विभु साम्राज्य का ।।

ठहरो, लेकिन जग का शिष्टाचार है।
उसके ही अनुरूप उचित व्यवहार है॥
बहुत शक्ति होती है उर के प्यार में।
चलता हूँ मैं अभी राज दरबार में॥

यह कह नानक चल दिये आनन्द से।
मानों राजमराल चला गति मंद से॥
लगता जैसे कल्प सुपादप चल पड़ा।
लौकिक वात्या चक्र मध्य ज्यों गिर अड़ा॥

लगा हुआ दरबार नवाबी ठाट थे।
झुकते थे सरदार सुनिश्चित बाट थे॥
नानक पहुँचे तेज सभी का म्लान था।
उडुगन गण के बीच सूर्य अवदान था॥

शासक थे पर फिर भी सहसा उठ गये।
स्वयं झुका था शीश हुये अनुभव नये॥
देखा सबने तेजपुंज रवि रूप था।
सब भुवनों का नैसर्गिक चिर भूप था॥

लेकिन आई याद राज अधिकार की।
बदल गई वह दृष्टि रोष में प्यार की॥
बोले "नानक ! क्या गुस्ताखी कर रहे ?
"ना हिन्दू ना मुसलमान" क्यों स्वर कहे ?

करते हो अपमान धर्म इस्लाम का।
पड़े भोगना दंड दोष के काम का॥
या तो कर दो सिद्ध वचन जो कह रहे।
या फिर वापिस शब्द आज तक जो कहे॥"

नानक बोले व्यर्थ हृदय क्यों रोष हो ?
दंड दीजिये दोषी का यदि दोष हो ।।
यह सच है ना हिन्दू है ना मुसलमान ।
समय आयेगा स्वयं करोगे इसका भान ।।

तभी मिला आदेश कि मस्जिद में चलो ।
करो न वाद विवाद न हमको यों छलो ।।
पढ़ कर सत्य नमाज खुदा के धाम में ।
पुष्ट करेगा प्रेम मुसलमाँ नाम में ।।

"ना हिन्दू ना मुसलमान" वाणी कही ।
मस्जिद में चल सिद्ध करो, वह है सही ।।
नानक तत्क्षण चले बिना संकोच के ।
हिन्दू हतप्रभ हुये हृदय में सोच के ।।

बात नगर में फैली नानक क्या किया ?
हिन्दू होकर धर्म मुसलमाँ ले लिया ।।
करने अदा नमाज गया तज धर्म को ।
सबने निन्दित किया उसी के कर्म को ।।

लज्जित थे जैराम सभी की सुन रहे ।
किन्तु वचन अति शुद्ध नानकी ने कहे ।।
करो न चिन्ता देखो धीरज धार कर ।
पहुँचेगा वह कूल विपत्ति को पार कर ।।

नानक मस्ती भरे उधर मस्जिद गये ।
करने उनको कर्म अलौकिक औ नये ।।
सबने पढ़ी नमाज किन्तु वे थे खड़े ।
काजी और नवाब रुष्ट हो लड़ पड़े ।।

फल पाओगे नानक अनुचित कर्म का।
किया घोर अपमान हमारे धर्म का॥
सबने पढ़ी नमाज किन्तु तुमने नहीं।
बेअदवी को माफ धर्म करता कहीं?

बोले नानक पढ़ता किसके साथ में?
खुदा नहीं था यहाँ किसी के माथ में॥
काजी का मन ब्याई घोड़ी पास था।
क्रय कर रहा नवाब अश्व औ दास था॥

तन की कसरत को ही समझे हो नमाज।
मन की भटकन से क्या आते कभी बाज?
झुकने उठने का जो सीखा साज है।
बोलो किसका हृदय खुदा में आज है?

उड़े सभी के होश सभी हैरान थे।
अन्तर्यामी नानक के उर भान थे॥
लज्जित हुये नवाब चरण में झुक गये।
काजी के दुर्भाव अचानक रुक गये॥

लौकिक मानव नहीं अलौकिक शक्ति है।
कैसा इसका ज्ञान कौनसी भक्ति है?
धन्य हुये हम धन्य हमारा काल है।
मानसरोवर का यह मुदित मराल है॥

श्री गुरुनानक जा बैठे श्मशान में।
निज इन्द्रियों को जीत मगन थे ध्यान में॥
जपुजी सोदर और सोहिला रच रहे।
पउड़ीयों की रचना जो नित सच है।

प्रथम नियम सिक्खों के निसृत हो रहे।
नवोपलब्ध थे ज्ञान विश्व—व्रण धो रहे ।।
चरण पाहुलामृत सिक्खों को मिल रहा।
जाति पाँति से मुक्त धर्म तरु खिल रहा ।।

हिन्दू हो या मुसलमान सब एक थे।
भेदभाव से मुक्त प्रकट सुविवेक थे ।।
सिक्खों का शुभ धर्म उदित था हो रहा।
भू पर अमृत बीज ब्रह्म था बो रहा ।।

नानक थे निर्वैर मोहम्मद मुक्त थे।
लौकिक अवयव ब्रह्म तेज से युक्त थे ।।
जो जाता था शरण सिक्ख बनता वही।
सदाचार से युक्त हो रही थी मही ।।

कौन पराया ? सब जग प्रभु का रूप था।
उसका ही साम्राज्य चराचर भूप था ।।
तन धरती पर किन्तु ध्यान सहस्रारि पर।
शतदल सुरभित सुमन सुशोभित वारि पर ।।

धन्य हुये वे जीव सुदर्शन मिल गये।
मानस सरसी नीर सुनीरज खिल गये ।।
मस्तक पर थे राम दृगों में कृष्ण थे।
सभी दिशा में देव-नयन सतृष्ण थे ।।

एक गगन में दस दस सूरज उग गये।
आत्मा तो थी एक वस्त्र तन के नये ।।
निरंकार था अलख निरंजन घाट था।
इडा पिंगला मध्य सूक्ष्म का बाट था ।।

अनहद का सुर मुखर अधोमुख कूप में।
सहस्रारि का सौरभ ब्रह्म स्वरूप में।।
जोगी रमकर मग्न ऊर्द्ध आलोक में।
कोकी थी आमग्न अलोकी कोक में।।

ज्यों नीरज के सुमन भ्रमर गुंजार हो।
रव का रव था शेष वीन झंकार हो।।
था अकाल अविकार पुरुष शुचि नाद में।
सुख दुःख से था मुक्त अनश्वर पाद में।।

धन्य हुई मम लेखनी, श्री गुरु पद रज लीन।
ज्यों अगाध जल राशि में, परम अनंदित मीन।।

श्री सतगुरु नानक प्रभो, मिले यही वरदान।
वैर भाव को भूलकर, हिलमिल गायें गान।।
भाई भाई मिलि रहें, प्रेम पयोधि तरंग।
विश्व शान्ति सद्भाव शुचि, हो न रंग में भंग।।

□□

सर्ग 13

सत्यान्वेषण

संतजन बन मेघ अमृत के बरसते हैं सदा।
वे दिखाते पुण्य का ही मार्ग सबको सर्वदा।।
बैर होता है नहीं उनका किसी से भी कहीं।
संत के शुभ चरण पड़ते, तीर्थ होता है वहीं।।

धर्म कोई हो, नहीं उसमें बुरी बातें मिलें।
धर्म के शुभ स्थलों में उर-सुमन सबके खिलें।।
संत की क्या जाति होती ? वे हितू सबके सदा।
धर्म कब संकीर्ण होता ? लोक का हित सर्वदा।।

सिद्धान्त सबके एक जैसे भावना सबकी भली।
संत सबके पुण्यमय शुचि, सत्यशिव की शुभ थली।।
धन्य हैं तुलसी कबीरा, धन्य हैं रैदास नानक।
धन्य हैं रसखान सहजो, एक प्रभु के पुण्य श्रावक।।

पुण्य पैगम्बर सिखाते, हों किसी भी धर्म के।
छन्द भाषा भेद हो पर, बोल प्रभुगत मर्म के।।
कब किसी भी धर्म में पैगम्बरों ने की लड़ाई !
कब किसी ने घृणा विष की बात शिष्यों को सिखाई ?

सत्य शुभ शुचि आचरण उपकार सबका ही भला।
विश्व का बन्धुत्व ही सद्भाव बन उर में पला।।
जो कभी अनुयायी उनके पाप हिंसा को करें।
संत मन को कष्ट होता, नयन से जलकण झरें।।

संतजन के बीच श्री नानक शिरोमणि धन्य।
जगत का उद्धार कर्त्ता कौन उनसा अन्य ?
त्याग कर घर वार, सुख वैभव सुयश का धाम।
चल दिये संसार हित लेकर प्रभो का नाम॥

बहुत रोका स्वजन गण ने लोभ लालच भी दिये।
रोष जतलाया किसी ने, रुदन कर फाड़े हिये॥
श्वसुर आये सास आई अनकहीं बातें कहीं।
किन्तु वे चट्टानवत हिलते हवा से थे नहीं॥

मोह तोड़ा निज प्रिया का, पुत्र की आसक्ति तज।
जनक जननी स्वजन परिजन जन्म भू की पुण्य रज॥
तोड़ कर बंधन सभी वे चल दिये कल्याण हित।
बन गये वे स्वयं स्वामी, मुक्त विषयी, इन्द्रिय-जित॥

सत्य का शुभ पंथ निर्मित कर दिया अनुगामियों को।
सुधा का दे पान निर्मल कर दिया धन स्वामियों को॥
कर दिया निर्भीक जन को, सत्य की जय, प्रेम की जय।
सिक्ख बनकर सतगुरू के पायेंगे शाश्वत विनय॥

धर्म के रक्षक बनेंगे, देश के सब भक्त हों।
मान मर्यादा बचाने मे सुवीर सशक्त हों॥
भेद भावों को भुलाकर एक सम गुरुद्वार में।
पान अमृत का करें सब, बंधुवत संसार में॥

काल कुछ बीता श्री नानक तपस्या में लगे।
हो गये अदृश्य मर्दाना खबर लेने भगे॥
पहुँच कर सुलतानपुर में सतगुरू से मिल गये।
देख कर संन्यास बाना प्राण पंकज खिल गये॥

चरण में माथा टिकाया अश्रु जल से धो दिये।
हृदय से सतगुरु लगाया नेत्र उन्मीलित किये।।
कंठ था अवरुद्ध हिलकी बँध गईं आँसू भरे।
भाव की भाषा उमंगित प्रेम से दो उर भरे।।

हे प्रभो ! मैं ज्ञानहीना, जानता कुछ भी नहीं।
आपके ये चरण जिस थल, प्राण मेरे हों वहीं।।
पलक की करके बुहारी पंथ को मैं दूँ बुहार।
आप निर्माता जगत के आप ही हैं कर्णधार।।

समझ पाया मैं नहीं हूँ क्यों लिया संन्यास है।
क्या कमी है आपको प्रभु, और किसका त्रास है?
सब तरह के सुख मिले हैं, सब तरह आनन्द हैं।
नेकनामी यश अतुल हैं, ना कोई दु.ख द्वन्द हैं।।

स्वस्थ तन है रोग हीना, खूब धन है पास में।
अर्द्धाङ्गिनी है पतिव्रता, आनन्द है आवास में।
पुत्र आज्ञाकारिता में निष्ठ, कुल के दीप सम।
है भरा पूरा सुभग, आराम से क्या निलय कम?

है वही सौभाग्यशाली स्वस्थ तन मन पास में धन।
आचरण शुभ सद्गुणों से युद्ध विद्यावान जीवन।।
धर्म दीक्षित देश प्रेमी, सत्य शिव सुन्दर पगा।
कौन ऐसी जिन्दगी को त्याग निर्जन में भगा?

सुन रहे चुपचाप गुरुवर नेत्र मीलित दो सुमन।
प्रेम अम्बुधि उर तरंगित सुधा पूरित सघन घन।।
विहँस कर उर से सटा बोले मधुर वाणी सुभग।
मीत मर्दाना सुनो माया ग्रसित सम्पूर्ण जग।।

कौन अपना छोड़ प्रभु को ? देह भी छूट जायगी।
सम्पदा गृह भोग तृष्णा, काम कुछ ना आयगी।।
कौन उत्तर जीव देगा, ब्रह्म के सम्मुख भला।
दूत यम के ले चलें बस जीव एकाकी चला।।

काम आयेंगे न अपने ना पराये सँग चलें।
आ गये इक बार लेने दूत टाले ना टलें।।
यम करेगा एक क्षण का एक पल का भी हिसाब।
पुण्य क्या कीने बताओ, दे सकोगे कुछ जवाब ?

साथ केवल कर्म होंगे, भोगना फल अपरिहार्य।
दे सको प्रभु को सु उत्तर, कुछ करो ऐसे सुकार्य।।
धर्म नौका, जगत सागर, नाम की पतवार ले लो।
नीरमाया लोभ लहरें मुक्ति के श्रम कूल खे लो।।

पांच तत्वों का बना यह देह का शुभ पात्र है।
पाप का सब मैल निसृत, पुण्य रहता मात्र है।।
नयन से शुभ दृश्य देखो कान से प्रभुनाम सुन।
जीभ से मन भ्रमर गुंजन ही करे प्रभुनाम के गुन।।

त्वचा से रज मातृ भू की रोज ही लगती रहे।
नासिका को घ्राण सौंधी मत्तिका पगती रहे।।
पग चलें प्रभु-भक्ति के मग, हस्त से कुछ दान हों।
धन्य जीवन संतजन के वचन अमृत-पान हों।।

देश वासी देश को निज प्राण से बढकर गहें।
बाग में ज्यों विटप रहते, प्रम से हिलमिल रहें।।
हिन्द की पावन धरा यह पुण्य भू अमृतमयी।
हिन्दवासी एक बनकर हों सकें मृत्युञ्जयी।।

धर्म है तो जिन्दगी है, धर्म से संसार है।
धर्म से है स्वर्ग, पावन, धर्म सबका सार है।।
धर्म से जो हीन उसकी जिन्दगी क्या जिन्दगी ?
है वही जीवित प्रभो की रोज करता वन्दगी।।

है यही संदेश मेरा विश्व के जन एक हैं।
भेद हैं नकली सभी मस्तिष्क के अविवेक हैं।।
सब सुखी हों, प्रेम फैले, सम सभी सुख भाग हों।
अन्य के दुःख दूर करने निज सुखों के त्याग हों।।

राज करने की कुइच्छा, सब दुःखों का मूल है।
पाप है शोषण सभी के मार्ग बोता शूल है।।
है यही सर्वोच्च शासन जो हृदय पर हो सके।
है यही आदर्श हर जन नींद सुख की सो सके।।

जो बने शासक, वही सेवक बने, सेवा करे।
है यही पूँजी जो सबके कोष में मेवा भरे।।
जन जनार्दन है उसी की प्रेम से सेवा करो।
विश्व भर का हो भला ऐसी सदिच्छा उर भरो।।

ऊँच है ना नीच कोई, एक प्रभु के पुत्र हैं।
कर्म से सुपुत्र याकि बन रहे कुपुत्र हैं।।
है गरीबी बहुत अच्छी कर्म जन के श्रेष्ठ हों।
है अमीरी भी बुरी यदि कर्म करते नेष्ठ हों।।

हो गया कृतकृत्य मरदाना सुनी शुचि श्रेष्ठ वाणी।
सुधामय वर्षा जगत हित सत्य सुन्दर औ कल्याणी।।
टेक कर माथा चरण में, रज लगाई शीश पर।
आमरण बन सिक्ख गुरु का सेवकाई का लिया वर।।

नगर ऐमनाबाद पहुँचे भटकतों को पथ बताते।
दीन हीनों पर कृपा थी, धनिक-मद क्षण में दबाते।।
मलिक भागो धन-घमंडी भाई लालो दीन था।
एक घर में विभव भारी, दूसरा सब हीन था।।

भाई लालो की कुटी लघु तंग टूटी छान ऊपर।
बढ़ई का कर काम भरता था मजूरी से उदर।।
मलिक भागो रक्त-शोषक ऐश करता ठाठ से।
विषय का जल खींचता था क्रूरकर्मी घाट से।।

श्री सतगुरु थे तत्वदर्शी जानते घट घट सभी का।
मेटने अभिमान का संकल्प था उर में कभी का।।
जा टिके लालो-कुटी में, जो मिला खाने लगे।
मलिक भागो ने सुना तो रोष-घन छाने लगे।।

देख यह साधू अनाड़ी, दीन के दुःख पा रहा।
त्याग षट रस विविध व्यंजन शुष्क टुकड़े खा रहा।।
चाहता उनको चिढ़ाना, भोज भारी दे दिया।
दे निमंत्रण सतद्विज अभिमान का नाटक किया।।

भजकर सेवक निमंत्रण पहुँचवाया श्री चरण को।
हाय रे अभिमान जिससे भूल जाता नर मरण को।।
कहलवाया मधुर भोजन पूड़ियाँ हलवा बना है।
बैठने को तख्त मसनद, शीश वातायन तना है।।

धता देकर रुक्ष टुकड़े, माल खाने को पधारें।
लात मारें झोंपड़ी में, महल के आनन्द धारें।।
है महा लज्जाजनक यदि दीन कुटियाँ में रहेंगे।
जो सुनेंगे इस कदम की, भर्त्सना के स्वर कहेंगे।।

संत अज्ञानी जनों के दर्प को निर्मूल करते।
और करके स्वच्छ उर को, सद्गुणों का सार भरते
इसलिये श्रीमान नानक, मलिक भागो के न आये।
रोष से जलते मलिक ने छद्म के साधन जुटाये ।।

जब अनेकों बार उसने हठ किया निज गृह बुलाया।
तो गये गुरुदेव नानक, वह घमंडी पास आया ।।
साथ में चाकर अनेको, स्वर्ण के थे पात्र भारी।
शुद्ध घृत का मिष्ट हलवा, पूड़ियाँ खस्ता करारी ।।

स्वर्ण भारी में सलिल औ पान, पापड़, फल मिठाई।
झल रहे पखे सु चाकर, उड़ रही सौरभ सुहाई ।।
मलिक भागो था सुसज्जित ऐंठ में अकड़ा हुआ।
धर्म से अति दूर ईर्ष्या द्वेष में जकड़ा हुआ ।।

गर्व से फूला हुआ बोला गिरा अति दर्प की।
यों लगा मानों विषैली फूत्कारी सर्प की।।
देख लो अब स्वयं नानक, ठाट मम आवास के।
भूल पाओगे नही ये स्वाद भोजन ग्रास के ।।

किन्तु नानक ने छुआ तक भी नहीं निज हाथ से।
संत का मन ऊबता था दुर्जनों के साथ से ।।
कह उठे इसको हटाओ, आ रही दुर्गंध है।
पाप की है यह कमाई, कर चुकी मद अंध है ।।

मलिक भागो कह उठा यह दोष है, झूँठा सरासर।
रुक्ष टुकड़े उस भिखारी के कहाँ इसके बराबर।।
तभी नानक ने मँगाया लालो के घर जो बना।
लालो श्रद्धा से झुका था भागो था ऐंठा तना ।।

एक कर में पूड़ी हलुआ, दूसरे में रोटियाँ।
रोटियों से दूध, हलुआ से रुधिर औ बोटियाँ॥
दृश्य देखा सब जनों ने, रोटियों में फूल थे।
किन्तु हलुवा पूड़ियों में अति नुकीले शूल थे॥

भाई लालो मग्न मन में, मलिक भागो हाँफता।
एक था निर्भीक निर्मल, दूसरा भुरि काँपता॥
जन समूह अवाक था, सतगुरु का चेहरा दृप्त था।
दीन का मानस सुशीतल, धनिक उर अति तप्त था॥

दृश्य अब भी साफ दिखता, रोटियों से दुग्ध धारा।
रक्त हलुआ पूड़ियों से, बह रहा ज्यों हो पनारा॥
कह उठे गुरुदेव अन्तर देख लो तुम निज नयन से।
शुद्ध कौड़ी श्रेष्ठ होती शोषकों के अतुल धन से॥

धनिक शोषण कर रहे अति दलित दीन अशक्त का।
जोंक तज कर दुग्ध थन का पान करती रक्त का॥
जो किसी को कष्ट देकर धन कमाते हैं यहाँ।
जायँगे परलोक में जब, सब चुकाना है वहाँ॥

भूलते हैं अंध मद के कर्म-फल अनिवार्य है।
दुग्ध जल सम न्याय होगा, हंस का सा कार्य है॥
बीज बोते जो बबूलों के मिलेंगे शूल ही।
आम खाने की जो इच्छा वह भयानक भूल ही॥

आग पर अँगुली रखोगे क्यों न वह जल जायगी।
यदि हलाहल घूँट लेगी जीभ वह बल जायगी॥
है प्रकृति का न्याय जैसा कर्म वैसा फल मिलेगा।
झाड़ झौंकट में भला नीरज सुमन कैसे खिलेगा?

है मिलावट, तोल कम या भाव महँगा, पापकारी।
सूद लेना, घूँसखोरी, दूसरों को कष्ट कारी।।
झूँठ वाणी, शपथ झूँठी, झूँठ की देना गवाही।
आज या कल या कि परसों लायेगा भारी तवाही।।

जो गरीबों का गला हैं काटते निज स्वार्थवश।
नरक के हकदार बनते, लोक में पाते कुयश।।
धन जुटाना पाप से या कपट छल पाखंड से।
बच न पायेंगे किसी विधि रवि-तनय के दंड से।।

धन किसी के साथ तो परलोक में जाता नहीं।
महल घोड़े हाथियों को साथ ले जाता नहीं।।
भोग वैभव बुलबुले हैं कब मिले कब मिट गये।
हाय इनके हाथ फिर क्यों व्यर्थ ही तुम पिट गये?

हाय प्राणी! भाग्य से नर देह तुझ को मिल गई।
ईश अनुकम्पा किरण से प्राण कलिका खिल गई।।
है उसी का सब दिया, उसको ही फिर देना पड़े।
क्यों हिलाता दुम किसी को क्यों किसी से तू लड़े?

धन मिले तो दान कर दे, पुण्य कर्मों में लगा।
यदि किया संचय तो वह तेरा नहीं होगा सगा।।
यदि मिली है शक्ति तो इससे करो उपकार ही।
हैं विनाशक द्वेष-हिंसा, सृजन करता प्यार ही।।

जीव सबही प्यार के हित, मार मत सबको जिला।
हृदय में सागर सुधा का, भेद बिन सबको पिला।।
यदि हँसाया एक भी रोते हुये को प्यार से।
कोटि पुण्यों का मिले फल, पार हो संसार से।।

दीन हीनों में सदा भगवान वसते रीझकर।
गले से उनको लगा ले, दूर मत कर खीज कर।।
धन दिया तो क्या दिया, सत्कार देकर कुछ दिया।
यार-सेवा दे सके तो, जान लो सब कुछ दिया।।

धन कभी संचय करो मत, दुर्गुणों की खान है।
देश जन औ धर्म के हित खर्च करना मान है।।
मत करो अभिमान वर्ना मूल से मिट जाओगे।
सब सुखी होंगे तभी तुम भी सुखी रह पाओगे।।

जो हुई असमानता वह ही कलह की मूल है।
दूसरों का छीन कर अपना बनाना भूल है।।
द्वेष बढ़ता और फिर हिंसा भड़कती जोर से।
नींद कर देंगे असंभव दीन अपने शोर से।।

हम सभी उतना रखें जितना जरूरी चाहिये।
हितयुक्त जीने के लिये ही खाद्य उत्तम खाइये।।
जी रहे जो मात्र खाने के लिये वे जन नहीं।
साँस लेती मौत है वह, कह सकें जीवन नहीं।।

अधिकतम का अधिकतम् ही हो भला यह ध्येय है।
दूसरों के हित ही जीना, जिन्दगी का श्रेय है।।
न्याय हो सबको सुलभ, सबको प्रगति अवसर मिलें।
देश उपवन में सभी बन सुमन कलिकायें खिलें।।

आयेगा वह काल जब कट जायेंगी सब बेड़ियाँ।
सब बराबर देशवासी मिट सकेंगी श्रेणियाँ।।
लोक का कल्याणकारी राज्य होगा हिन्द में।
धर्म सब फूलें फलेंगे ऊर्मियाँ ज्यों सिन्धु में।।

शासकों औ शासितों का भेद तब होगा नहीं।
व्यर्थ वह स्वातंत्र्य जिसको सर्व ने भोगा नहीं।।
जन का, जन के ही लिये, जन के ही द्वारा राज्य हो।
जन विरोधी भावना ही हर हृदय से त्याज्य हो।।

किन्तु वह स्वातंत्र्य मांगे अनगिनत कुर्बानियां।
अर्थ, सुविधा, प्राण तक की हो सकेंगी हानियां।।
सिक्ख मेरे कमर कस लो, देश हित तैयार हो।
भेद भावों को भुलाकर, मातृ भू का प्यार हो।।

आओ गुरुद्वारा खुला है, पान अमृत का करो।
भेद भाषा धर्म वर्गों के न निज उर में भरो।।
चाहे हिन्दू या मुसलमां पारसी या जैन हो।
सबके उर मे देश भक्ति, कठ में मृदु बैन हो।।

सिक्ख मेरा वह ही होगा, भेद से ऊपर रहे।
शस्त्र रक्षा हित उठावे, देशहित सब दुःख सहे।।
देश की चिर-एकता में ही अडिग विश्वास हो।
साम्प्रदायिक क्षेत्र में सद्भाव का उल्लास हो।।

देख लो हे पुत्र मेरे, याद रखना सब कहीं।
सिक्ख के उज्ज्वल चरित पर दाग लग जाये नहीं।।
जब कभी आये जरूरत प्राण देना देश को।
मत लजा देना कभी तुम सिक्ख के शुभ वेष को।।

देश अपना बाग है इसके सुमन है हम सभी।
देश अक्षय कोष इसके कीमती धन हम सभी।।
देश सुन्दर हार हम सब कीमती नग है जड़े।
ना कोई छोटे है हममें ना कोई हम में बड़े।।

हरित तरुवर भरित उपवन फूल सब खिलते रहें।
श्रम सलिल से सिंचिता सबको सुफल मिलते रहें॥
सब लहें सुख भाव सम, सब हों सुखी, सम्पन्न हों।
कोई ना मारे किसी को, भेद ना उत्पन्न हों॥

आओ सब धर्मों के लोगो! प्रेम से हिलमिल रहें।
ना सहो तुम ही दुःखों को, और ना हम ही सहें॥
कह चला हूँ मैं सभी से, भूल मत जाना कभी।
मिल के खेओगे जु नौका, पार पहुँचोगे तभी॥

आयेंगे तुमको लड़ाने, ओर पासों से अनेक।
फूट डालेंगे भिड़ाने, किन्तु मत खोना विवेक॥
कुछ हमारे ही हमीं को घात करने आयेंगे।
गैर तो बस कान में ही फूँक दे बहकायेंगे॥

देख भारत की प्रगति को जल उठेंगे धूर्त जन।
नाक अपनी काट कर भी वे बिगाड़ेंगे शकुन॥
पास में कुछ देश ऐसे ही बनेंगे एक दिन।
सत्य समझाना उन्हें होगा बहुत भारी कठिन॥

चाहिंगे उत्पन्न करना सब उरों में भेद वे।
खाइंगे जिसमें उसी पत्तल में कर दें छेद वे॥
वे घृणा हिंसा अराजकता से जलाने देश को।
आयगे असफल बनाने शान्ति के उद्देश्य को॥

देश के टुकड़े कराने का करें षड़यन्त्र वे।
कुटिल देशों की दुराशा का बनेंगे यन्त्र वे॥
साफ मेरी दूर दृष्टि देखती उस काल को।
विष उगलते देखता हूँ नाशकारी व्याल को॥

उस समय सच्चे सिक्खों की अग्निमय होगी परीक्षा।
याद रखना आज जो मैं दे रहा हूँ सत्य दीक्षा॥
कुचल देना व्याल को तुम एकता के शस्त्र से।
जीत लेना दुश्मनों को अहिंसा के अस्त्र से॥

इस तरह गुरुदेव ने, सब काल देखे ज्ञान से।
हाथ पर ज्यों आँवला हो, देख लीना ध्यान से॥
पंथ जो शुभ सत्य का था, आत्म गौरव युक्त था।
वह सिखा अनुयायियों को, ईश ऋण से मुक्त था॥

रोग मुक्त जीवन तत्काल।
डस नहीं सके काल का व्याल।
खण्ड विखण्डित माया जाल।
बक से बनकर मंजु मराल॥

मित्र सँघाती, अरि का काल।
सदा रखेगा ऊँचा भाल॥
जो बोले सो होय निहाल।
कहो सभी सत् श्री अकाल॥

[७]

सर्ग–14

कारागार

हरि रूप वसा जिन नेत्रन में, फिर कौन से रूप की चाह रही ?
गुरुद्वारे की राह मिली जिनको, फिर कौन से धाम की राह रही ?
जिन शीश सु नानक हाथ रखा, तरु कौन की वांछित छाँह रही ?
भगवान ने हाथ गहा जिनका, फिर कौन की चाहत बाँह रही ?

मन याद करो उन संतन को जिनने जन का दुःख दूर किया।
तन होम दिया तप घोर किया जग को शुचि जीवन मूर दिया।।
जिस काल में घोर अनर्थ हुये, जन हत्या हुई सब सत्व लुटा।
उस काल में वाणी सुनाई खरी, जब दीनों के कंठ में नाद घुटा।।

अतिचार अनर्थ कुकर्म बढ़े, तब धर्म की आन विनष्ट हुई।
शुभ धर्म का नाश हुआ जग से, सब लोगों की बुद्धि भी भ्रष्ट हुई।।
वह ऐमनावाद पठान का वास बनाकर घट पाप का पूरा भरा।
अति दीन जनों की तबाही करी, तन जीवित था मन रोया मरा।।

बदले की जली उर आग पली, तब बाबर ऐमनावाद चढ़ा।
गुरुदेव थे देख रहे शुचि ध्यान से, ज्ञान का सिन्धु अनंत बढ़ा।।
द्वय नेत्र किये जब बंद तो अन्तर चक्षु खुले वह दृश्य दिखा।
तलवार से काटते क्रूर क्रिया वह रक्त से रंजित दृश्य दिखा।।

कल ही तो कटेंगे विलासी पठान सो दृश्य गुरुजी को दीख गया।
निज भक्त हृदय–शुचि लालोजी वास में जाकर दे दी प्रीतमया।।
सबको निज ज्ञान का लाभ दिया फिर मार्ग में जाकर स्वयं डटे।
फिर भी न विलासी भगे न जगे वे ही खूनी के शस्त्र के वार कटे।।

निज अश्व की पीठ सवार हुआ, तलवार हवा में उड़ाता हुआ।
जब बाबर मार्ग से जाने लगा, उसका निज हाथ से माथा छुआ ।।
उस काल कहा अब लौट पड़ो मत खून सरोवर डूबो अरे।
जो भी औरों को मारते 'वे क्या जिये, उनसे भी अगाऊ वे स्वयं मरे।

हे रे बाबर! वीरता रक्षण में,
नहीं हिंसा में जीत, सो ध्यान करो।
सही जीत हृदय की ही होती अरे।
उपकार में प्यारे स्वयं मरो ।।

यदि चाहते तोष तो प्रेम करो,
सबके उर प्रेम-पीऊष भरो।
भगवान के लोक में लेखा सही,
इस सत्य को तत्क्षण ध्यान धरो ।।

यदि दे न सको, फिर लूटो नहीं,
यदि रक्षण होवे न, भक्षण क्यों ?
यदि जीवनदान असभव है,
फिर जीवन-हानि कुलक्षण क्यों ?

यदि प्रेम-पीयूष पिला न सको,
फिर द्वेष-हलाहल वर्षण क्यों ?
यदि वक्ष से वक्ष मिला न मिलो,
फिर शस्त्र से काया का घषण क्यों ?

अनीति के पथ पर जो भी चला,
वही नीचे गिरा, कब ऊँचा गया ?
यदि बोये किसी ने बबूल धरा,
वही शूलन छेदन आप छया ।।

सुन बाबर न्याय निसर्ग करे,
नाँही कोप अकारण नाही दया।
रुक जाओ विचार करो मन में,
सुभाव का अनुभव होगा नया॥

गुरुदेव खड़े कर ऊँचा किये,
नहीं साहस बाबर आगे बढ़े।
गिरिराज बिराजा हो ऊँचा जहाँ,
कब साहस वारि-प्रवाह चढ़े?

क्षण म्लान हुआ फिर क्रोध किया,
असि धार या साधु के कंठ कढ़े!
पर वार हुआ नहीं हाथ उठा,
सब ठाढ़े ज्यों चित्र के बीच मढ़े॥

ऐसी हालत देख के संत हँसे, फिर बोले चलो हम साथ चलें।
हम बंदी हैं आप ही लेके चलो, जो भी कर्म के पादप आप फलें॥
सुन बाबर जो भी हो काराकड़ी, हम शीत गलें याकि आग जलें।
तुम छोड़ दुराग्रह पीछे हटो, सत्कर्म के नीड़ में पुण्य पलें॥

बाबर दई दहाड़, पकड़ो मारो, काट दो।
कत्ले आम मचाओ, लाशों से घर पाट दो॥
जिन्दा बचे न कोय, बालक वृद्ध जवान हो।
नर नारी पशु बेल तरु, कायर हो बलवान हो॥

मारो काटो फूँक दो, कर दो मटियामेट।
जीवित कोई ना बचे, करो काल की भेंट॥
टूट पड़ो हल्ला करो, अल्ला हो अकबर कहो।
काफिर-कत्ले आम हो, हिंसा-दरिया बन बहो॥

कैसी चिड़िया है दया, है कोरी बकवास।
जर जोरू औ सब जमीं, जोरदार के पास।।
आग लगा दो, फूँक दो, लूटो लूटम लूट।
काल बनो, खूँखार हो, काल कूट के घूँट।।

मल्ला हो अकबर कही, मचा दिया उत्पात।
काटे मारे जल गये, बाकी रहा न पात।।
गुरु नानक ऐसे खड़े, जैसे हो गिरिराज।
कोई वार न कर सका, नभ गुंजित आवाज।।

नानक मेरा दून है, यह मेरा अवतार।
कष्ट झेल कर खेल कर, करे जगत उद्धार।।
यही बचाये धर्म को, मर्यादा शुभ नीति।
घृणा जहर को दूर कर, सत्य धर्म से प्रीति।।

जो धर्मी वे सुन सके, पापी सुनी न बात।
पकड़ संत को ले गये, किये क्रूर उत्पात।।
डाले कारावास में, रक्षक अति उद्दंड।
भोजन पानी बन्द कर, दिये दुसह्य तन-दंड।।

सतगुरु अपनी ज्योति जगाई।
ऐसी ज्योति जगत में अब तक कभी न दिखी दिखाई।
घोर अँधेरा काली कारा, पहरे पर असि-धारी।।
सहसा फूटी तम-घन-भंजन, विद्युत द्युति छवि न्यारी।।

चकित हुये सब बंदी कैदी, भौचक्के रखवारे।
जैसे कोटि दीप द्युति दमकें, रवि-शशि अनगिन तारे।।
क्षीर सिन्धु में वडवानल हो, या अरण्य दावानल।
जठरानल त्रिभुवन का संचित, या ताण्डव कोपानल।।

हाय हाय ध्वनि हुइ कहीं पर, कहीं सुनी ध्वनि जय जय।
नाद अकाल पुरुख सत श्री का, जो बोले सो बने अभय ।।
जय सतगुरु जय जय श्री नानक, धन्य निरंकारी निर्भय।
गूँज उठी त्रिभुवन नभ जल थल, वाहि गुरुजी की जय जय ।।

सतगुरु छेड़ी तान अनूठी।
अब आई इकतारा गुंजित, रही रागिनी रूठी ।।
ऐसी मीठी तान कि जैसे कृष्ण चन्द्र की बजी मुरलिया।
या बसन्त की अमराई में कूँकी कोई मुग्ध कोइलिया ।।

ऐसा स्वर था सामवेद के दिव्य कंठ से फूटा हो।
या कि सुधा का सिन्धु-कूल ही अनायास घर टूटा हो ।।
वरदगिरा की बाजी वीणा, नारद की तुम्बी का स्वर।
यक्ष और गंधर्वों की विद्या का ज्यों प्रवाह सत्वर ।।

जैसे कोई उर्मि उठी हो क्षीर सिन्धु में लहराई।
या पावन गंगा की धारा स्वर्ग लोक से भू आई ।।
जिसने सुना वही मोहित था, कारा के पट स्वतः खुले।
जितने प्रहरी मुग्ध मंत्र से, कर्णों में ज्यों सुधाघुले ।।

बजी रबाब मुग्ध मरदाना।
गुरु का स्वर ज्यों ब्रह्म नाद था, रचा सृष्टि का ताना बाना।
बंदी चक्की पीस रहे थे, छोड़ हथेला झूम गये ।।
स्वयं घूमने लगी चक्कियाँ, देखे कौतुक नये नये।

प्रहरी मग्न नियम सब भूले, धन्य धन्य के नाद हुये।
हरे भरे हो गये लता द्रुम, उजड़े घर आबाद हुये ।।
दूत खबर दे दी बाबर को, देवदूत था कारा में।
तत्क्षण बंदी मुक्त हो गये, बहे प्रेम की धारा में ।।

भाँग लिये आ पहुँचा बाबर, माथा टेका ले उपहार।
श्री सतगुरु ने सत्य बताया, भाँग नहीं कीनो स्वीकार ।।
बाबर ! भक्ति-भाँग का नशा हमारा।
हम नही पीते चरस तमाखू, विषय-नशा नहीं लिया सहारा ।।

गाँजा चंडू मद्य-नशा तो, रात चढ़ा तो प्रात उतरता।
हम तो नशा करें हरिनामी, तन गद्गद् मन प्रेम प्रखरता ।।
तन में राम भरा वह मन में, राम नाम की देह चदरिया।
राम नाम की पावन वर्षा, निशि दिन करती भक्ति बदरिया ।।

राम वही है, कृष्ण वही है, वही बना अकबर ताला।
मस्जिद में तुम बनो नमाजी मन्दिर में तुलसी माला ।।
गुरुद्वारे में सतगुरु प्यारा, गिरजाघर में ज्योति वही।
क्यों लड़ता अज्ञानी बाबर ! नर से नर में भेद नहीं ।।

बनते हो अल्ला के बन्दे, करते हो हत्या निर्द्वन्द्व।
लूटपाट औ रक्तपात के पूर रहे हो भारी फन्द ।।
हिन्दू मुस्लिम सिक्ख इसाई, बौद्ध पारसी जैन सभी।
एक पिता की सन्तानें है, शोभा देगा युद्ध कभी ?

जाओ पछताओ कर्मों पर, नेकी कर दरिया में डाल।
धर्म कवच धारो तन मन पर, क्या कर लेगा काल कराल ?

फिर माथ नवाकर बाबर ने,
श्री सतगुरु का गुणगान किया।

जिनको अपमानित पूर्व किया,
फिर उनका गहरा मान किया ।।
सुन सुन कर वाणी प्रेम भरी,
अतुलित अमृत का पान किया।
कर जोड़ खड़ा फिर सेवक सा,
मनने नेक नहीं अभिमान किया ।।

बोला वह बाबर सतगुरु से,
क्यों नीचों के संग में आप रहें?
तुम लीना जन्म कुलीन के वंश में,
क्यों फिर पातक शीश धरें?
तुम क्षत्रिय हो रविवंश के अंश,
सो शासक हो के विलास करें।
तकदीर में भोग तो भोगो उन्हें,
जिन्हें मौत है श्वान की वे ही मरें।
सुन वाणी भरी अभिमान से नानक,
थोड़े हँसे फिर बात कही।
कुछ ध्यान करो परमेश्वर का,
जिनके बल मानव देह गही॥
उस ईश्वर का जो भी लेखा मिले,
उसमें ही रहे निज वाणी भली।
उस लेखे में भोजन वारि गहें,
उस बीच ही साँसों की खेती पली॥
उसमें ही चलो उसमें ही सुनो,
उसमें ही लखो फिर पार लगो।
उसमें ही निशागत नींद गहो,
उसमें ही दिवागत जीना जगो॥
कहते तो सभी हम नेक बड़े,
कहने से बड़ा कोई होता नहीं।
च बात तो ईश्वर एक बड़ा,
निज मान जो हर क्षण खोता नहीं।

सब छोटों में एक मैं छोटा हुआ,
फिर कौन है कारण दूर रहूँ ?

निज बंधु औ बांधव पास रहें,
फिर व्यर्थ क्यों दूरी का कष्ट सहूँ ?
जिनके मन गर्व बड़प्पन का उनसे,
तो भला उर प्रेम कहाँ ?

भगवान की संतति छोड़ भला,
मिल पाता है जीव को क्षेम कहाँ ?
सुन तथ्य की बात श्री मुख से,
सब शान्त हुये चुपचाप गये।

शुभ संत गये निज आसन पास,
औ आप के ध्यान में आप गये ।।
वह कूप अभी तक लालो निवास में,
देख सको निज माथ झुका।

गुरु द्वारा अभी तक रोड़ी सुसाहिब,
कौन से काल का चक्र रुका ?
सम्राट विशाल प्रदेश का बाबर,
देखा वह सत्य तो चिन्ता चढ़ी।

इस संत को कारा में डाल के मूढ़,
की कौनसी लौकिक कीर्ति चढ़ी ?
अल्लाह को कौन जवाब से उस दिन,
तुष्ट करूँगा जो पूछा गया।
अपनाना ही होगा सुनीति से युक्त,
युक्त पवित्र सुन्यासी सुमार्ग नया।

बावर, सतगुरु-चरण गहे।
शरण आपकी आया प्रभुवर ! हृदयंगम जो वचन कहे ॥

अब मैं हिंसा नहीं करूँगा, मद्यपान होगा अब बंद।
स्वर्ण रजत के पात्र हटेंगे, दूर हटेगा कटु छल छंद ॥
महलों में भी ईश वंदना, सतोगुणी होगा व्यवहार।
हिन्दू-मुस्लिम भाई भाई, बद करूँगा अत्याचार ॥

शोषण कटु अन्याय भेदवृत, सभी हटेंगे भेद बिना।
दुर्बल के हाथों को रोटी नही सकेगा सबल छिना ॥
धन्य भाग्य महाराज आपने सत्य दिखाया कृपा निधान।
शुभ आशीष प्रदान कीजिये, मानवता का हो सम्मान ॥

तब श्री नानक ने कर रक्खा, बावर को उपदेश दिया।
नारकीय हिंसायुत जीवन, प्रेम भक्ति में बदल दिया ॥
संत सभी का भला चाहते जो निज त्रुटि स्वीकार करे।
पुण्यों से दूषित जीवन भी, पावन हो सद्भाव भरे ॥

श्री नानक सतगुरु की जय जय।
जगहित किया प्रयाण अभय ॥
दुर्जन सही मार्ग पर आये।
जन को उसके ध्येय बताये ॥

सीधा शुभ शुचि मार्ग बताया।
भू पर स्वर्ग उतरकर आया ॥
राष्ट्र एकता के उन्नायक।
सद्भावों के अमर विधायक ॥

☐

सर्ग–15

जनोद्धार

ब्रह्म तुमको नमन कवि के प्राण का।
माँगता वरदान जग के त्राण का॥
सब तुम्हारे अंश हैं जो जीव हैं।
जड़ जगत के तत्व जो निर्जीव हैं॥

बिछुड़ कर यह आत्मा तुमसे दुःखी।
मिल सकेगी फिर, तभी होगी सुखी॥
बुन्द अम्बुधि से बिछुड़कर खिन्न ज्यों।
है दुःखी यह अंश कुल से भिन्न त्यों॥

भटकना है चक्र में अविराम ही।
जब तलक पाती नहीं निज धाम ही॥
बिछुड़ना अज्ञात पर संस्कार वश।
मिलन तप के श्रेय का अमृत सुयश॥

आत्माओं में भला क्या भेद है?
अंश अंशी सर्वथा निर्भेद है॥
योनि मिलती भिन्न जैसे कर्म है।
भिन्न रचना, भिन्न तन के धर्म है॥

कर्मफल को भोगना अनिवार्य है।
आत्म का उत्थान मौलिक कार्य है॥
ज्ञान उत्तम मिल सकेगा ज्ञेय भी।
सही है यदि पंथ मिलता ध्येय भी॥

है अनेकों मार्ग दिशि दिश जा रहे।
ज्ञान के बिन जीव धोखा खा रहे ।।
जीव पर होती कृपा जब ईश की।
संत बनते मूर्तियाँ जगदीश की ।।

इसीलिये आये मसीहा और पैगम्बर महा।
इसलिये तप-कष्ट उनने निज शरीरों पर सहा ।।
पी गये विष दे सकें अमृत जगत को।
त्याग सब कुछ ले लिया संन्यास व्रत को ।।

धन्य होती है धरा जब संत आते।
भटकते जो जीव उनसे राह पाते ।।
धन्य जग के भाग्य नानक संत आये।
भटकतों ने मार्ग पाया, ध्येय पाये ।।

चल दिये गुरुदेव जग उद्धार करने।
निज तपस्या से जगत का कष्ट हरने ।।
गये तलवंडी न भूले जन्म भू को।
कभी न सेवा के सुअवसर हेतु चूको ।।

हर्षमय थी मात तृप्ता पिता कालू।
आ गये मिलने पिता के अनुज लालू ।।
जनक जननी लालसा थी वे रुकें।
त्याग कर संन्यास गृहस्थी में झुकें ।।

किन्तु सतगुरु लोकहित ही तप रहे।
रातदिन प्रभुनाम तन्मय जप रहे ।।
वह उठे अब जगत सेवा धर्म मेरा।
सत्य पथ निर्माण करना कर्म मेरा ।।

चाहता मैं देश सेवा विश्व सेवा।
ईश सेवा से मिलेगी मुक्ति मेवा॥
तप बिना कल्याण जग का है नहीं।
सत्य ही तप और मुक्ति है वहीं॥

नेक हो अपनी कमाई शुद्ध मन।
दीन सेवा तोष सबसे कीमती धन॥
सब करे निज काम लेकर पूर्ण रुचि।
कार्य का कौशल कहाता योग-शुचि॥

सुलखिनी से भी कहूँगा प्रेम से।
जोड़ ले नाता जगत के क्षेम से॥
पुत्र दोनों भी बनें सेवाव्रती।
देश रक्षा के लिये निर्भय- व्रती॥

धर्म रक्षा हित करें निज प्राण अर्पण।
यह बने सर्वोच्च उनका ईश—तर्पण॥
हे पिता! हे मात! शुभ आशीष दो।
पीड़ितों के हित हृदय में टीस दो॥

चाहता हूँ सब जनों को सुख मिले।
विश्व के बंधुत्व की कलिका खिले॥
फिर गये मिलने को राय बुलार से।
वृद्ध भेंटे उर सदाशय प्यार से॥

कहा "हे नानक जगत आधार हो।
विश्व के हित ब्रह्म के अवतार हो॥
पंथ होगा विश्व के कल्याण का।
कर रहे शुभ कार्य जग के त्राण का॥

जो चलेंगे पंथ पर विजय बनें।
विश्व पर सुख शान्ति की छाया तन॥
चल दिये गुरुदेव फिर सुलतान पुर।
बहिन बहनोई मिलन का हर्ष उर॥

नानकी ने अर्घ्य दे स्वागत किया।
कह उठे जै राम दर्शन शुभ दिया॥
नानकी उर जानती अवतार है।
हाथ में लघु बदरवत संसार है॥

देह धारी है प्रभो के कर्म को।
तप करेगा यह बचाने धर्म को॥
लोक की शुभ रीति निर्वाहित रहे।
हर क्रिया से विश्व का शुभ हित रहे॥

मेघ अमृत के घिरेंगे अति घने।
पान लेगा सुधा का जो सिख बने॥
चल दिये वे संत जग उद्धार को।
कर रहे विस्तीर्ण शुचि व्यापार को॥

एक ऐसा काल भू पर आयेगा।
हर जगत का जीव सद्गति पायेगा॥
होगी नहीं हिंसा न ईर्ष्या द्वेष जग।
सब चलेंगे पैर बढते धर्म मग॥

शक्ति को नहीं सत्य माना जायेगा।
उचित ही सत्कार सबका पायेगा॥
इस तरह नानक बढे ज्यों सूर्य हो।
विश्व के कल्याण को ज्यों तूर्य हो॥

देखती ही रह गई भगिनी भली।
रवि किरण का साथ कैसे दे कली ?
साथ मरदाना चला तजकर सभी।
साथ तन का त्यागती छाया कभी ?

सामने रावी नदी थी वह रही।
अनगिनत युग की कथा सी कह रही ।।
प्रकृति के जो गूढ़अर्थी वर्ण थे।
सुन रहे गुरुदेव के शुभ कर्ण थे ।।

सोच ले मानव कि जीवन क्यों लिया ?
यदि नहीं शुभ कर्म कोई भी किया ।।
वह रही हूँ मैं अनेकों वर्ष से।
पूर्ण हूँ निर्लिप्त दुःख या हर्ष से ।।

किन्तु फिर भी देखती सब कुछ रही।
बात कितनी उर-भरी है अनकही ।।
शुभ अशुभ औ पुण्य पापों की कथा।
हर्ष का उल्लास उर की कटु व्यथा ।।

युग युगों की साक्षी हूँ जो हुआ।
प्रगति के गिर, पतन के गहरे कुआ ।।
खूब देखे मनुज कितने सुर बने।
पुण्य के शुभ धाम वातायन तने ।।

खूब देखे देवता वनते असुर।
उजडते वसते रहे नर दनुज सुर ।।
छीनना देखा, लखा वलिदान भी।
दुर्वलों के हित मरे वलवान भी ।।

जन्म ले अनगिन मरे विस्मृत हुये।
जी रहे फिर भी अनेकों मृत हुये।।
किन्तु देखे कुछ अमर भी हो गये।
धर्म के हित ही जिये फिर खो गये।।

उदर के हित जो जिये वे क्या जिये?
कर्म निज हित के किये तो क्या किये।।
आज युग युग बाद किसके पग बढ़े?
मनुजता से दिव्यता—सीढ़ी चढ़े।।

त्याग कर सख भोग बढ़ता कौन यह?
भर रहा सद्धर्म रीता भौन यह?
मुख कमल पर ज्ञान रवि का ओज है।
निखिल जग के शिवं की ही खोज है।।

मार्ग बनता जा रहा सद्धर्म का।
बन रहा प्रतिमूर्ति सच्चे कर्म का।।
है नहीं वाणी सुनाऊँ भारती।
धन्य है पाकर तुम्हें माँ भारती।।

छू लिये मैंने चरण, आगे बढ़ो।
धर्म के सर्वोच्च शिखरों पर चढ़ो।।
चल दिया युग पुरुष जग हित बढ़ गया।
उदयगिरि से मध्य नभ पर चढ गया।।

श्वास में प्रभु का परम आदेश था।
विश्वफर को शान्ति का सन्देश था।।
कर रहे मुलतान को सुप्रयाण थे।
विश्व सेवा में समर्पित प्राण थे।।

एक दिन ठहरे हड़प्पा नगर में।
सुमन सरसित होगये समुदाय सर में ।।
दूसरे दिन तुलंवे में वास था।
जो नियत भावी हृदय आभास था ।।

एक था निकृष्ट नर पर नाम सज्जन।
ठगी करके लूटता था रोज धन ।।
ऊपरी व्यवहार भारी मिष्ट था।
अतिथि से सवाद में भी शिष्ट था ।।

मोह कर मन रोक लेता रात को।
हृदय संकल्पित ठगी औ घात को ।।
एक मन्दिर एक मस्जिद वास में।
खाने पीने की व्यवस्था पास में ।।

अतिथि सत्कारक विनय ज्यों मूर्त्त था।
किन्तु उर में कपटकर्त्ता धूर्त था ।।
रात्रि में कर घात प्रा.ों का हनन।
छीन लेता कीमती सामान धन ।।

गाड़ देता देह भू में काट कर।
कौन उससे बच सका उस बाट पर ।।
अब तलक हत्या ठगी अनगिन करीं।
कीमती धन से तिजूरी थीं भरी ।।

लालची का मन कभी भरता नहीं।
जो मिले, संतोष वह करता नहीं ।।
अन्तर्यामी जानते उर की कथा।
दुःखी होते देख कर जन की व्यथा ।।

हो रहा जो नियति का भवितव्य था।
पतित का 'उद्धार हो मन्तव्य था॥
जानकर ही टिक गये उसके निलय।
साथ मरदाना सदा का श्रद्धामय॥

आ गया ठग कपट का व्यापार ले।
घात उर में पर वचन में प्यार ले॥
"मैं हूँ सज्जन ठहरिये आराम से।
पाइये सुविधा सभी इस धाम से॥

मैं उपस्थित जो भी सेवा हो, कहो।
रात भर विश्राम करने को रहो॥
"ठीक है, हम ठहरते तेरे यहाँ।
ऐसी सुविधा और मिलती है कहाँ?

धन्य पाकर आज तेरा प्यार मैं।
हृदय में सोचा करूँ उद्धार मैं॥
चतुर था वह, साज सब तैयार था।
छुरे से करना गले पर वार था॥

रोज का अभ्यास मुश्किल कुछ नहीं।
काट कर बस गाड़ देना था वहीं॥
जानता क्या था कि घूमा चक्र था।
आज का संयोग ही कुछ वक्र था॥

था सहज उसके लिये व्यापार ।
किन्तु विधि को था नहीं स्वी
पात मरदाने ने
छेड़ दो र ार

गीत वे गाने लगे मृदु नाद में।
खो गया सज्जन अनूठे स्वाद में॥
बोल कुछ ऐसे कलेजे में गये।
हो गये अनुभव उसे अतुलित नये॥

बात जो गुरु ने कही उस पर लगी।
पाप में जो सुप्त आत्मा अब जगी॥
गाया स्वर "कुछ घड़े चिलके ऊपर से।
अन्तर में विष भरा स्वयं जलते ज्वर से॥

धोबी भी वह मैल न धो पाता कभी।
तत्क्षण होगा भस्म जुटाया जो सभी॥
अरे देख, मत मोहित हो सेमल का फल।
भरी हुई है रुई तुम्हारा श्रम निष्फल॥

लगा रहा जो आग जला देगी तुम्हें।
स्वयं मरा है कैसे मारे आज हमें॥
उठे न प्रस्तर एक उठाने चला अचल।
चिड़िया चाहे पैर थाम ले नभ बादल॥

मत्कुण चाहे फूंक उड़ा दे गिरवर को।
गोदन्ना की इच्छा पी ले सागर को॥
विष यदि चाहे सुधा वुन्द को भस्म करे।
चिनगारी की टक्कर पाकर सूर्य मरे॥

असि चाहे जलधार काटना वार से।
पुष्प पंखुडी तोड़े शमी प्रहार से।
कर के विष का पान अमरता चाहता॥
जल सीकर भी तप्त तवे को डाहता॥

अहि बढ़ता है खगपति के कर मोंचने।
शशा चला मृगपति की त्वचा खरोंचने ॥
हाय बुद्धि धिक्कार न समझी सार को।
सार त्याग कर गहती निपट असार को ॥

नाम श्रेष्ठतम् कर्म क्रूर निकृष्ट हैं।
क्यों न बुद्धि बल यश उच्चाशा भ्रष्ट हैं ॥
ज्यों ज्यों सुनता शब्द न जाने क्या हुआ।
दुर्बल उर का मर्म अचानक जा छुआ ॥

घृणा हृदय में निज जीवन से हो गई।
प्रबल लोभ की इच्छा उर से खो गई ॥
घबड़ा कर सतगुरु के उसने पग गहे।
टूटे फूटे शब्द किसी विधियों कहे ॥

शरण आपकी नाथ ! दीन—रक्षा करो।
भारी संकट आन पड़ा है द्रुत हरो ॥
मैं पापी हूँ बहुत पाप मैंने किये।
धन छीना औ प्राण साथ में ले लिये ॥

हाय आपकी हत्या का भी था विचार।
कैसे होगा नाथ पतित जन का उद्धार ॥
रोते रोते हिलकी उसकी बँध गई।
महा प्रायश्चित की स्थिति यह निपट नई ॥

जब कैसा भी पापर गलती मान ले।
है भारी अपराध इसे वह जान ले ॥
करे प्रायश्चित सच्चे मन से दीन हो।
तो वह निज पापों से तत्क्षण हीन हो ॥

देख रहे थे नानक उर की वेदना।
भाव नेह से बुद्धिवह की छेदना॥
मानों था हिमखंड भार मन पर घना।
गल कर निकला नयन द्वार से वह छना॥

लगता जैसे तप्त लोह जल में गिरा।
शीतल होकर निज स्थिति में पुनः फिरा॥
बोले परम दयालु विश्व गुरु प्रेम से।
जैसे जग कल्याण मिला जन क्षेप से॥

उठो, धैर्य धर, आगे का संकल्प लो।
निज करनी से भिन्न अखण्ड विकल्प लो॥
अब न करोगे जैसा अब तक है किया।
पुण्य कर्म में खर्च करो जो धन लिया॥

बाग लगाओ, कूप, धर्मशाला सुघर।
गृह हीनों औ दीनों को बनवा दो घर।
विधवा, बाल अनाथ, अपाहिज औ अन्धे।
ऐसे दुखिया नहीं मिलें जिनको धन्धे॥

भूख टूटे वृद्ध, भिक्षु आते जो निर्धन।
उनकी सेवा करो लगाकर सच्चा मन॥
बनवा दो चटशाला, और कुछ गो शाला।
वृक्ष लगाओ नवयुवकों को श्रम शाला॥

जन जन में भगवान करो आराधना।
जीव मात्र कल्याण हेतु शुचि साधना॥
जो धन अर्जित किया भयावह पाप से।
उसे करो वर, तभी बचोगे, शाप से॥

आगे जीवन सत्य अहिंसा से चले।
प्रभु इच्छा से पाप हिमालय भी गले॥
बोला सज्जन "धन्य भाग्य मेरे अहो।
आज्ञा पालन शत-प्रतिशत जो अब कहो॥

सब धन होगा खर्च पुण्यमय कर्म में।
सदा रहेगी आस्था सच्चे धर्म में॥
यह कहकर वह सिक्ख गुरु का हो गया।
पापों का तम ज्ञान सूर्य से खो गया॥

सचमुच ही वह सज्जन बन लम्बा जिया।
तिल तिल कर सर्वस्व धर्महित दे दिया॥
इतना कर गुरु देव, दक्षिणायन हिले।
शेख ब्रह्म था पाक पटन उससे मिले॥

महापुरुष विख्यात अजोधन नाम था।
बाना गहा फकीरी शुचितम् काम था॥
गये तपस्या क्षेत्र प्रेममय चाव से।
मिले संत से संत सत्य के भाव से॥

शेख ब्रह्म सानी फरीद दसवीं पीढ़ी।
बढे ब्रह्म की ओर पार करते सीढी॥
नानक-दर्शन दिये अंजोधन मग्न थे।
बातचीत में परम अर्थ संलग्न थे॥

"नानक सर" गुरुद्वारा निर्मित है वहाँ।
दो संतों ने ज्ञानवार्ता की जहाँ॥
कुरुक्षेत्र की पावन भू पर पहुँच गये।
सूर्यग्रहण मेले में जन समुदाय छये॥

तीर्थ यात्री अनगिन पूजा पाठ करें।
बैठे नानक डेरा डाला घाट पर ।।
जगह जगह पर छिड़ा हुआ शास्त्रार्थ था।
सुनकर देखा किन्तु लगा वह व्यर्थ था।।

कौवे के सम कांव-कांव थी छिड़ रही।
रानी बनकर मूर्ख मंडली भिड़ रही ।।
नानक देने सत्य ज्ञान लीला रची।
आग जलाकर रख दी भारी देगची ।।

उसमे आमिप पूर खुला मुँह रख दिया।
पंडित दल ने देख रोपयुत भाव दिया ।।
है भारी धिक्कार तीर्थ मे वास है।
लेकिन देखो पका रहा यह मांस है ।।

कैसा ढोंगी ? वेप साधु का खान क्या ?
ऐसा नर का जग में होगा मान . क्या ?
हाय ! हंत ! ऐसों का क्या विश्वास है ?
कुरु क्षेत्र मेले में पकता मांस है !

नानू पंडित बोले "तुमको शर्म है ?
ऐसा तेरा वेप और यह कर्म है !"
नानक बोले "किस भापा में बोलते ?
मर्म बात का किस कारण नहीं खोलते ?

आपत्ति अरे इतनी ही पकता मांस क्यों ?
ऐसा करते हुये तीर्थ में वास क्यों ?
लेकिन भाई तुम जीवित हो मांस से।
रूप लिया है तन ने इसके वास से ।।

देखो मां का गर्भ मांस का रूप है।
मरना भी तो उसका भिन्न स्वरूप है॥
मिला पिता का मांस मात के मांस से।
जीव विनिर्मित हुआ जुड़ा फिर सांस से॥

अस्थि चर्म औ मांस तत्व हैं देह के।
ये ही बदले रूप द्रवित या स्नेह के॥
बनी मांस की जीभ, मांस में हीं सांसा।
कर्ण मांस के बने और निर्मित नासा॥

यौवन पाकर सभी मांस को ब्याहते।
मांस उपजता उसी मांस को चाहते॥
पांड़े जी तुम नहीं जानते, क्यों कुतर्क?
स्वयं हो रहे मांस नशे में आज गर्क॥

नानू पंड़ित क्या उत्तर दें, झुका दिया निज माथ।
कहा साथियों से यह योगी, तीन लोक का नाथ॥
सबने जोड़ हाथ नमन कर शीश का।
मानों उस दिन सत्य प्रकट जगदीश का॥

कुरुक्षेत्र से थी गुरु नानक, पहुँचे द्रुत करनाल।
सूफी शेख फकीर कलंदर अली बजाता गाल॥
बोले गुरु मस्त हैं कलंदर, पूछा ऐसा कैसे?
परमेश्वर को सम्बोधन कर बोले समझो ऐसे॥

वही कलंदर कहलाता है हरि के रंग रंगा हो।
और प्रेम की करी उपेक्षा हरि के प्रेम पगा हो॥
ठुकरा दिया जगत का प्याला हरि का लीना प्याला।
वहीं कलन्दर कहलाता जो हरि रस पी मतवाला॥

मन मन्दिर तन वेष कलंदर घर ही तीर्थ बना है।
एक शब्द प्राणों में रहता, सौरभ सकल सना है ॥
जीव सभी प्रभु पद में जाते, सभी चित्त अविनाशी।
कौन कलन्दर इसमें बढ़कर, प्रभु घट घट के वासी ॥

लज्जा हुई शेख को भारी कसकर चरण गहे।
क्षमा करें अज्ञान गुरु जी, उत्तम शब्द कहे ॥
अभी तलक ठठियारा में गुरुद्वारा शोभा पाता।
मंत्री साहब कहलाता है उच्च भाव उपजाता ॥

गुरुवर फिर पानीपत पहुँचे, शेख टटँहरी पाये।
शेख शरफ के अनुयायी वे ताहर अली कहाये ॥
चर्चा चली धर्म क्या होता, कैसा बानक प्यारा ?
जीवन का उद्देश्य कौनसा, साधन कौन सहारा ?

बोले शेख "बाल क्यों रक्खे, शीश नहीं मुड़वाया ?
क्यों लम्बी दाढ़ी रक्खी है, क्यों न इसे छिलवाया ?"
बोले नानक "सिर मुड़वाना या ठोड़ी छिलवाना।
कोई अर्थ नहीं रखता जो नहीं सत्य को जाना ॥

सिर ठोड़ी मुड़वाने से तो मन मुड़वाना अच्छा।
भीतर की दाढ़ी मुड़वाना यही धर्म है सच्चा ॥"
प्रश्न किया फिर शेख टटँहरी, मन कैसे मुड़ता है ?
अन्तर दाढ़ी क्या होती है, क्या घटता जुड़ता है ?"

गुरुवर बोले 'मन की इच्छा रूपी बाल बढ़े हैं।
बिना सफाई मैल जमा है अन्तर बीच सड़े हैं।
कैंची हैं उपदेश गुरु के, इच्छा बाल मुँड़ाओ।
भोग लालसा अन्तर-दाढ़ी, त्याग उस्तरा लाओ ॥

ऊपर ऊपर करो सफाई अन्दर मैल जमा है।
सही पता रक्खो जो अन्दर खोया या कि कमा है।।
संत वही होता जो पहिले मन का मैल छुड़ा ले।
अन्तर जो बंधन जकड़े हैं उनमें स्वयं तुड़ा ले।

गया टूट अज्ञान शेख का ज्ञान सूर्य का उदय हुआ।
झूठा जो अभिमान विलय था, उर अन्तर में सदम हुआ।
बहुत समय तक सेवा करके सिक्ख बना गुरुदेव का।।
दर्प नष्ट हो चुका, शान्त चित्त हर्षित उर अतएव था।

फिर पहुँचे हरिद्वार गुरु जी, गये गंग के घाट पर।
पाखण्डो को दूर हटाने, डेरा डाले बाट पर।।
सूरज चढ़ता पूर्व दिशा से, लोग भीड़ में खड़े हुये।
पितृों को पानी देने की अपनी अपनी धुनि में अड़े हुये।।

ऐसी अंध प्रथा को तोड़ें, नानक उर की अभिलाषा।
किन्तु नहीं मानेंगे जड़ ये, समझाने की मृदु भाषा।।
इसीलिये था नाटक रचना, तर्कों से समझाना था।
भूले भटकों को कौशल से सही मार्ग पर लाना था।।

नानक पश्चिम ओर मुड़े फिर पानी लगे उछालने।
देख देख कर भीड़ जुड़ी यह कौतुक लगे निहारने।।
पूछ लिया जिज्ञासु जन ने, बाबा यह क्या करते हो?
पश्चिम दिशि में जल देकर, कोष कौनसा भरते हो?

नानक बोले "देखो भाई! खेतों को जल देता हूँ।
खूब फसल हो जाये ऐसी, मन अभिलाषा लेता हूँ।।"
पूछा, "कितनी दूर खेत हैं, नानक बोले दो सौ कोस।"
"फिर कैसे जल पहुँच सकेगा, है कुछ तुमको इसका होश

"अच्छा भाई ! यही बताओ, कितनी दूर तुम्हारे पितृ ?
जिनको पहुंचाते हो तुम जल पता बताओ उनका मित्र।"
बोले "वे तो स्वर्ग लोक में, कोस करोड़ों इस थल से।।"
"फिर कैसे वे तृप्त बनेंगे, अंजलि भर पटके जल से ?

यदि यह जल जो तुम देते हो, पहुंच सकेगा कोस करोड़।
मुझे माफ दो, सौ कोसों पर पहुंचाने की करनी होड़।।
तुम तो, अंजलि भर के जल से, लोक दूसरा भरते हो।
हम भरते हैं इसी लोक को, फिर क्यों अचरज करते हो ?"

क्या उत्तर देते बेचारे, लगे देखने मुख की ओर।
तर्क अकाट्य सुना गुरु वर का, बद हो गया सारा शोर।।
समझ गये यह सिद्ध पुरुष है, या कोई अवतार है।
जो कुछ कहा समझने का है, चुनना इससे सार है।।

सबने माथा टेका पग में, बारम्बार प्रणाम किया।
नानक ने उपदेश दिया जो उसको उर में थाम लिया।।
नानक बोले सुनो भाइयों, धर्म कर्म की अंजलि भर।
ढोंग अंध विश्वास त्याग कर, सच्चा तर्पण मन से कर।।

ब्राह्मण को संतोष चाहिये, वेदज्ञों को ईश्वर ज्ञान।
जोगी धारें ब्रह्मचर्य को, गृहस्थी धोर शुभ ईमान।।
राजा न्याय करे सबके संग, व्यापारी के भाव सही।
कोई कभी न जले किसी से, उर में हो दुर्भाव नहीं।।

गये गुरु जी घाट दूसरे, माला जपते कुछ पाये।
कर में मनका घूम रहा था, मन में भारी भरमाये।।
बगुला भगत बने बैठे थे मन कुविचारों में संलग्न।
तीर्थधाम में पाप धो रहे, घर घर काम क्रोध में मग्न।।

ऊपर ऊपर करो सफाई अन्दर मैल जमा है।
सही पता रक्खो जो अन्दर खोया या कि कमा है।।
संत वही होता जो पहिले मन का मैल छुड़ा ले।
अन्तर जो बंधन जकड़े है उनमें स्वयं तुड़ा ले।

गया टूट अज्ञान शेख का ज्ञान सूर्य का उदय हुआ।
झूठा जो अभिमान विलय था, उर अन्तर में सदय हुआ।
बहुत समय तक सेवा करके सिक्ख बना गुरुदेव का।।
दर्प नष्ट हो चुका, शान्त चित्त हर्षित उर अतएव था।

फिर पहुंचे हरिद्वार गुरु जी, गये गंग के घाट पर।
पाखण्डों को दूर हटाने, डेरा डाले बाट पर।।
सूरज चढ़ता पूर्व दिशा से, लोग भीड़ में खड़े हुये।
पितृों को पानी देने की अपनी अपनी धुनि में अड़े हुये।।

ऐसी अंध प्रथा को तोड़ें, नानक उर की अभिलाषा।
किन्तु नहीं मानेंगे जड़ ये, समझाने की मृदु भाषा।।
इसीलिये था नाटक रचना, तर्कों से समझाना था।
भूले भटकों को कौशल से सही मार्ग पर लाना था।।

नानक पश्चिम ओर मुड़े फिर पानी लगे उछालने।
देख देख कर भीड़ जुड़ी यह कौतुक लगे निहारने।।
पूछ लिया जिज्ञासु जन ने, बाबा यह क्या करते हो ?
पश्चिम दिशि मे जल देकर, कोप कौनसा भरते हो ?

नानक बोले "देखो भाई ! खेतों को जल देता हूँ।
खूब फसल हो जाये ऐसी, मन अभिलाषा लेता हूँ।।"
पूछा, "कितनी दूर खेत हैं, नानक बोले दो सौ कोस।"
"फिर कैसे जल पहुंच सकेगा, है कुछ तुमको इसका होश ?"

"अच्छा भाई ! यही बताओ, कितनी दूर तुम्हारे पितृ ?
जिनको पहुँचाते हो तुम जल पता बताओ उनका मित्र ।"
बोले, "वे तो स्वर्ग लोक में, कोस करोड़ों इस थल से ।।"
"फिर कैसे वे तृप्त बनेंगे, अंजलि भर पटके जल से ?

यदि यह जल जो तुम देते हो, पहुँच सकेगा कोस करोड़ ।
मुझे मात्र दो सौ कोसों पर पहुँचाने की करनी होड़ ।।
तुम तो अंजलि भर के जल से, लोक दूसरा भरते हो ।
हम भरते हैं इसी लोक को, फिर क्यों अचरज करते हो ?"

क्या उत्तर देते बेचारे, लगे देखने मुख की ओर ।
तर्क अकाट्य सुना गुरु वर का, बंद हो गया सारा शोर ।।
समझ गये यह सिद्ध पुरुष है, या कोई अवतार है ।
जो कुछ कहा समझने का है, चुनना इससे सार है ।।

सबने माथा टेका पग में, बारम्बार प्रणाम किया ।
नानक ने उपदेश दिया जो उसको उर में थाम लिया ।।
नानक बोले सुनो भाइयों, धर्म-कर्म की अंजलि भर ।
ढोंग अंध विश्वास त्याग कर, सच्चा तर्पण मन से कर ।।

ब्राह्मण को संतोष चाहिये, वेदज्ञों को ईश्वर ज्ञान ।
जोगी धारे ब्रह्मचर्य को, गृहस्थी धोर शुभ ईमान ।।
राजा न्याय करे सबके संग, व्यापारी के भाव सही ।
कोई कभी न जले किसी से, उर में हो दुर्भाव नहीं ।।

गये गुरु जी घाट दूसरे, माला जपते कुछ पाये ।
कर मे मनका घूम रहा था, मन में भारी भरमाये ।।
बगुला भगत बने बैठे थे मन कुविचारों में संलग्न ।
तीर्थधाम में पाप धो रहे, घर घर काम क्रोध में मग्न ।।

पूछा उनसे श्री नानक ने "क्यों मनका कर फेर रहे ?"
बोले "ईश्वर का जप करते, उसको ही हम टेर रहे।"
गुरुवर बोले व्यर्थ क्रिया यह, जब तक मन एकाग्र नहीं।
व्यर्थ दिखावा क्यों करते हो ? ईश्वर हित तुम व्यग्र नहीं ॥

नेक कर्म कर, सत्य वचन कह, शुद्ध कमाई सदा करो।
सदा बाँटकर खाम्रो पीम्रो, कष्ट पराया सदा हरो ॥
क्या रक्खा है इस माला में, मन की माला शुद्ध जपो।
विद्या पाम्रो, सद्गुण छाम्रो, श्रम का तप ही सदा तपो ॥

लाकर सबको सत्पथ पर फिर आगे बढ़े पुण्य के धाम।
ज्योति दिखानी थी सब जग को करने थे उज्ज्वलतम् काम ॥
गुरुद्वारा श्री ज्ञान गोदड़ी उनको] याद दिलाता है।
जो जाते हैं माथ टेकने, प्रभु से उन्हें मिलाता है ॥

भगवान नानक धन्य थे, वे धन्य जन, दर्शन किये।
सन्मार्ग पर लाने जगत को, सत्य वचनामृत दिये ॥
जो जन जपेंगे नाम सतगुरु पार कर देंगे तरी।
भगवान मेरे देश की हर शाख हो सुमनों भरी ॥

धन्य धन्य गुरुदेव, ब्रह्म रूप ही दीखते।
काजी औ बादशाह भी, सत्य ज्ञान शुभ सीखते ॥
धन्य लेखनी धन्य कवि, धन्य धन्य यह काव्य।
भारत भू को विविधता, रहे एक्य संभाव्य ॥

□□

सर्ग १६

धर्म प्रचार

जय धर्मदेव की प्राण-तत्व जीवन का।
शुभ पंच तत्व के नियम सम्पुटित मन का॥
जब पंचतत्व से रचना होती तन की।
तब प्रकटित होती शक्ति वायु से मन की॥

फिर अग्नि तत्व से सूक्ष्म मनीषा जगती।
नव संवेदन की क्रिया सलिल से पगती॥
जो भूमि तह स्थूल अनावृत अवयव।
वे नभ से लेकर नाद दिव्यता का रव॥

जब मातृगर्भ में तेज पिता का पलता।
जो तमोगुणी संस्कार भार सो जलता॥
जब तन निसृत हो आता जगत निलय में।
तब रजोगुणी संस्कार उदात्त विलय में॥

फिर सत का रहता शुद्ध स्वरूप अनूठा।
पर माया गर्हित तत्व बनाती झूठा॥
बस इसी बिन्दु से नव संस्कारी काया।
यह शुद्ध चेतना तत्व फन्द में आया॥

यदि आस्तिकता का भाव वंश से लीन्हा।
औ पर्यावरण विशुद्ध जीव ने चीन्हा॥
तो बनता शुचितम भाव प्राण में तन्मय।
फिर सतत साधना करती उसको चिन्मय॥

जो धारण करता जीव धर्म वह होता।
फिर सिंचित करता इसे कर्म का सोता॥
यदि जीव धर्म से हीन, दुःखारी भारी।
जल जाती रजतम आग पुण्य की क्यारी॥

फिर विना धर्म के कौन सहारा देता?
उर दुर्बल होकर टूटी नौका खेता।
जब आता है तूफान डूबती नैया।
तब विना धर्म के कोई नहीं खिवैया॥

सद्गुण के अंकुर धर्म विना मुरझाते।
यदि धर्म-उर्वरा मानस सद्गुण छाते॥
ससारी वैभव धर्म विना विप वनते।
अवगुण के कलुप वितान स्वतः ही तनते॥

उर का सच्चा सुख, शान्ति धम से आते।
ऐसे नर जग में स्वर्गिक आभा लाते॥
उनके उर में अमृत का अम्बुधि भरता।
वह जीव मात्र को सुख दे, पीड़ा हरता॥

जब तक मानव के साथ धर्म की छाया।
वह अजर अमर है सत् चित् आनंद पाया॥
यह सूक्ष्म विवेचन है जन जन को दुर्लभ।
इसलिये कर्म की व्याख्या बनती संभव॥

निज कर्म करे जो उचित भावना रख कर।
वह कर्म कुशलता धर्म रूप इस भू पर॥
वह योगी होता, सही कर्म जो करता।
निज निर्मल मानस बीच शिवं को भरता॥

वे जग हित कारी सत इसी को आते।
जन जन को देकर ज्ञान धर्म समझाते ।।
इस हेतु युगों में अवतारी अवतरते।
वे जन जन के उर धर्मभाव शुचि भरते ।।

गुरु नानक कलियुग मध्य ईश अवतारी।
वे घूम घूम कर सब दिशि धर्म प्रचारी ।।
उनके जीवन का ध्येय सत्य दिग्दर्शन।
अर्पित कर दीना जगत हेतु तन मन धन ।।

उनके प्रचार का ढंग अनूठा भारी ।।
वे दिखलाते प्रत्यक्ष चकित नर नारी ।।
वे तर्क: पूर्ण शैली में सार बताते।
वे दुग्ध सलिल को पृथक पृथक दिखलाते ।।

जब कर में कंगन कौन आरसी चाहा।
लख सत्य अनल में कूड़ा कर्कट स्वाहा ।।
जो कहते उसको वे करके दिखलाते।
केवल देकर उपदेश नहीं रह जाते ।।

था नव नितान्त यह ढंग सत्य समझाना।
जाकर जन जन के पास प्रत्यक्ष दिखाना ।।
जब वार्ता करके बात सत्य जँच जाती।
तो उसको लेते मान बात जो भाती ।।

जिसने नानक के सत्य करिश्मे देखे।
फिर कसे कसौटी तर्क शुद्धता लेखे ।।
जब हटता पर्दा ढोंग दिखावट छल का।
तब सत्य दीखना कर्म मात्र था पल का ।।

अनगिन जन प्रतिदिन चमत्कार लखते थे।
वे आँख फाड़कर चकित मुग्ध तकते थे॥
जब बात समझ में आती सत्य प्रकट था।
तब बनते उनके सिक्ख प्रेम उत्कट था॥

जितने उस युग में मुल्ला जोगी पंडित।
पाखंडी ढोंगी आदर्शों में खंडित॥
वे लूट लूट कर अज्ञानी जन जन को।
करते थे शोषण संचय गर्हित धन-को॥

हर क्षेत्र क्षेत्र में भ्रष्टाचारी शोषक।
बन रहे अधर्मी पाप पुंज के पोषक॥
जनता का रक्षक दृष्टि नहीं था आता।
जिसका करते विश्वास वही डस जाता॥

थे शासक जालिम जुल्म बहुत थे ढाते।
थे कर्म अशुभ, शुभ कर्म दृष्टि नहीं आते॥
थे दुःखी बहुत पर राह न उनको कोई।
अति तड़प तड़प कर सबकी आत्मा रोई॥

इसलिये जगतहित नानक आगे आये।
ले धर्म ज्योति वे राह दिखाने धाये॥
करना था धर्म प्रचार सत्य का सौदा।
जीवन के गज पर सत्य धर्म का हौदा॥

इसलिये उदासी सकल जगत हित कीन्हीं।
सब दिशा सुधारों हेतु संत ने चीन्हीं॥
थी प्रथम उदासी पूर्व दिशा हित साधी।
लानी थी सच्चे मार्ग मनुजता आधी॥

सम्बत पन्द्रह सौ चउअन से पैंसठ तक।
थे पूर्व-उदासी हेतु भ्रमण सीमा तक॥
कर ब्यास नदी को पार गोइन्दी वाला।
फिर अमीशाह खलड़ाह घविंडी नाला॥

दे चले धर्म का दीप जाहमन-चाहल।
थे सुजन भाटड़े नरोआ सेवा का थल॥
बैठे रोड़ी पर रोड़ी साहिब द्वारा।
कर चले तमस में धर्म ज्योति विस्तारा॥

जिस ओर गुरु जी जाते ज्योति बिखरती।
अज्ञान तमिस्रा हटती पुलकित धरती॥
सब जीव जन्तु भी हो जाते सुखियारे।
सब हर्षित नारी पुरुष दुखार्णव तारे॥

करते धर्म प्रचार बढ़े वे आगे।
पुर रहे दसों दिशी सत्य धर्म के धागे॥
फिर पहुँचे दिल्ली यमुना सरित किनारे।
मजनूं टिल्ला पर सतगुरु आसन धारे॥

उस समय सिकन्दर लोधी करता शासन।
अति हिन्दू धर्म विरोधी उसका मन धन॥
वह करता अत्याचार धर्म बदलाता।
जो नहीं बदलता उसका शीश उड़ाता॥

अनगिन जन बंधक भोग रहे दुःख कारा।
वह अतिशय क्रोधी क्रूर अदय हत्यारा॥
जब दूतों ने यह कहा संत इक आया।
उसने यमुना के तीर सुआसन पाया॥

वह हिन्दू है औ धर्म धुरन्धर भारी।
अतिशय है ज्ञानी, ध्यानी धर्म प्रचारी।।
जो उसकी सुनते बात, भक्त बन जाते।
सब निर्भय होकर गीत ब्रह्म के गाते।।

लोधी को भारी क्रोध, आग सी दहकी।
सब विकृत था व्यवहार, बात अति बहकी।।
बोला काजी से जाओ, पाठ पढ़ाओ।
अपमान करो औ मुश्क बाँध कर लाओ।।

काजी भी था धर्मान्ध निर्दयी निर्मम।
सेना ली पैदल गज रथ उष्ट्र तुरंगम।।
दे दिया हुक्म इस काफिर को घर पकड़ो।
यह जितना अकड़े तुम भी दूने अकड़ो।।

बैठे थे नानक शान्त जलधि की शोभा।
या मघवा कानन कल्पद्रुम की शोभा।।
थे मुख मंडल पर रवि शशि उज्ज्वल तारे।
सब ओर स्वर्ग शोभा के क्षितिज प्रसारे।।

लगता था जैसे आदि विधाता बैठा।
मन मानस भीतर सत्य रत्न पैठा।।
अन्दर बाहर से शान्त दीप की लौ सम।
ज्यों सत्चित आनँद प्राप्त विखण्डित माया भ्रम।।

उस प्रथम दृष्टि में काजी भी स्तंभित।
ज्यों सुधा बुंद से विष ज्वाला परिरंभित।।
ज्यों शीतल जल से अग्नि ज्वाल हो रोधित।
किंवा मंत्रों के बल से पुणिधर कीलित।।

जैसे अमृत फल खाकर असुर रुका हो।
शिव प्रतिमा सम्मुख रावण शीश झुका हो॥
टकरा गिरिवर में मुष्टा मल्लिय का भार हो।
या कर्ण-कवच से टकरा टूटा शर हो॥

ज्यों सूरज ओर उठा हो भिड़ने दीपक।
या गरुड़ जीतने हेतु चढ़ा हो शठ वक॥
ऐसे ही नानक ओर बढ़ा वह काजी।
पर अविकल थी वह शक्ति अनिन्द्य विराजी॥

बोला वह काजी शहंशाह बुलवाते।
यदि रुष्ट हुये तो फाँसी पर चढ़वाते॥
तुम जल्दी चलकर भूल कबूल करोगे।
तो बच सकते, ननु मौत अकाल मरोगे॥

नानक मुस्काये जैसे फूल खिला हो।
या वैश्वानर को आहुति दान मिला हो॥
या कल्प वृक्ष का किसलय ज्योति पगा हो।
किंवा अम्बुधि-में बाडव तेज जगा हो॥

बोले वे जैसे मंत्र कुत्स मे फूटे।
या मर्म प्रकृति के ज्ञान-कुंजिका लूटे॥
किंवा नारद की वीणा का शुचि स्वर हो।
या क्षीरोदधि की निर्मल स्वरित लहर हो॥

हे काजी जाकर शहंशाह, समझायें।
यदि मिलना चाहें, स्वयं यहीं पर आवें॥
हम नहीं किसी के दास सिवा ईश्वर के।
वे शहंशाह है स्वामी अपने घर के॥

संतों को कोई अधिक न कोई कम हैं।
राजा, काजी या भिक्षु उन्हें तो सम हैं।।
कह दो तुम उनको आना हो तो आवें।
हम को उनसे नहीं काम अतः क्यों जावें।।

हतप्रभ था काजी आत्मग्लानि में गलता।
वह लौट पड़ा था रोष अग्नि में जलता।।
आकर उसने सुल्तान खूब बहकाया।
नानक को देने दंड बहुत उकसाया।।

सोधी होकर के तप्त-तवा भन्नाया।
चढ़कर हाथी पर यमुना तट पर आया।।
थे संग शस्त्रधारी भारी दल बल भी।
थी बुद्धि भ्रष्ट औ उर में भारी छल भी।।

नानक बैठे थे जैसे कुछ न हुआ हो।
चिन्ता भय का लवलेश न प्राण हुआ हो।।
गरजे सेनापति "उठो, बंदगी करने।
या हो जाओ तैयार श्वानसम मरने।।"

बोले नानक "जो श्वान वही गुर्राता।
जो स्वय मर चुका, इतर मारने आता।।
जो दल बल लेकर आया कितना कायर?
पशु बल पर करता गर्व वही पशु भू पर।।

हो चाहे राजा, काजी या सेनापति।
करता वह जैसे कर्म मिलेगी तद्गति।।
कोई देखे ना देखे ईश्वर लखता।
अत्याचारी का अन्त पलटता तरता।।

लोधे का आहत गर्व क्रोध घन फूटा।
ज्यों गगन मध्य से जलता उल्का टूटा॥
बोला "क्यों करते तुम प्रचार नव मत का?
है मृत्युदंड फल राजद्रोह हिम्मत का॥"

नानक फिर बोले "शहंशाह अभिमानी!
तू नहीं अनुभवी या किंचित भी ज्ञानी॥
आ बैठ प्रेम से सत्य दर्श करवायें।
जो शासक के कर्त्तव्य ध्यान मे लायें॥"

कुछ ऐसा जादू हुआ क्रोध ज्वर उतरा।
बन गया प्रेम का कोष हृदय द्रुन सतरा॥
वह उतरा गज से चरण निकट आ बैठा।
मानों हो हिंसक जीव तपोवन पैठा॥

गुरू बोले माया मोह अंध यह जग है।
सूझे क्यों इसमें धर्म-अधर्मी मग है॥
यह है शासक का धर्म न्याय मिल पावे।
बलवान नहीं दुर्बल का तन मन खावे॥

जो शासक बनकर अत्याचारी होता।
भावी जीवन में नरतन आशा खोता॥
जिसके शासन में प्रजा दुखारी होती।
उसके मन की सुख शान्ति सदा को खोती॥

शासक होता है सेवक सच्चे मन से।
वह जन की सेवा करता तन मन धन से॥
जैसे फूलों का रस मधु मक्खी लेती।
वह नही जरा भी कष्ट पुष्प को देती॥

फिर उस रस को भी मधु में परिणित करती।
संसार हेतु ही सुधा कोष में भरती।।
है स्वार्थ गौण, परमार्थ प्रमुख संचय का।
है नहीं दान में भय प्राणों के क्षय का।।

शासक भी थोड़ा "कर" ले सकता जन से।
पर भोग नहीं कर सकता जन के धन से।।
बस उसे राज्य के हित में सदा लगाये।
उससे वह सबके लिये मार्ग बनवाये।।

लगवाये तरू फलदार सुखद छायाकर।
पशुधन का रक्षण पोषण सबको दुःख हर।।
हो कृषि का खूब विकास कृषक अति फूलें।
बागों में नारी डाल हिंडोले झूलें।।

रोगों का हो अवरोध, चिकित्सा सुलभा।
कोई भी सुविधा रहे न जन को अलभा।।
हों सबको एक समान सभी सुविधायें।
हो न्याय सुलभ सस्ता, दोषी फल पायें।।

हो ऐसा स्वच्छ समाज सुखी सब प्राणी।
हो वर्ग हीन औ जाति हीन कल्याणी।।
सब रहें पुष्प औ कलिका रंग बिरंगे।
हो सकें कभी ना जाति धर्म के दंगे।।

सब सम्प्रदाय सद्भाव रखें सब फूलें।
हो राष्ट्र एकता भंग न ऐसी भूलें।।
है यह शासक का धर्म शान्ति स्थापन।
विकसित हो पायें सम होकर तन मन धन।।

मैं देख रहा हूँ दूर दृष्टि से भावी।
यह देश बनेगा पूर्ण स्वतन्त्र प्रभावी॥
जनता के नेता सत्य अहिंसा धारी।
लेंगे वे पूर्ण स्वराज्य, हटें भयकारी॥

आयेगा त्यागी व्रती अहिंसा धारी।
वह सत्य-शस्त्र से जन को करे सुखारी॥
हो जांय पराजित गोरे शासक उससे।
भागेंगे झंझावात प्रताड़ित भुस से॥

तब जन का जन के हेत सुखद शासन हो।
मतदाता अपने मुक्त राष्ट्र का जन हो॥
होगा सुराज्य का धर्म विशेष न कोई।
कोई अपनावे धम मान्य जो होई॥

सब धर्म राज्य के लिये समान रहेंगे।
कोई न किसी को निन्दा शब्द कहेंगे॥
अधिकाधिक का ही भला अधिकतम होगा।
वह लोक हितैषी राज्य स्वर्ग सम होगा॥

इतना कह नानक देव शान्त थे ऐसे।
झंझा मिट जाने बाद जलधि हो जैसे॥
लोधे था खोया हुआ अचानक जागा।
जुड़ गया चेतना का टूटा वह धागा॥

सिर रखकर श्री गुरुचरण नेत्र मीचे थे।
थे पुलकित भारी प्राण सुधा मीचे थे॥
कुछ ऐसी थी वह दशा आत्म ज्यों उठकर।
मिल जाता हो परमात्म शून्य का मृदु स्वर॥

पाकर ज्यों स्वाँति प्रवाह पपीहा हर्षित।
रवि रश्मिजाल से शतदल ज्यों ऊर्जस्वित ।।
या चन्द्र ज्योत्स्ना मुग्ध चकोरी तृप्ता।
या फणि की मणि हो ज्योति जाल से दृप्ता ।।

श्री गुरु की लगी समाधि ध्यान शतदल में।
या निर्विकार हो कमल जलधि के जल में ।।
निज शीश झुकाये शहशाह घर आया।
भूले राही ने सही मार्ग था पाया ।।

इस तरह गुरुदेव प्रतिदिन तम हरण करने लगे।
शुष्क हृदयों को सुलभ सद्भाव से भरने लगे ।।
भेद होते दूर माया कालिमा फटने लगी।
रूढ़ियों धर्मान्धता की दु:ख निशा हटने लगी ।।

कृष्ण की शुचि नन्द भू मथुरा मिलोरी से अलग।
किन्तु उसमें भी असत से खो रहे थे सत्य मग ।।
चल दिये गुरु चरण शुचितम् मधुपुरी की ओर।
डालने को क्षुब्ध जन पर निज कृपा की कोर ।।

□□

सर्ग १७

दिग्विजय

चरण वंदना प्रथम पूज्य भगवान की।
जय हो जननी आदि शक्ति द्युतिमान की।।
ईश्वर नाम अनादि भाव सुखसार है।
निराकार साकार बुद्धि-व्यापार है।।

ईश नाम है आत्म शक्ति विस्तार का।
सद्गुण बढ़ते विस्तृत रूप अपार का।।
चिनकारी का संचय ज्वाला जाल है।
आत्मतत्व परिवर्द्धन अकथ विशाल है।।

स्वर्ग नरक मानव के तर्क विचार हैं।
ये नर मन के भिन्न-भिन्न व्यापार हैं।।
मन को अतिशय सुखद दशा ही स्वर्ग है।
आसक्ति से मुक्त दशा अप वर्ग है।।

अनुचित करने से होता संताप है।
वही तर्क भाषा अभिधा का पाप है।।
एक अवस्था पाप दूसरी पुण्य है।
सत रज तम का उलझा रूप त्रिगुण्य है।।

जो उदात्त की ओर बढ़े वह देव है।
सुखद अवस्था मन की प्राप्त सदैव है।।
जो निकृष्ट पथ गामी होता दैत्य है।
रहता बर्बर वंचित रहता चैत्य है।।

धन्य विश्व के भाग्य संत आते यहाँ।
कर्मों का अधिकार और मिलता कहाँ?
सत तपस्या से मिटते हैं पाप सब।
बिना संतजन पुण्य प्राप्त है कौन कब ?

आये नानक धर्मत्राण हित लोक में।
डूबी थी मानवता भारी शोक मे ।।
घूम घूम कर करते रक्षा धर्म की।
सच्ची शिक्षा देते उज्ज्वल कर्म की ।।

चलते चलते कृष्ण थली मथुरा गये।
पाखण्डी देखे थे उसमें नये नये ।।
हुये इकट्ठे गुरु डेरे मे क्रोध से।
परिचय उनका नहीं हुआ था बोध से ।।

नानक ने बैठाया उनको प्यार से।
ग्रसे हुये थे पूर्वाग्रह दुर्वार से ।।
समझे थे अपने को ज्ञानी अद्वितीय।
अज्ञानी अभिमानी थे अति अवर्णनीय ।।

ज्ञानी जन है विनत मौन निज ध्यान में।
काँव काँव करते कउवे अज्ञान में ।।
होते जल्पक् ज्ञान नहीं लवलेश भी।
उनसे हारे ब्रह्मा विष्णु महेश भी ।।

एक चतुर्वेदी थे दर्प महान में।
वेद-नाद भी सुना नहीं था कान में।।
कहीं त्रिवेदी, कहीं [illegible]वेदी कहला[illegible]
वेदों का तो अं[illegible] [illegible] नहीं

व्यथ उपाधि का भार ज्ञान से हीन को।
जल से परिन्त्य नही भला किस मीन को?
जिसे वेद का ज्ञान वही वेदी बने।
एकन्न द्वि त्रि या कि चतुर्वेदी बने।।

जिसमें हो पाण्डित्य कहें पंडित सभी।
जड़ को पंडित कहना क्या संगत कभी?
जन्म लिया जिस कुल मे उससे क्या हुआ?
चाहे गुण ने नहीं कभी उसको छुआ।।

सब उपाधि हैं व्यर्थ विना गुण धर्म के।।
नाम नहीं वाचक होते है कर्म के।।
कौन समझता है जग में इस मर्म को?
कौन निभाता अपने सच्चे धर्म को?

गुरु–डेरे में बैठे आसन तान कर।
अपने को ईश्वर के प्रतिनिधि मानकर।।
एक अकड़कर बोले "कर शास्त्रार्थ रे!
मुझे बताओ क्या कलयुग का अर्थ रे?

क्या निवास कलयुग का यह भी द्रुत कहो।
या फिर मानो हार सदा सेवक रहो।।
गुरु नानक के पास दिखाई यों दिया।
सूर्य प्रभा को जुगनू ने ज्यों छू लिया।।

चमक रहा गुरुवर के आनन तेज था।
चिन्तामणि पर रवि ज्यों रश्मि सहेजता।।
खिला हास ज्यों नीरज विकसित हो गया।
प्राची में ज्यों अर्क उदित्त निर्मल नया।।

जन की महिमा हटकर जब 'कल' को मिले।
भाव शक्ति की गरिमा तन-बल को मिले।।
सेवक से विज्ञान बने स्वामी सबल।
भोग लालसा दहके मन में जब प्रबल।।

रिश्ते बन संकीर्ण रहें पहँचान सम।
बुद्धि विदाशा बढ़े भाव पूँजी हो कम।।
कानूनी दीवार घेर ले प्रेम को।
एकाकी का स्वार्थ हने बहु-क्षेम को।।

मानव उड़ने लगे बुद्धि-तूफान में।
लक्ष्य अदृश्य हो जावे जन के भान में।।
साधन बनकर साध्य भुलावे मे रखे।
आध्यात्मिक को त्याग भौतिकी फल-चखे।।

धर्मभाव का लोप उच्च गुण सुप्त हो।
श्रेष्ठ ग्रन्थ अपमानित होकर लुप्त हो।।
मर्यादा का नाश निलज्जी बन रहें।
कुछ भोगें सुख, शेष अभावों को सहें।।

जहाँ पहुँच बस धोखा धक्का खाइये।
नेकी कर भी बदी सहज ही पाइये।।
कुआ बावड़ी किसी मार्ग पर जाइये।
ऐसे युग को कलयुग कहना चाहिये।।

अथक रूप से श्रोता सुनते ध्यान से।
ज्ञान रहित तम हटता जाता ज्ञान से।।
एक एक स्वर में अद्भुत सी शक्ति थी।
गुरु-चरणों में बढ़ती जाती भक्ति थी।।

बोले सतगुरु कलियुग क्या स्थूल रे ?
तना रहित वह वृक्ष न जिसके मूल रे ।।
कलियुग को जो वस्तु मानते अज्ञानी ।
पंडित बनते मुर्ख व्यर्थ के अभिमानी ।।

सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग भाव हैं ।
ये मानस के निर्मित चार स्वभाव है ।
सत्य बोलना, सदाचरण औ शुभ क्रिया ।
ये है जहाँ प्रधान नाम सतयुग दिया ।।

साधुभाव विजयी होता जब पाप पर ।
वर की होती विजय राक्षसी शाप पर ।।
पुण्य-राम जब पाप दसानन का जेता ।
वह संघर्षी काल कहाता है त्रेता ।।

छद्म भयानक बढ़ें दुर्योधन अन्यायी ।
कंस भावना रहे देवकी परछाई ।।
कूटनीति से कृष्ण न्याय की रक्षाकर ।
धर्मभाव को उचित मान दें वह द्वापर ।।

आपस में हो व्यर्थ लड़ाई स्वार्थ की ।
चिन्ता कोई करे न सत्यज अर्थ की ।
तुच्छ लाभ के लिये गला तक काट दें ।
निखिल सृष्टि को पाप भयातुर पाट दें ।।

मानव से बढ़कर जब मानें यन्त्र को ।
बाधित कर दें जीवन दृष्टि स्वतन्त्र को ।।
लघु कुटीर उद्योग पिछड़ने जब लगें ।
ग्रामों के जन नगर ओर द्रुत ही भगें ।।

जन की महिमा हटकर जब 'कल' को मिले।
भाव शक्ति की गरिमा तन-बल को मिले ।।
सेवक से विज्ञान बने स्वामी सबल।
भोग लालसा दहके मन में जब प्रबल ।।

रिश्ते बन संकीर्ण रहे पहँचान सम।
बुद्धि विदाशा बढ़े भाव पूँजी हो कम ।।
कानूनों दीवार घेर ले प्रेम को।
एकाकी का स्वार्थ हने बहु-क्षेम को ।।

मानव उड़ने लगे बुद्धि-तूफान में।
लक्ष्य अदृश्य हो जावे जन के भान में ।।
साधन बनकर साध्य भुलावे मे रखे।
आध्यात्मिक को त्याग भौतिकी फल-चखें ।।

धर्मभाव का लोप उच्च गुण सुप्त हों।
श्रेष्ठ ग्रन्थ अपमानित होकर लुप्त हों ।।
मर्यादा का नाश निलज्जी बन रहें।
कुछ भोगें सुख, शेष अभावों को सहें ।।

जहाँ पहुँच बस धोखा धक्का खाइये।
नेकी कर भी बदी सहज ही पाइये ।।
कुआ बावड़ी किसी मार्ग पर जाइयें।
ऐसे युग को कलयुग कहना चाहियें ।।

अथक रूप से श्रोता सुनते ध्यान से।
ज्ञान रहित तम हटता जाता ज्ञान से ।।
एक एक स्वर मे अदभुत सी शक्ति थी।
गुरु-चरणों में बढ़ती जाती भक्ति थी ।।

कोई कहता है अवतारी राम का।
कोई कहता संत बहुत शुभ काम का॥
कोई कहता वरदगिरा का रूप है।
या संमृति का प्रबल प्रतापी भूप है॥

गुरुवर ऐसे बैठे जल में ज्यों जलज।
जीव बना था ब्रह्म त्रिगुण माया को तज॥
क्षार बीच ज्यों चिनगारी अभिराम हो।
घोर अविद्या बीच सुविद्या धाम हो॥

मथुरा नगरी त्याग चले बंगाल को।
जीत चुके थे दिक् सीमा औ काल को॥
मथुरा से ढाका की दूरी पार कर।
दो पल में ही पहुँचे लघिमा धारकर॥

नूर जहान नाम की औरत शासिका।
जादूगरनी तन्त्र ज्ञान आराधिका॥
अनगिन उसकी शिष्या जादूधर बनी।
पर पुरुषों को पीड़ा देती अति घनी॥

दिन में रखती बकरा या मेंढ़ा बना।
रात्रि काल में करती भोग विलास घना॥
महा धूर्तनी गुणहीना विकराल थीं।
निर्दोषों के लिये बनी कटु काल थीं॥

गुरु नानक जी मरदाना वाला लिये।
नगर बाह्य सीमा पर डेरा तान दिये॥
मरदाना ने कहा नगर जाकर अभी।
भोजन का सामान जुटाऊँ मैं सभी॥

सतगुरु देखा होनहार कुछ और थी।
दूर दृष्टि से चीन्हीं बंधन ठौर थी।।
आज्ञा दे दी, ध्यान मग्न वे हो गये।
मरदाना भी चक्षु दृष्टि से खो गये।।

पहुँचा जैसे नगर वीथि में मरदाना।
देख नारियों का मुख मंडल हरषाना।।
छिड़क नीर कुछ मंत्र बोल कर साध दिया।
तुरत बना कर मैंढ़ा उसको बांध लिया।।

"मैं मैं" कर चिल्लाया उछला गिर गया।
किन्तु नहीं जादूगरनी के हृदय दया।।
नीर भरे दो नयन विवश से रो दिये।
अश्रु बहाकर उसने अपने आप पिये।।

हूक उठी थी उर में भारी पीर की।
निर्झरणी बहती थी आँसू नीर की।।
पशु बेचारा कह न सके निज वेदना।
चुपचुप रोना बंधन धूल कुरेदना।।

ध्यान हुआ फिर गुरु चरणों की धूल का।
फँसा भँवर में स्वप्न देखता कूल का।।
वाह गुरु जो मंत्र हृदय में जप रहा।
भूखा प्यासा प्रखर धूप में तप रहा।।

उधर गुरुजी अन्तर्यामी देखते।
कृपा दृष्टि के काल चक्र मिस लेखते।।
जब जब पड़ी विपत्ति भक्त हित चल दिये।
अनुकंपा कर कष्ट-कीट सब मल दिये।।

पहुँचे उस थल जहाँ कलपता मरदाना।
निज तप बल से जादूबल भी पहँचाना।।
घूम घिरीं सब जादूगरनी व्यग्र हो।
लगीं निखरने तेज अनंत उदग्र हो।।

ऐसा देखा तेज कि मानों ब्रह्म हो।
तन-तरुणाई मानों कल्प सुरम्य हो।।
साक्षात रवि उदित पूर्व के द्वार से।
मणि मुक्तागण छहरें अम्बुधि ज्वार से।।

साक्षात शिव आये ज्यों कैलाश से।
कमलापत्ति उठ धाये क्षीरधि वास से।।
किंवा माया बीच सतोगुण आत्म का।
असुर शक्ति से घिरा तेज परमात्म का।।

जैसे जिसके भाव उसी विधि दीखते।
जो जिसका ज्ञातव्य उसी को सीखते।।
भक्तों को भगवान दिखाई दे रहे।
विषय कीट माया गड्डरिका गिर बहे।।

बाला को ले साथ उसी थल पर गये।
मरदाना पशु बना भोगता दुख नये।।
देखा गुरु को "मैं मैं" कर व्याकुल हुआ।
श्री नानक ने चरण बढ़ा उसको छुआ।।

ऊजामुवन तज रूप पूर्ववत हो गया।
मरदाना गुरु चरण गहे, कुछ रो गया।
जादूगरनी देख दृश्य अति क्रुद्ध थी।
किन्तु विवश थी गति उनकी अवरुद्ध थी।।

जोर लगाया, अजमाया जादू घना।
हुई थकित, आशा खो बैठी, खिन्न मना।।
श्री नानक पर असर न किंचित भी हुआ।
उसका जादू बना उसी के लिये कुआ।।

और नवेली नारि कूप से आ रहीं।
नीरपूर घट शीश अमित छवि पा रहीं।।
जब गुरु नानक लगे निरखने घट भरे।
चिपक ग गये शीश रहे यों ही धरे।।

किये प्रयास अनेक सफलता ना मिली।
घट सिर पर ही रहे ईं डुरी ज्यों सिली।।
नूरजहाँ तक पहुँच गया संदेश यह।
सरपट दौड़ी आ पहुँची अति क्रुद्ध वह।।

घिरीं अनेकों जादूगरनी ज्यों घटा।
भरे वृक्ष थे चौक अटारी औ ऊटा।।
मन्त्र पढ़े, जल छिड़का. टोंना टोटका।
उर्द फेंकती फेर रहीं थी घोटका।।

सब मिलकर भी घड़ा न सिर से ले सकीं।
चिपक गया वह, जादू करते सब थकीं।।
हतप्रभ सी, असहाय, विवश सी न्मना।
भूल रही थी पढ़ा लिखा जो भी गुना।।

श्री नानक मुस्काते बैठे निडर हो।
अंधकार के मध्य दिवाकर प्रखर हो।।
नूरजहाँ ने पकड चरण गुरु के लिये।
औरों ने भी आत्म समर्पण कर दिये।।

क्षमा माँगने लगी हुई भयभीत सी।
थर थर कंपित पल्लव कलिका पीत सी॥
बोले तब गुरुदेव बैठ कर अब सुनो।
छोड़ कपट को सत्य ज्ञान उर में गुनो॥

घटिया पाकर सिद्धि स्वार्थ हित जो बढ़ें।
नकली लेकर पैर मलय गिरि पर चढ़ें॥
तुच्छ स्वार्थहित औरों का अपकार कर।
अंत दुखी हो उर में भारी ग्लानि भर॥

नेक बनो, तजकर माया के मोह को।
सतोगुणी बन तजो काम औ कोह को॥
नारी तन है मन्दिर सद्गुण देव का।
उसे करो मत आलय फन्द फरेब का॥

नारी चाहे, बन सकती अमृत नदी।
विष वापी, सुभगा सुखान्तिका, त्रास दी॥
सुरी-आसुरी, कलहकारिणी, शीतला।
श्रद्धापूरित, नेहमयी या प्रज्वला॥

वह माता है, भगिनी, प्रेयसि, आत्मजा।
पुरस्कार सद्गुण की, अवगुण की सजा॥
शक्ति केन्द्र वह, दुर्बलता दुर्वार वह।
परम पूज्य, महनीय, जगत की हार वह॥

गहो सत्य का मार्ग, अभय हो बढ़ चलो।
दीपक बन कर, ज्योति दान हित नित जलो॥
जिस समाज में नारी सद्गुण युक्त हो।
वह उन्नत खुशहाल दुःखों से मुक्त हो॥

सुन नानक के वचन प्रेम पुलकित हुईं ।
सत्य हेत संकल्प लिया फिर घर गईं ।।
कर उनका उद्धार साथ संगी लिये।
करते प्रभु का ध्यान सन भी चल दिये ।।

पहुँचे गोरखमता लोक कल्याण को ।
भूले भटके जोगी जोगिन भाण को ।।
वेष बनाया अद्‌भुत कुरता गेरुआ ।
श्वेत दुपट्टा एक हाथ से सिर छुआ ।।

एक पाँव में जूती पहनो कफन गले में डाल
गले हड्डियों की माला थी, केसर तिलक सँभाल ।
जोगी जोगिन देख चकित थे, पूछा मत का नाम ।
जोग निरंकारी है अपना, उत्तर था निष्काम ।

जोगी जोगिन लगे लुभाने बदलो अपना पंथ ।
भस्म लगाओ तन पर पहिनो काला अम्बर कंथ ।।
सच्चा मार्ग मिलेगा तब हो बोलो अलख निरंजन ।
गोरख पंथी वेष धारने से ही दुःख का भंजन ।।

बोले नानक वेष धारणा तो निष्फल है ।
बचे बुराई से तो होता उत्तम फल है ।।
कुछ भी पहनो इससे अन्तर क्या आता है ?
तन सुन्दरता व्यर्थ अगर मन भोग गर्त जाता है ।।

तन चाहे मैला हो जाये मन तो निर्मल होवे ।
भीतर रहे आत्मा जगती तन चाहे सोवे ।।
सत्य मार्ग पर चलो कपट को त्यागो रे !
माया घेरा डाल रही है भागो रे !!

भागोगे पर कहाँ ? जहाँ संरक्षण हो।
जहाँ विषैले भोग नाग का नहीं क्रूर भक्षण हो ।।
पहिले जगह बनाओ ऐसी जिसमें बच पाओ।
हृदय शुद्ध ही कोट अजित है पा जाओ ।।

ईश कृपा से ढोंग और पाखण्ड हटेंगे।
आत्म ब्रह्म के बीच गर्त्त तत्काल पटेंगे ।।
मत चौंको जो वेष देखते, कृत्रिम है।
असली रूप आत्म का अन्तरतम् है ।।

चिन्ह करोगे धारण तो क्या गति होगी ?
खिथा डंडा भस्म शृङ्ग निष्फल योगी ।।
शीश मुँडाने से क्या मन मुँड जायेगा ?
माया से निलिप्त, ब्रह्म को पायेगा ?

अंजन बीच निरंजन, योग युक्ति पाओ।
बिना शृंग के बजे राग, निर्भय हो जाओ ।।
सच्चा जीवन शुद्ध त्यागमय अग्यामी।
प्रेम मर्म से कटें योनि लख चौरासी ।।

धन्य धन्य कह उठे सभी गोरखपंथी।
पहिली बार मिला था उनको सद्ग्रन्थी ।।
त्याग दिये सब ढोंग सिक्ख थे शुद्धमना।
पंथ सत्य का पाया निर्मल ज्ञान घना ।।

गोरखमता बना था नानक मता त्वरा।
गुरुद्वारा है पूज्य आज भी ज्ञान गिरा ।।
बैसाखी को अब भी लगता है मेला।
गुरु प्रसादि से मिट जाते हैं और झमेला ।।

चले गुरु महाराज बनारस के पथ पर।
जंगल पर्वत घूम रहे थे भू हितकर ।।
मरदाना को भूख लगी थी अतिभारी।
थके हुये को चलना भी था लाचारी ।।

बोला "गुरुवर ! करो व्यवस्था खाने की।
प्रबल बुभुक्षा जागी भोजन पाने की ।।
दीख रहा कुछ नहीं कि जिसको खाऊँ मैं ?
कहें देव ! किस विधि से प्राण बचाऊँ मैं ?

रीठे का था वृक्ष पास ही पड़ा हुआ।
अनगिन रीठों की समृद्धि से जड़ा हुआ ।।
बोले नानक तीव्र शक्ति से शाख हिलाओ।
जो गिर जावें उन रीठों को जी भर खाओ ।।

मरदाने ने शाख हिलाई पूर्ण शक्ति से।
उर आल्हादित उमंग रहा था शुद्ध भक्ति से ।।
रीठे गिरे, उठा कर खाये अतुलित मीठे।
अहा ! छुहारे बने अभी थे जो भी रीठे ।।

अब भी कोई जाकर देखे रीठे हैं।
उसी वृक्ष में बने छुहारे मीठे है ।।
नानकमते थान से तेईस कोश पर।
तीर्थस्थली बनी हुई है शोक हर ।।

भक्तों को प्रसाद अभी तक रीठे का।
लगें छुहारे ऐसे मधुमय मीठे का ।।
जिस थल गुरु के चरण पड़े वह धन्य है।
गुरु की महिमा अतुल अनादि अनन्य है ।।

भागोगे पर कहाँ ? जहाँ संरक्षण हो।
जहाँ विषैले भोग नाग का नहीं क्रूर भक्षण हो ॥
पहिले जगह बनाओ ऐसी जिसमें बच पाओ।
हृदय शुद्ध ही कोट अजित है पा जाओ ॥

ईश कृपा से ढोंग और पाखण्ड हटेंगे।
आत्म ब्रह्म के बीच गर्त तत्काल पटेंगे ॥
मत चौंको जो वेष देखते, कृत्रिम है।
असली रूप आत्म का अन्तरतम् है ॥

चिन्ह करोगे धारण तो क्या गति होगी ?
सिंधा डंडा भस्म शृङ्ग निष्फल योगी ॥
शीश मुँडाने से क्या मन मुँड जायेगा ?
माया से निर्लिप्त, ब्रह्म को पायेगा ?

अंजन बीच निरंजन, योग युक्ति पाओ।
बिना शृंग के बजे राग, निर्भय हो जाओ ॥
सच्चा जीवन शुद्ध त्यागमय अभ्यासी।
प्रेम मर्म से कटें योनि लख चौरासी ॥

धन्य धन्य कह उठे सभी गोरखपंथी।
पहिली बार मिला था उनको सद्ग्रन्थी ॥
त्याग दिये सब ढोंग सिक्ख थे शुद्धमना।
पंथ सत्य का पाया निर्मल ज्ञान घना ॥

गोरखमता बना था नानक मता खरा।
गुरुद्वारा है पूज्य आज भी ज्ञान गिरा ॥
वैसाखी को अब भी लगता है मेला।
गुरु प्रसादि से मिट जाते हैं झौर झमेला ॥

चले गुरु महाराज बनारस के पथ पर।
जंगल पर्वत घूम रहे थे भू हितकर॥
मरदाना को भूख लगी थी अतिभारी।
थके हुये को चलना भी था लाचारी॥

बोला "गुरुवर ! करो व्यवस्था खाने की।
प्रबल बुभुक्षा जागी भोजन पाने की॥
दीख रहा कुछ नहीं कि जिसको खाऊँ मैं ?
कहें देव ! किस विधि से प्राण बचाऊँ मैं ?

रीठे का था वृक्ष पास ही पड़ा हुआ।
अनगिन रीठों की समृद्धि से जड़ा हुआ॥
बोले नानक तीव्र शक्ति से शाख हिलाओ।
जो गिर जावें उन रीठों को जी भर खाओ॥

मरदाने ने शाख हिलाई पूर्ण शक्ति से।
उर आल्हादित उमंग रहा था शुद्ध भक्ति से॥
रीठे गिरे, उठा कर खाये अतुलित मीठे।
अहा ! छुहारे बने अभी वे जो भी रीठे॥

अब भी कोई जाकर देखे रीठे हैं।
उसी वृक्ष में बने छुहारे मीठे है॥
नानकमते थान से तेईस कोश पर।
तीर्थस्थली बनी हुई है शोक हर॥

भक्तों को प्रसाद अभी तक रीठे का।
लगें छुहारे ऐसे मधुमय मीठे का॥
जिस थल गुरु के चरण पड़े वह धन्य है।
गुरु की महिमा अतुल अनादि अनन्य है॥

भागोगे पर कहाँ ? जहाँ संरक्षण हो।
जहाँ विषैले भोग नाग का नहीं क्रूर भक्षण हो।।
पहिले जगह बनाओ ऐसी जिसमें बच पाओ।
हृदय शुद्ध ही कोट अजित है पा जाओ।।

ईश कृपा से ढोंग और पाखण्ड हटेंगे।
आत्म ब्रह्म के बीच गर्त तत्काल पटेंगे।।
मत चौंको जो वेष देखते, कृत्रिम है।
असली रूप आत्म का अन्तरतम् है।।

चिन्ह करोगे धारण तो क्या गति होगी ?
खिंथा डंडा भस्म शृङ्ग निष्फल योगी।।
शीश मुँडाने से क्या मन मुँड जायेगा ?
माया से निलिप्त, ब्रह्म को पायेगा ?

अंजन बीच निरंजन, योग युक्ति पाओ।
बिना शृंग के बजे राग, निर्भय हो जाओ।।
सच्चा जीवन शुद्ध त्यागमय अभ्यासी।
प्रेम मर्म से कटें योनि लख चौरासी।।

धन्य धन्य कह उठे सभी गोरखपंथी।
पहिली बार मिला था उनको सद्ग्रन्थी।।
त्याग दिये सब ढोंग सिक्ख थे शुद्धमना।
पंथ सत्य का पाया निर्मल ज्ञान घना।।

गोरखमता बना था नानक मता खरा।
गुरुद्वारा है पूज्य आज भी ज्ञान गिरा।।
वैसाखी को अब भी लगता है मेला।
गुरु प्रसादि से मिट जाते हैं झौर झमेला।।

चले गुरु महाराज बनारस के पथ पर।
जंगल पर्वत घूम रहे थे भू हितकर॥
मरदाना को भूख लगी थी अतिभारी।
थके हुये को चलना भी था लाचारी॥

बोला "गुरुवर ! करो व्यवस्था खाने की।
प्रबल बुभुक्षा जागी भोजन पाने की॥
दीख रहा कुछ नहीं कि जिसको खाऊँ मैं ?
कहें देव ! किस विधि से प्राण बचाऊँ मैं ?

रीठे का था वृक्ष पास ही पड़ा हुआ।
अनगिन रीठों की समृद्धि से जड़ा हुआ॥
बोले नानक तीव्र शक्ति से शाख हिलाओ।
जो गिर जावें उन रीठों को जी भर खाओ॥

मरदाने ने शाख हिलाई पूर्ण शक्ति से।
उर आल्हादित उमंग रहा था शुद्ध भक्ति से॥
रीठे गिरे, उठा कर खाये अतुलित मीठे।
अहा ! छुहारे बने अभी थे जो भी रीठे॥

अब भी कोई जाकर देखे रीठे हैं।
उसी वृक्ष में बने छुहारे मीठे हैं॥
नानकमते थान से तेईस क्रोश पर।
तीर्थस्थली बनी हुई है शोक हर॥

भक्तों को प्रसाद अभी तक रीठे का।
लगें छुहारे ऐसे मधुमय मीठे का॥
जिस थल गुरु के चरण पड़े वह धन्य है।
गुरु की महिमा अतुल अनादि अनन्य है॥

रीठे मीठे किये बनारस चल दिये।
मर्दाना श्री वाला मायी ने लिये।।
काशी में हिन्दुत्व ज्ञान का केन्द्र था।
द्विज भारी विद्वान कुशाग्र नरेन्द्र था।।

भिन्न वेष को देख इकट्ठे जन हुये।
ज्यों सूरज के बिम्ब अनेकों घन छुये।।
पूछे अनगिन प्रश्न सभी के उत्तर थे।
श्री गुरु के तर्कों से सभी निरुत्तर थे।।

चतरदास पंडित जो सबसे ज्ञानी थे।
निज तर्कों के अद्वितीय अभिमानी थे।।
आये करने तर्क लिये दल साथ में।
वेद शास्त्र शत पथ स्मृति ले हाथ में।।

इसी प्रेरणा से रचना उंकार की।
चउअन श्रेष्ठ पौड़ियाँ सत के सार की।।
रचना की श्रीगुरु ने पावन वाणी की।
गूंज रही ध्वनि अब भी उस कल्याणी की।।

ओंकार से सर्व प्रथम ब्रह्मा उत्पत्ति।
ओंकार से जन्म मिला सत आनंद चित्त।।
ओंकार से शैल युगल श्री वेद हुये।
ओंकार से शब्द शक्ति समवेत हुये।।

ओंकार से उपजी गुरु की भी वाणी।
हुई जगत हित प्रेम प्रसविनी कल्याणी।।
ओंकार से उपजा उज्ज्वल ब्रह्म विचार।
ओंकार में व्याप्त हो रहा त्रिभुवन सार।।

एक वही परमात्म सर्व व्यापक विभो।
वही सृष्टि का आदि अन्त अविराम प्रभो॥
बुद्धि भेद दुःख मूल शूल अतिसार का।
एक ओउम सतिगुरु प्रसादि संसार का॥

इतने हुये प्रभावित गुरु के तर्क से।
हुये मुक्त कुविचार अनर्थ वितर्क से॥
गुरु के बनकर सिक्ख हुये कृतकृत्य से।
बिना बैर निर्भय हो सत्व अमर्त्य से॥

पहुँचे पटना शहर ज्ञान की ज्योति ले।
मिले कुतर्की बहुत क्षणिक खद्योत से॥
गुरु तर्कों ने उन्हे मार्ग पर ला दिया।
माग किनारे नानक डेरा छा लिया॥

हीरों लालों का व्यापारी सालसराये जौहरी।
परिचर साल अधरका लाया, पहिने स्वर्ण फितोहरी॥
भोजन व्यंजन फल मेवा के अनगिन थाल लिये।
माथा टेका गुरु चरणों मे बहु उपहार दिये॥

पूछा उससे काम कौनसा करते भाई?
बोला मैं हूँ बड़ा जौहरी सालसराई॥
बड़े प्रेम से उसे बिठाया बोले गुरुवर।
सबसे बढ़कर मूल्यवान यह जीवन भास्वर॥

यही बहुत अनमोल और दुर्लभ है भारी।
इसे गँवाना व्यर्थ मूर्खता की लाचारी॥
ईश्वर के शुभ भजन हेतु ही इसको पाया।
होगी क्या क्षतिपूर्ति व्यर्थ जो इसे गँवाया?

क्षण क्षण जप हरिनाम सार्थक होगा जीवन।
सत्य वचन निर्लिप्त आत्मा का दुर्लभ धन ॥
शुद्ध कमाई उतनी जिससे उदर पूर्ति हो।
तन मन निर्मल निर्मोही आचरण मूर्ति हो ॥

जैसा होगा धन वैसा ही होगा मन भी।
भोजन के अनुरूप बनेगा मानव तन भी ॥
बुरा न सोचो, करो बुरा मत, हृदय शुद्ध हो।
सबसे निश्छल प्यार चिन्तना शुचि प्रबुद्ध हो ॥

सुनकर पावन वचन हृदय निर्मल हुआ।
सालसराये शीश झुका पगतर छुआ ॥
बना सिक्ख वह निज सेवक के साथ में।
पंथ शरण में गया डालकर कड़ा हाथ में ॥

पटना से चल कर श्री गुरु जी गया गये।
देखे जाकर ढोंग ढकोसल नये नये ॥
पिंड प्राणियों के भरवाते थे सबसे।
शोषण करते रहे भुलावा दे कब से ॥

घेर लिया नानक को आकर पंडों ने।
खूब जताई ऐंठ मल्ल मुस्टंडों ने ॥
बोले तुम भी पितृ पिंड भरवा लो रे।
निज पितरों के नाम स्वर्ग करवा लो रे ॥

बोले श्री गुरुदेव सुनो सब ध्यान से।
गुनो ज्ञान सो शब्द सुनो जो कान से ॥
मेरा दीवा नाम दुःखों का तेल है।
नाम दीप ज्यों जले उष्णता मेल है ॥

अंत हो रहा तेल नहीं यमदूत गहेंगे।
व्यर्थ जल्पना व्यर्थ सार उन्मुक्त कहेंगे।।
कर देती है क्षार जलाकर लघु चिनगारी।
नाम स्मरण कर लेता है व्यथा पुजारी।।

पिंड पतल मेरा तो ईश्वर नाम ही।
लोक और परलोक सुधारे धाम ही।।
तीर्थ आचमन अवगाहन वह शुचि होगा।
तन का चाहे हो न किन्तु मन का होगा।।

दिवस और निशि मन से ईश्वर जाप हो।
यह अमृत की मूरि लेश ना पाप हो।।
पिंडदान हलवा पूड़ी या खीर का।
चावल जौ का या हो कच्चे क्षीर का।।

मन यदि पावन नहीं व्यर्थ सब दान है।
जिह्वा दूषित व्यर्थ गंग जल पान है।।
पंडित हो या तुर्क मौलवी मठाधीश।
शुद्ध हृदय के बिना दूर रहता जगदीश।।

इसी तरह गुरुदेव रोज उपदेश से।
करते अवगुण दूर हृदय के देश से।।
कुछ कहते करके दिखलाते कर्म में।
मोड़ रहे थे जन प्रवाह शुचि धर्म में।।

जाते थे जिस ओर उधर ही, शुद्ध हो रहा था परिवेश।
ढोंग अंध विश्वास रूढ़ियाँ, मिटती, कटता पाप-क्लेश।।
सिक्ख रहे बन जगह-जगह पर, पंथ सत्य की वाणी का।
गूँज उठी थी वसुन्धरा स्वर अनुगुंजित गुरु वाणी का।।

सर्ग 18

सुमेर पर्वत प्रकरण

भगवान नानक की कृपा हर जीव पर होती रहे।
ससार के हर देश मे सुख शान्ति की सरिता बहे।।
सब हों सुखी संयत निरोगी, पुण्यमय शुभ कर्म हों।
सबको मिलें भगवान, सबके शुद्ध सात्विक धर्म हों।।

भेद सब मिट जायेंगे मानव सुखी होंगे सभी।
कोई किसी को कष्ट देने की न सोचेगा कभी।।
मान होगा सब जगह सबका सभी संतुष्ट हो।
तुच्छ वातों के लिये कोई कहीं क्यों रुष्ट हो?

उचित पालन बालकों का नारियों का मान हो।
वृद्ध अबला निराश्रित का भी उचित सम्मान हो।।
साहित्य सृष्टा औ कला विद् सब कहीं पुजते रहे।
उचित श्रद्धा प्रेम के निर्झर सदा उर में बहे।।

धन से अधिक हो मान मन का और तन से आत्म का।
प्रातः उठते ही सभी जन नाम लें परमात्म का।।
सब बनें आस्तिक सभी में सत्य शिव सौन्दर्य हो।
पुण्य का सचय रहे औ पाप का तत्काल क्षय हो।।

कर रहे गुरुदेव थे सबका भला जो भी मिला।
कर्म की शुभ शाखा पर था धर्म सरसिज नव खिला।।
दूसरी ससार यात्रा के लिये फिर चल दिये।
इन्दौर में इमली उगाकर ज्ञान का सम्बल लिये।।

धर्म पथ पर चल दिये सद्भाव का संदेश ले।
जिस जगह पहुँचे वही के शब्द उनका वेश ले ।।
पहुँचते सरसा भटिंडा धर्मकोट सुधाम पर।
जादुओं के जाल तोड़े ज्योति के वाहक प्रखर ।।

थे फकीरों के अखाड़े फासते सामान्य जन।
ज्ञान का उपदेश देकर बदलते जन-यूथ-मन ।।
राजपूताने कुआलू जैन-गढ़ तम दूर कर।
ज्ञान गोष्ठी तर्क वार्ता दे रहे अज्ञान-हर ।।

सत्य के दर्शन कराकर दूर करते पाप को।
दे दिये वरदान सबको हरण करके शाप को ।।
पूछ बैठा पीर उनसे कौनसा तप कर रहे।
खा रहे हो जी रहे हो तन क्षुधा तृष्णा बहे ।।

हो गये गंभीर सतगुरु ज्यों कमल का फूल हो।
क्षरित वाणी मुख जलद से सत्य-तरु का मूल हो ।।
हे पीर सुन शुभ तप वही है जो हृदय से हो रहा।
मन विकारी हो अगर क्यों तेज तन का खो रहा ?

तन अगर हो स्वस्थ मन भी स्वस्थ तो फिर नाम जप।
स्वस्थता ही तन हृदय की स्वतः बनती श्रेष्ठ तप ।।
पीर फिर बोले हमारे साथ चालीसा करो।
देख लेंगे नाम का फल यदि न कष्टों से मरो ।।

मान कर गुरुदेव ने उनका कथन 'हाँ' कह दिया।
जो दिया जौ और पानी सहज मन से गह लिया ।।
पीर प्रतिदिन एक जौ औ एक प्याला जल पियें।
साधना थी कष्ट कर देखें मरें या वे जियें ।।

किन्तु नानक देव ने ना जौ छुये ना जल छुग्रा।
हो गये चालीस दिन पर कष्ट कुछ भी ना हुग्रा॥
पीर ग्रति दुवले हुये ग्ररु तेज तन का खो गया।
सालिल जो लेते रहे फिर भी प्रकृति-छल हो गया॥

किन्तु नानक बीज भी या बूंद भी छुते न थे।
सहज ग्राल्हादित उमंगित स्वस्थ तन ग्रौ सुमन थे॥
चरण मे गिरकर सभी वे प्रार्थना करने लगे।
हो क्षमा जो भूल की है, भाग्य ग्रपने है जगे॥

बन गये वे सिक्ख गुरु के पंथ की सेवा गही।
इस तरह सूरज समुज्ज्वल कर रहा पूरी मही॥
चल दिये गुरुदेव बीकानेर से ग्रागे बढ़े।
जा रहे दक्षिण दिशा को उठाते जो भी पड़े॥

मिल गया साधू सरेवड़ जीव हत्या कर रहा।
पाप की सरिता बहाता स्वयं भी उसमें बहा॥
कर कृपा उपदेश देकर मर्म पानी का बता।
दे दिया निज ज्ञान से ही सत्य का उसको पता॥

भीलवंशी दैत्य कौड़ा मारता खाता मनुज।
पकड़ मरदाना गिराया बाँध कर पग ग्रौर भुज॥
खौलता था तेल उसमें डालने ज्यों ही चला।
कर कृपा की दृष्टि नानक कर दिया ठंडा भला॥

देखकर यह शक्ति कौड़ा ने चरण वंदन किया।
दैत्य से मानव बना कर शरण में द्रुत ले लिया॥
बढ़ गये ग्रागे सघन वन पर्वतों के पार हो।
कर रहे उद्धार दुःख से ज्यों सुखी संसार हो॥

नाग पट्टम और रामेश्वर गये बढ़ते रहे।
शरण पाकर जन शताधिक क्लेश से कढ़ते रहे ।।
नृप बने शिवनाम सिंगल द्वीप पर शासन करें।
सुन चुके गुरुदेव के कौतुक सभी का दुख हरें ।।

वन गये वे सिक्ख सीखा ज्ञान प्राणायाम भी।
प्राण-सिंगल उच्चरित कर निरंकारी धाम भी ।।
संगला से लौटते गुरुदेव कजलीवन गये।
सिद्धजन समुदाय से कुछ तर्क उनके ठन गये ।।

मार्ग था हठयोग उनका कष्ट तन को दे रहे।
भर्तृहरि निर्देश देते, म्लानता मन ले रहे ।।
सरल शब्दों में उन्हें उपदेश सच्चे ज्ञान का।
दे दिया तम को उजाला शुभ नवोदित भानु का ।।

व्यर्थ मन को कष्ट देना कार्य है अज्ञान का।
सहज योगी प्राप्त करता अनुग्रह भगवान का ।।
प्रश्न जितने भी किये, उत्तर दिये, जो रुष्ट थे।
सुधामय वाणी सुनी तब सिद्ध सब संतुष्ट थे ।।

नाम, रस का पान करते ब्रह्म के रंग में रंगे।
भक्त सच्चा बन सकेगा सहज श्रद्धा में पगे ।।
ज्ञान देकर भर्तृहरि को पश्चिमी तट चल दिये।
गुजरात मालाबार होकर पुण्यमय वे थल किये ।।

सिन्ध-पीरों के लिये, पहुँचे बहावलपुर धनी।
बात करते अटपटी वे चमत्कारी उन्मनी ।।
प्रेम में उनको कराये सत्य के दर्शन सुभग।
थे जमाये उचित पथ पर लड़खड़ाते भ्रान्त पग ।।

ढोग से उनको हटाया और आडम्बर हरा।
सरल जीवन उर सदिच्छा सौम्य भावों से भरा।।
लौट कर दक्षिण दिशा से गुरु जी करतारपुर।
पहुँच कर निज प्रिय जनों का प्रेम से उत्ताल उर।।

दो समय संगत सिखो की हो रही हर्षित अभय।
प्राप्त करते थे ये खुशियाँ गुरु जी को दो समय।।
चल दिये फिर उत्तरी दिशि को सिखाने के लिये।
शीहा छीवा और हँसू साथ जाने के लिये।।

पहुँच कर करतार पुर फिर मटन साहिब में गये।
ब्रह्मदासा विप्र को उपदेश दीने शुभ नये।।
पहुँच बद्रीनाथ पथ से हेम कुंडी राह ली।
जो मिला उसके हृदय में शुद्ध पथो चाह दी।।

तन भरा था शक्ति से औ मन लिया सद्‌भाव भर।
सूर्य जैसे चमकता है सुमेर पर्वत के शिखर।।
सिद्ध रहते मंडली में, देखकर हतप्रभ हुये।
हाय बाबा! ये शिखर तुमने भला कैसे छुये?

कौनसी है शक्ति तुम में, कौन हो सचसच कहो।
दीखते हो तेजमय कैसे अनूठे तुम अहो!!
कह उठे नानक सुनो हे सिद्ध बातें ध्यान से।
मूल माया में छुपा है देखना है ज्ञान से।।

प्रेम प्रभु का शक्ति सच्ची, और माया रूप है।
कमलवन के इन्द्र जाली कुतुक अन्तर कूप है।।
सिद्ध बोले मातृलोकी कह सको व्यवहार क्या?
विहँस नानक ने कहा उर सत्य को तैयार क्या?

झूँठ की काली निशा छाई समूचे लोक में।
सरल जन डूबे अनर्थों के भयानक शोक में।।
आप आकर पर्वतों में छुप रहे दुख ताप से।
दब रहे हो कर्म काण्डो के विषैले पाप से।।

कौन जग का कर सके कल्याण मुनिजन जब भगें।
जन बिना अंकुश कुपथ के पाप कर्दम मे दगें।।
भक्त जन तो रासलीला में सदा डूबे रहे।
विप्रजन भी दक्षिणा हित कर्म काण्डों में बहें।।

रिश्वतों में काजियों का ध्यान बक सम है लगा।
भोग में हैं मग्न शासक, उर विषय रस में पगा।।
जगत-जीवों की कुगति है कौन रक्षा कर रहा?
सिद्धजन समुदाय भी जब झेलने से डर रहा।।

छुप रहे हैं आप ही जब पर्वतों की गोद में।
भूलते कर्त्तव्य अपना सिद्धियों के मोद में।।
कौन फिर संसार में सद्धर्म का उपदेश दे?
कौन पीड़ित प्राणियों को प्यार का संदेश दे?

लौट जाओ लोक में निज कर्म का पालन करो।
दोष युत पाखण्ड पीड़ित पाप-प्रक्षालन करो।।
योग सच्चा कर्म में है, कर्म से भागो नहीं।
व्यर्थ का यह बन्सुरा सा राग अब रागो नहीं।।

सब तुम्हारी ही तरह यदि पर्वतों में जा रहें।
सिद्धियो के योग के उद्दाम झरनों मे बहें।।
तो बताओ कौन लौकिक धर्म संचालन करे?
कौन उपजा अन्न सबके पेट का पालन करे?

कौन श्रम के मोतियों से भूमि का शृङ्गार कर ?
कौन अपने प्राण से बढ मातृभू को प्यार कर ?
जूझता सब आपदाओं से निभा कर्त्तव्य को ?
कौन निज पुरुषार्थ से बदले कुटिल भवितव्य को ?

धर्म सबसे है बड़ा निज कर्म को करना सही।
तप गृहस्थी का बड़ा है, फूलती फलती मही ।।
नेक नीयत, शुभ विचारों से सभी को सुख मिले।
सरल जीवन शुद्ध भावों से प्रगति-कलिका खिले ।।

बात मैं ज्यादा नहीं करता सरल सी बात है।
छोड़ कर संसार भगना घृणित गर्हित घात है ।।
कर्म ही पूजा, करो उसको निकामी भाव से।
धर्म है कर्त्तव्य निष्ठा पालना हो चाव से ।।

है बहुत कथनी सरल पर है नहीं करनी सरल।
पाप सबसे है बड़ा यदि जो कहें उसमें हो छल ।।
पार दर्शी हो हृदय जो हो वही दीखे सदा।
प्रेम हो, सद्भाव हो, औ सरल जीवन सर्वदा ।।

सिद्ध सुन कर चुप हुये, समझे प्रभो का रूप है।
तेज का अम्बुधि-त्रिलोकी का सुज्ञानी भूप है ।।
चरण थामे और मांगी भूल की शतधा क्षमा।
सिक्ख बनकर लौट आयें पुण्य शुभ करने जमा ।।

नैपाल औ भूटान होते पहुंच फिर सिक्किम गये।
जिधर जाते प्रेम पादप लहरते थे शुचि नये ।।
पहुंच कर तिब्बत बनाये सिक्ख शिक्षा दे नई।
फिर पड़े काश्मीर जम्मू और जसरोटे छई ।।

पहुँच कर सुलतानपुर करतारपुर जाने लगे।
तब कहा बेबे सुवीरा ! धन्य भाई हो सगे।।
कल दिवस ही बीच में हैं प्राण परसो जायेंगे।
और दो दिन ही रुके, मरते सुदर्शन पायेंगे।।

रुक गये नानक उसी विधि प्राण बेबे ने दिये।
चल दिये जैराम भी सत प्रेम प्राणो में लिये।।
धन्य ऐसा युगल जब तक साथ था जीते रहे।
प्राण का भी अनिल जिनका साथ परलोकी बहे।।

प्रेम अमृत पी लिया फिर मृत्यु का विष क्या करे ?
शुष्क मरुस्थल क्या करेगा प्रणय अम्बुधि उर भरे।।
धन्य ऐसे प्राण जो बिछुड़े नही मर कर मिले।
सुमन बनकर स्वर्ग उपवन कल्प लतिका में खिले।।

धन्य बेबे नानकी ज्यों वारि गंगा शुभ सनी।
धन्य श्री जैराम जिनकी जिन्दगी सौरभ बनी।।
कर दिया संस्कार अन्तिम आ गये करतारपुर।
अजित रंधावे मिले शुभ कामना हिल्लोर उर।।

यह उदासी तीसरी सम्पन्न थी शुभ सार सी।
वर्ष पन्द्रह सौ पिचत्तर मोक्ष के अभिसार सी।।
यों मिले जैसे कि पतझड़ बाद पावस आ गई।
या मरुस्थल शुष्कता पर सजल बदली छा गई।।

धन्य होती थी मही औ धन्य ही आकाश था।
धन्य थे जल वायु पावक धन्य उज्ज्वल प्राश था।।
कौन अब तक इस तरह संसार हित चलता रहा ?
दीप सा दे ज्योति सबको, रात दिन जलता रहा।।

धन्य है वह पंथ, वाणी धन्य, इसके भक्त भी।
धन्य है जो दीखता या छुप रहा अव्यक्त भी॥
धन्य है गुरु ग्रन्थ साहिब, धन्य गुरुद्वारे सभी।
धन्य होगी वह घड़ी, गुरुदेव दर्शन दें कभी॥

धन्य धन्य धाम जहाँ ईश अवतार हेतु,
आते उपदेश देते धर्म समझाते हैं।
चाहे पुष्कर धाम ननकाणा धाम, सौरों हो,
संत चरणारविन्द स्वर्ग सा बनाते हैं॥
चौथी सु उदासी हेतु नानक प्रस्थान करें,
मिटे दु.ख द्वन्द्व जो कि राह से हटाते हैं।
मक्के हाजियों के साथ सत्य की सुवाणी गूंजे,
जिस ओर पैर मक्के द्वार हट जाते है।



सर्ग 19

मक्का मदीना यात्रा

ब्रह्म शक्ति का सदन अनंत।
जड़ जंगम का शाश्वत कन्त ॥
वह अम्बुधि उत्ताल तरंग।
अज अनादि अदृश्य अनंग ॥

बून्द बिछुड़ जाती अम्बुधि से, यह उसका दुर्भाग्य।
पुनः मिलन होगा प्रियतम् से, कब होगा सौभाग्य?
दिनकर किरण वाष्प कर देती, बन नीरद नभ मे छाती।
तरस वरस गिर जाती भू पर, गर्त्त जलाशय बँध जाती ॥

पीता कोई प्यासा पक्षी, पड़ी उदर के कारावास।
शर आहत व्रण रुधिर धार मिस सहती जाती त्रास ॥
भूमि गर्भ मे, तप्त तवे पर, या चातक की प्यास में।
सीपी में मुक्ता बनती या विष अहिमुख आवास मे ॥

हाय! बिछुड़ कर परमेश्वर से दुर्गति कैसी आत्म की?
तभी मुक्ति होगी जब जन पर अनुकम्पा परमात्म की ॥
या अवतारी सत ऋषीश्वर करे अनुग्रह जीव पर।
अमृत की वर्षा हो जावे चेतन जड निर्जीव पर ॥

संत जनों की कृपा अपार।
सत्पथ पाता है संसार ॥
जय जय नानक अगजग स्वामी।
कण कण वासी अन्तर्यामी ॥

उत्तरपूण उदामी भव्य ।
जीवन दीपक ज्योतित नव्य ।।
दे दर्शन उपदेश विचार ।
प्रेमी संगत ज्ञान प्रसार ।।

दादन खां जेहलम उद्धार ।
सच्चा पंथ सुनीत विचार ।।
योगी संन्यासी मुनि संत ।
सबका ईश्वर एकल कंत ।।

टिल्ला बाल गुंदाई थान ।
किया अनुग्रह दर्शन दान ।।
कनपुट जोगी तनपट संत ।
पीर पुजारी मेड़ महंत ।।

ढोंग ढकोसल ठेलम ठेल ।
धर्म आड़ में कुत्सित खेल ।।
देख गुरु जी किया प्रहार ।
समझाया जीवन का सार ।।

टिल्ले उतरे लंघ पहाड़ ।
चींख रहे निज कंठ फाड़ ।।
बोले नानक स्वर गहरा ।
ईश्वर क्या होता बहरा ?

ढोंगी एक परीक्षा लीनी ।
प्रस्तर प्रतिमा कर में दीनी ।।
बोला फेंको नीर अनन्त ।
तैर गया तो मानें संत ।।

देखें कैसा है बलवंत।
रखता कितनी भक्ति अनन्त ॥
नानक लीना प्रस्तर हाथ।
लगा तैरने जल के साथ ॥

चौहा साहिब है गुरुद्वार।
एक सरोवर शुचि जलधार ॥
चरण बढ़ाते चले अबाध।
जग के हित की उर में साध ॥

बढ़ते जाते परम दयामय, मरुथल पर पावस घनश्याम।
शुष्क धरा पर सलिल तरंगी, सहते शीतल वर्षा घाम ॥
डेरा इस्माइल खाँ गाजी, मीरापुर से नौ शहरे।
राजनपुर होकर वे पहुँचे प्रेम सुधा से हृदय भरे ॥

आया मिट्ठन कोट जहाँ पर पाँच जलधि शुचि लहराते।
सक्खर भक्खर और रोहड़ी चरणों में पड़ते जाते ॥
साधु वेला जाकर पहुँचे लरकाना फिर अमरकोट।
टांडा उडयारे होकर बिखराते जन की पाप-मोट ॥

राजघाट से गये कराची, पहुँचे मक्के हरषाते।
पाप हलाहल नष्ट भ्रष्ट कर कण कण अमृत बरसाते ॥
भाई मरदाना की इच्छा, मक्का और मदीना धाम।
देख रहे थे बाह्य चक्षु तो, जिह्वा पर सतगुरु का नाम ॥

श्री नानक थे अन्तर्यामी।
पुरुष अकाल अनादि अकामी ॥
घट घट ज्ञान अलौकिक धामा।
नर तन कर्म अमित अभिरामा ॥

देखा जन उर कपट अति, ऊपर जगमग रूप।
पुष्प सेज सज्जित सुभग, नीचे पावक कूप॥
रगड़ बिना मल क्यों छूटे, चोट बिना विस्फोट।
बिन प्रहार छूटे नहीं, कपट कुचाली खोट॥

धर्म बना अति रूढ़िमय, लीक कढ़ी पर अंध।
तम वितान में हड़वड़ी, सिर कटि फिरे कबंध॥
सत्य धर्म का अर्थ भी, समझें नहीं कुमूढ़।
ऊबड़ खाबड़ भूमि पर, उल्टे सुल्टे कूढ़॥

कर्मकाण्ड को मानते धर्म विवेक विहीन।
लड़ने भिड़ने को रूपे, मगरमच्छ अति पीन॥
धर्म सभी शुचि सत्य शिव, अनुयायी मति मंद।
स्वयं बँधे औ और हित पूरि रहे दुर्फंद॥

सोचा नानक रे मना! इन्हे दिखाओ सत्य।
छोड़ें कपट कुचाल को, रहे न माया भ्रत्य॥
कण कण में ईश्वर बसे, रमा निखिल जग बीच।
हर घट में बसता वही, प्रकटी ज्योति मरीच॥

अन्तर्यामी के हृदय को समझे क्या भाव?
दिव्य कला शुचि पुंज का दर्शित दिव्य प्रभाव।
सोये पैर पसार कर नानक मक्का ओर।
जाहिद देखा रोष से, मचा बवंडर घोर॥

घिरे अनेकों क्रोध में, बोले 'काफिर कौन?
नहीं जानता खुदा का इधर बसा है भौन॥
पैर किये अल्पज्ञ तू, पातक करता घोर।
नही जानता मूढमति, मक्का है इस ओर?

बोले नानक धैर्य से, चकित करी वह सैर।
अकड़ रहे, हटते नहीं, तुम्हीं हटा दो पैर॥
कृष्ण नाग ज्यों फफकते, खींच पैर दिशि अन्य।
जैसे ही उन ने किये, देखा दृश्य अनन्य॥

जिस ओर गये पग नानक के, उस ओर मक्का सु घूम गया।
फिर खींच किये जिस ओर वहीं, वह धाम विना भय लूम गया॥
बहु बार किया भ्रम स्वेद बहा, परिणाम वही बदला ही नहीं।
पग साथ ही मक्का ही घूम रहा, जिस ओर गये उस ओर वहीं॥

हतप्रभ अति भयभीत हुये।
सबने श्रद्धा मय चरण छुये॥
यह अल्लाह का पैगम्बर है।
यह वसुधा पर स्वर्गिक वर है॥

हुये इकट्ठे धर्म-धुरन्धर। योगी भोगी मस्त कलन्दर॥
अल्प ज्ञान की अकड़ जताते। अपने को ही ब्रह्म बताते॥
मैं जो कहता, वह ही सच्चा। तू क्या जाने क्या है बच्चा॥
जिनको ज्ञान, मौन ही रहते। सबकी सुनते, स्वयं न कहते॥

अधजल गगरी ही छलकाती। भरी गहन शीतलता पाती॥
मन स्थिर तन-तेज बताता। अस्थिर मन चचलता लाता॥
बोले तू क्या हिम्मत करता? जो अड़ता है वह ही मरता॥
चाहे तो तू करले ज्ञात। पता चले क्या तुझको ज्ञात॥

बता कहाँ अल्ला का धाम? क्या धर्मी का सच्चा काम?
बोले नानक स्वाँस स्वाँस में। जहाँ लखो वह मिले पास में॥
धर्मी करता जग कल्याण। पीड़ित जीव जन्तु का त्राण॥
धर्म सभी उत्तम ही होते। धर्मी सबकी पीड़ा खोते॥

एक ब्रह्म सबका आधार। ऊंच नीच का व्यर्थ विचार।।
जीव जगत उसकी सतान। सत्य सरलता उसका भान।।
मेरे तेरे बीच मे, भेद नहीं लवलेश।
अन्तर व्यापी एकता, विविध बाहरी वेश।

एक भूख है एक पिपासा। एक हृदय से निसृत भाषा।।
कहाँ भद है मन का मन से? क्या है अन्तर तन का तन से?
वसुधा एक कुटुम्ब सर्व का। जीवन दाता दान पर्व का।।
मानवता की भाषा एक। डिगे न मन का मर्म विवेक।।

युग युग का है सत्य यही। निर्माता है एक वही।।
झूँठ झूँठ है सत्य सही। इस पर आश्रित स्वर्ग मही।।
एक पिता है अलख पुरुष। ब्रह्म सत्य है माया भुस।।
छोड़ो कपट कुचाली चाल। ढोंग बनाता जीव विहाल।।

जो बोले सो अभय निहाल। सत श्री राजत पुरुष अकाल।।
मुझ मे तुम मे भेद नही। सबको जाना अंत वही।।
गुरु को शुभ सत्य ज्वलत गिरा, मन भेद गई उर अन्तर में।।
शुचि चेतन अश अनन्त अनश्वर, नियति जगे मन्वतर में।।

समझे यह सत्य अनिन्द्य वही प्रभु भेद नही बस एक वही।
वह एक अकाल अनादि अनंत वही सब भांति से सत्य सही।।
जब मौलवियों ने बात सुनी। मन ही मन सत्य सुनीति गुनी।
समझे अवतार जगत पति का। यह एक सुलक्ष्य जगत गति का।।

सिर टेक दिया नानक पग में। ज्यों फूल हुये कंटक मग में।।
सैय्यद रुकन लुद्दीन मिले। मिल भीतर भाव प्रसून खिले।।
वे उच्च शरीफ से हज्ज गये। पाये नानक से ज्ञान नये।।
मुखिया हजियों के गर्व महा। उतरा उर नानक शब्द कहा।।

सिर धारि खटाऊँ गुरु जी की । उर धारी शुभ श्रद्धा नीकी ॥
मक्का से फिर बगदाद गये । सिर ऊपर नीरद नव्य छये ॥
दूर नगर से उपवन प्यारा । गुरु नानक ने आसन धारा ॥
स्वर सतिनाम गगन में गाढ़ा । ब्रह्म नाद कुंडलिनी काढ़ा ॥

नगरी में नीरवता छाई । दस्तगीर को दई सुनाई ॥
लगी समाधि चकित दिशि चारी । खुदा नूर निरखा सुविचारी ॥
पुरुष अकाल ज्योति अनजानी । पीर प्रेम उर मध्य बखानी ॥
खोले नेत्र उसी दिशि भागा । जन्म जन्म का तपबल जागा ॥

चरण गहे उर श्रद्धा भारी । जाता नाथ ! प्रेम–बलिहारी ।
देखा नहीं तपस्वी ऐसा । गुरु नानक करुणामय जैसा ॥
उर में जिज्ञासा अति भारी । उत्तर दो जग विपदाहारी ॥
कहते कैसे लाख पताला ? लाख गगन रवि कर उजियाला ॥

बात समझ में कभी न आई । खोलो भेद सहज समझाई ॥
बोले नानक मति के भेदा । प्रतिभा बल मिट जाते खेदा ॥
जो हम कहा उसे दिखलाते । ज्योति जगे जो पीछे आते ॥
भेजा पीर पुत्र अभिमानी । गुरु से पहुँचे भूमि ऊजानी ॥

लाखों ही पाताल दिखाये । स्वर्गधाम पर फिर ले आये ॥
पुत्र कहा क्या कहूँ बखानी । पुरुष अकाल तत्व का ज्ञानी ॥

अवतारी अद्भुत महा, धन्य हुये सब लोक ।
पाप शाप कट जायेंगे, रहे न तन मन शोक ॥
धन्य हुये वे, धन्य हम, धन्य धन्य सब धाम ।
पन्थ चलाया नानका, बने बिगड़ते काम ॥

ईराक से चलकर तभी गुरु देव आगे बढ़ गये ।
पहुंच कर तेहरान वे शुभ सत्य रवि से मढ़ गये ॥

थे गये जिस-ओर तम का सहज भेदन हो गया।
पा गये पथ-भ्रष्ट जन भी धर्म का पथ शुचि नया ॥
इस ओर करते ज्योति जगमग रूस के थल पर गये।
पहुँच तुर्किस्तान बाबर-तख्त रूपक शुभ नये ॥

पंथ की दे ज्योति जीवन धन्य सबका कर दिया।
विष अतल अम्बुधि सुखाकर प्रेम अमृत भर दिया ॥
पहुँच कर काबुल पहाड़ी पर विराजे धर्मवत।
एक निर्झर बह उठा जिसका सलिल ज्यों ज्ञान सत ॥

आज गुरुद्वारा सुशोभित बह रहा झरना अमल।
गूँजती वाणी हवा में जो सुने उर हो विमल ॥
चल दिये खैबर सुदर्रा लांघ पेशावर गये।
गंज बस्ती में विराजे पंथ में आये नये ॥

धर्मशाला जो बनी वह आज भी शोभित वहाँ।
है वही आनन्द-अमृत, संत पग पड़ते जहाँ ॥
चल दिये जिस ओर उस थल पुण्यमय मारुत बही।
हर किसी से संत ने सत्यं शिवं की ही कही ॥

जो मिला अपना बनाया, प्रेम का अमृत पिला।
उर हुआ हर्षित कि जैसे सूर्य लख नीरज खिला ॥
पेशावर से गये गुरुजी नौशहरे।
एक पहाड़ी पर वे निशिभर ठहरे ॥

गाँव हसन अबदाल हुआ था धन्य धन्य।
कौन भला सौभाग्यवान था वहाँ अन्य ?
रहता एक फकीर वली कंधारी था।
उसे दर्प निज बल विद्या पर भारी था ॥

ज़प तप करके बहुत सिद्धियाँ पाई थीं।
लगतीं वस्तु अनेक ईश परछाईं थीं।।
रहता था जिस ओर एक झरना वहा।
मरदाने को एक दिवस गुरु यों कहा।।

जाओ लाओ नीर वहाँ झरना झरे।
करने दो उन्मुक्त सिद्ध जो भी करे।।
मरदाना ज्यों सलिल हेत सोता गया।
देखा क्रोधित रूप वली का अति नया।।

लगा कि जैसे विषधर काला सर्प हो।
या लेकर अवतार राक्षसी दर्प हो।।
मरदाना ने कहा कि ले लूँ नीर मैं।
अलख पुरुष का सेवक एक फकीर मैं।।

जलती हुई मशाल उगलती आग ज्यों।
शब्द निकलते घोर हलाहल झाग ज्यों।।
जिसके हो तुम शिष्य कहो निज भक्ति से।
क्यों न निकाले सोता अपनी शक्ति से ?

जाओ भागो दूर कहाँ का जल लिया।
रोओगे जो शाप प्रबलतम् दे दिया।।
मरदाने ने बात सभी गुरु से कही।
लेने देता बूँद एक भी वह नहीं।।

अभिमानी है विकल क्रोध में व्याल सा।
जाऊँगा फिर नही दिखे वह काल सा।।
आप जगत के स्वामी जो चाहें करें।
चाहें कर दें रिक्त, रिक्त को फिर भरें।।

नहीं असंभव जग में कोई काम है।
रिद्धि सिद्धि का दाता 'नानक' नाम है।।
नानक बोले देख रहे हो प्रस्तर को।
अभी हटेगा जरा बढ़ाओ निज कर को।।

मरदाना ने उसे मात्र ही छू दिया।
हटा अचानक शब्द न्यून भी क्या किया?
निकला सहसा धार सलिल शुचि शीतल।
ज्यों उर्वी को प्रणय रसातल का मिला।।

पहिले गंगा दिवि से, अब पाताल से।
झरता हो पीयूष कल्प तरु डाल से।।
कलकल हुआ निनाद दिव्य सा नाद था।
उजड़ा मरुथल सहसा ज्यों आबाद था।।

नव निर्झर का नीर निकलता नेह सा।
प्रकट पुण्य पीयूष सत्य की देह सा।।
देखा जब यह दृश्य वली-उर क्रोध था।
रोम रोम में जलता ज्वाला-विरोध था।।

गिरि से फेंकी शिला भयानक वेग से।
कम्पित उसका तन था मन आवेग से।।
देखा नानक शिला लुढ़कती आ रही।
मृत्यु दूतिका सी सब ढ़कती जा रही।।

उसके पथ में बैठे नानक शान्त थे।
चले प्रभंजन अम्बुधि मौन प्रशान्त थे।।
मरदाना भयभीत हुआ अति व्यग्र था।
गुरु नानक का तेज अतीव उदग्र था।।

हाथ उठाया पंजा प्रस्तर ओर था।
रुका शिला का वेग हुआ रव घोर था।।
नभ से बरसे फूल और जयकार थी।
तपबल सम्मुख यह हिंसा की हार थी।।

देख दृश्य कंधारी व्याकुल दौड़ कर।
क्षमा माँगने लगा पगों में शीश धर।।
कब जीता है दर्प तपोबल से भला?
पुण्य शक्ति को पाप-शक्ति ने कब छला?

अपनी मरता मौत जहर तो अंत में।
मिले अमरता जग को सच्चे सत में।।
संत-सामने नियति चक्रिका भी झुकी।
अब तक है चट्टान वहीं की वहीं रुकी।।

सभी विश्व को नानक का बल ज्ञात है।
पंजा साहिब गुरुद्वारा विख्यात है।।
हिलमिल हिन्दू सिक्ख झुकाते माथ हैं।
विषम परिस्थितियों में रहते साथ हैं।।

एक वृक्ष की टहनी कैसे भिन्न हो?
अरि के झूठे स्वप्न सदा ही छिन्न हों।।
अब भी गुरु का उत्तम पंजा शुभ बना।
वैसाखी का मेला लगता अति घना।।

सब जग को संदेश प्रेम का दे रहा।
संतों के उर से अमृत ही सदा बहा।।
चले गुरुजी रावलपिंडी धर्म-हित।
अलख पुरुष के ध्यान हो रहा मग्न चित।।

मरा, कहूटा, जेहलम पहुँचे मोरपुर।
मिदर से फिर स्याल कोट पीयूप उर।।
प्रेमभाव ले पहुँचे मूल्य के सदन।
पत्नी ने ढक दिया ऊपलों से वदन।।

अन्तर्यामी सभी जानते घट घट की।
समझ गये यह चाल निरर्थक कपट की।।
बोली मूला नहो हमारे इस सदन।
हँसे झूंठ पर नानक अपने मन ही मन।।

बोले तेरा कथन सत्य हो जायगा।
जो करता जैसा है, फल भी पायगा।।
गये गुरुजी लौट बेरवट के तले।
तभी खबर ले जन कुछ आगे को चले।।

मूला को डस लिया सांप ने मर गया।
प्रभु इच्छा का ही कौतुक था नया।।
ध्यान मग्न गुरुदेव त्रिलोकी भान से।
जान लिया था मर्म अकार्मी ज्ञान से।।

जन्म जन्म की कथा प्रकट सी हो गई।
कालाम्बुधि में बूंद विचारी खो गई।।
स्यालकोट से सैयदपुर को आ गये।
लालो मानों ब्रह्मतेज को पा गये।।

दूर दृष्टि से देखी करनी क की।
पढ़ी लकीरें सैयदपुर के ।।
बाबर का आतंक हवा ।
बेले होगा एक

कठिन परीक्षा होगी ईश्वर भक्ति की।
देखोगे आश्चर्य अकाली शक्ति को ।।
थोड़े दिन के बाद आक्रमण हो गया।
सैयदपुर का भाग्य सदा को सो गया ।।

हार पठानों की बाबर की जीत थी।
जनता थर थर कंपित अति भयभीत थी ।।
कत्लेआम किया फौजों ने निर्दयी।
लूटपाट घर घर को करते जो जयी ।।

बाँधे युवती युवक वृद्ध औ बाल भी।
जो करता प्रतिकार खींच ली खाल भी ।।
पराधीन कर खीचे दासी दास थे।
कोड़े, डंडे, चाकू, भाले पास थे ।।

खींच रहे थे जैसे झखड़ झाड़ हों।
रहिला गण को दुग्ध कर रहे भाड हों ।।
मरदाने के साथ गुरुजी बध गये।
अवतारी करते थे कौतुक अति नये ।।

राह चले लाहौर शीश पर गठरियाँ।
पटी पडी थीं रुंड मुंद से पटरियाँ ।।
धूल भरे मुख बुरे हाल को देख कर।
उर में करुणा के अमृत का कूप भर ।।

गीत उठाया मानों अनहद नाद था।
सुना उसी का दूर हुआ अवसाद था ।।
सबके बोझ हलके जैसे फूल थे।
अनुभव होता पहुंच रहे ज्यों कूल थे ।।

नानक के सिर गठरी सहसा उठ गई।
दस अंगुल सिर ऊपर वह शोभा भई॥
घोड़ा चलता जाता अपने आप था।
मानों मिटता था जग भारी पाप था॥

बाबर के परिचारक लख कर चकित से।
देख रहे थे कौतुक भारी थकित से॥
बोले जाकर बादशाह के पास में।
खुदा दीखता हमको संत लिबास में॥

चलें आप भी देखें अपनी दृष्टि से।
तन मन भीगें सुधामयी उस वृष्टि से॥
आया बाबर देखा अद्भुत दृश्य था।
प्रकट हुआ जो ब्रह्म सदा अदृश्य था॥

माथ झुकाया, सिर चरणों की धूल ली।
क्षमा माँग ली जो यह भारी भूल की॥
मुक्त कर दिया जितने दासी दास थे।
लुटा दिये सब वैभव जितने पास थे॥

सबको लेकर साथ गुरुजी चल दिये।
दुष्ट जनों के कुकृत्य पल में मल दिये॥
सैयदपुर में आकर नानक रम गये।
पाप कृत्य सब उनके आगे थम गये॥

अत्याचारी डरे हुये सद्धर्म से।
लौट रहे थे अपने कुत्सित कर्म से॥
समय आ रहा ज्योति-मिलन का,
पूर्ण हो रहे काम थे।

जिन जिन जन को चरण मिले,
वे बने पुण्य के पात्र थे ॥
पंथ चलाया शुद्ध धर्म का,
अनुयायी सब ओर थे।
निशा-कालिमा से घबड़ाये,
देख रहे सब ओर थे ॥

सर्ग २०

ज्योतिर्लीन

श्रादि देवता गणपति की जय । देव–विजय हो श्रसुर पराजय ।।
धन्य भाग्य मानव तन पाया । श्री सतगुरु का नाम सुनाया ।।
सतगुरु चरण कमल का वन्दन । मिट्टी का तन बनता चन्दन ।।
नानक से गोविन्द सिंह तक । सभी हुये हैं धर्म–प्रवर्त्तक ।।

सबके चरणों की रज धारी । सत्य धर्म की ध्वजा प्रचारी ।।
श्रपने उर में श्रद्धा भर ले । श्री सतगुरु का वंदन कर ले ।।
जीवन में ही मोक्ष मिलेगा । पुण्य धर्म का कमल खिलेगा ।।
जो बोलेगा श्रभय बनेगा । सत्य धर्म तरु–फूल–फलेगा ।।

जीवन का है ध्येय धर्म ही । पुण्य कर्म है मुक्ति मर्म ही ।।
प्रातः काल उठते ही बोलो । ईश नाम का श्रमृत घोलो ।।
जन्म भूमि की रज सिर धारो । मात पिता का चरण पखारो ।।
पी लो श्रंजलि भर उस जल को । धो डालो कलियुग के मल को ।।

मात पिता ही ईश रूप है । सुधा भरे दो स्वर्ग–कूप है ।।
इनकी कर लो सेवा प्राणी । श्रद्धा शाश्वत शुचि कल्याणी ।।

नानक श्रौर सुलक्षणी, इनका शिशु संसार ।
सभी सगे भाई, बहिन, सबसे सच्चा प्यार ।।

श्री सतगुरु की कथा उठाई । ईश कृपा नौका तट श्राई ।।
धर्म प्रकाश जगत पर छाया । माया तम सतिनाम नसाया ।।
गुरुवर जग परिक्रमा कर ली । सर्व भूतहित इच्छा भर ली ।।
सम्वत् पन्द्रह सौ उन्नयासी । सत्य धर्म के शुभ विश्वासी ।।

सैयदपुर से पसरूर आये । फिर करतार पुरी पग धाये ।
पहुंचे निज परिवार समागे । पूरे ज्ञान दया के धागे ।।
दिया उतार फकीरी बाना । लिया गृहस्थी का परिधाना ।।
खेतीबाड़ी की धुनि लागी । तन से कर्मी मन से त्यागी ।।

लंगर की शुभ करी व्यवस्था । जल नीरज की स्वच्छ अवस्था ।।
सिक्खों के दल बादल आते । दर्शन करते भोजन पाते ।।
धन दौलत जो भी वे देते । नानक कभी न कुछ भी लेते ।।
भरपूर फिर भी था भोजन । निर्मल होते सबके तन मन ।।

सच्ची रहे भावना मन की । ईश व्यवस्था करता धन की ।।
सुघर गृहस्थी दीन न लेते । जितना बनता याचक देते ।।
लोभी जन को माया छलती । जन की शुद्ध कमाई फलती ।।
अपना करते काम मग्न हो । उनका कभी न धर्म भग्न हो ।।

कर्म हमारी सच्ची पूजा । नहीं सार इसमे बढ़ दूजा ।।
नहीं निवृत्ति से मोक्ष मिलेगा । कर्मवीर का भाग्य फलेगा ।।
बना स्वर्ग से भी सुखद, कर्मवीर का भाग्य ।
अपना निर्माता स्वयं, उपजाता सौभाग्य ।।

एक बार गुरु गये बटाला । आनन पर था ओज उजाला ।।
शिवरात्रि-आयोजन मेला । मची सिद्ध जन ठेलम ठेला ।।
अजित रंधावा साथ लिया था । कर्णनाद उपदेश दिया था ।।
गुरु दर्शन हित संगत आई । भेंट रूप संपति बरसाई ।।

देख सिद्ध-मन ईर्ष्या जागी । योग-मुक्ति मानस से भागी ।।
छुपा दिया धन पात्र कहीं पर । कर कोलाहल लड़े वहीं पर ।।
भक्त ढूंढते डोरे लोटा । लगी बाजने सोटम सोटा ।।
अहंकार भारी सिद्धों में । दुर्गन्धी आमिष गिद्धों में ।।

अन्तर्यामी नानक बोले । चाबी जानें ताला खोले ।।
कौन भला निज स्वत्व खोयगा । प्रात हुआ फिर कौन सोयगा ?
यदि है नाद क्वणन नहीं खोटा । प्रकट होयगा धनदा लोटा ।।
तत्क्षण लोटा प्रकट हुआ था । बुद्धि चरम उत्कर्ष छुआ था ।।

सिद्ध योगियों की मति मारी । बोले गुरुवर शरण तुम्हारी ।।
नाथ त्रिलोकी सतत धन्य है । गुरु नानक सा कौन अन्य है ।।
खलजन बौराये वहाँ, हुई व्यवस्था क्षीण ।
बतलाता हर स्वयं को, विद्या–बुद्धि–प्रवीण ।।

एक कहा आ तर्क करेंगे । हारेंगे वे दंड भरेंगे ।।
दूजा बोला मो सम को है ? वही रहेगा जो जन जोहै ।।
जैसे मल्ल लगावे बैठक । बाजीगर दिखलावे चेटक ।।
मल्ल दंगली दाव निराले । और करें क्या बैठे ठाले ?

नानक ~व जलधि गभीरा । काच मध्य ज्यों चमके हीरा ।।
अधराधर पर स्मित दमकी । आनन पर ज्यों विद्युत चमकी ।।
बोला एक सिद्ध बौराया । कांजी पात्र दुग्ध डलवाया ।।
फटा दूध क्यों मक्खन देगा । सैकत सलिल कौन भर लेगा ?

पहले बने संत तुम बाबा । फिर गृहस्थ में, क्या पछतावा ?
कैसे तुमको मोक्ष मिलेगा । यम का डंडा शीश झिलेगा ।।
बोले नानक "भूले भाई ! ऐसी कुमति बुद्धि क्यों छाई ?
त्याग गृहस्थी संन्यासी हो । फिर क्यों भिक्षा अभिलाषी हो ?

त्याग चुके तुम जिस दाने को । फिर क्यों जाते कुछ पाने को ।।
कैसे तुम बैरागी भाई । भोजन देख जीभ ललचाई ।।
इससे अच्छा गृहस्थी बाना । श्रम कर रूखा सूखा खाना ।।
सुनकर नानक की सच वाणी । भौंचक्के वे भूले प्राणी ।।

चोट पड़ी पीड़ित बड दंभा। मार्जारी बस नौंचे खंभा ॥
भाँति भाँति के रूप बनाये । चीखें भीखे चिर चिल्लाये ॥
रूप धरे अज्ञानी डोले। अर्थहीन जल्पक सम बोले ॥
मंत्र तंत्र मारण उच्चाटन। ह्रीं क्लीं फट्ट मूंठि सिर काटन ॥

बाघ बने गर्जे गुर्राये । पक्षी बन नभ में लहराये ॥
नाग बने पावक बरसाई । डाकिन बन भक्षण को धाई ॥
किन्तु सुनानक तनिक न डोले। प्रेम पगी शुभ वाणी बोले ॥
क्यों बल अजमाते हो भाई । गिरा श्रंग ना हटे हटाई ॥

सत्य आग सम, जलें विकारा। उल्टी बहे न सरिता धारा ॥
स्वर्ण भला कब लगती काई। सौरभ भला न किसको भाई ॥
सुनकर मधुर सरस कल्याणी । गूंजी कर्ण अनाविल वाणी ॥
जैसे सुप्त जगे सुन हेला । जड़ जीवों में ज्ञान धकेला ॥

उसी तरह सिद्धों की जड़ता। मिटी, ज्ञान की आई दृढ़ता ॥
कहा अजित से लोक खींच दो । जादूगरी तुरन्त भीच दो ॥
आज्ञा पालन किया अजित ने। किया समर्पण शक्ति विजित ने ॥
गोले में जो लोग खड़े थे । हो भयहीन सुसत्य अड़े थे ॥

सिद्ध चरण में श्रद्धावनत थे। सबके आनन पूर्ण विनत थे ॥
आप पुरुष कर्ता शुभ रूप । सकल जगत के सच्चे भूप ॥
शरण गया वह मोक्ष पा गया। उर में शुभ आनन्द आ गया ॥
सिद्धों को उपदेश दे दिया। अशरण को निज शरण ले लिया ॥

चमत्कार सतिनाम बिना क्या। त्रिभुवन वैभव कभी गिना क्या ॥
और सभी बादल की छाया । मारुत की गति शीघ्र मिटाया ॥
जगत रचा प्रभु की इच्छा से। भ्रम मिट जाता शुभ शिक्षा से ॥
आप वही सब ओर विराजा । जीवमात्र है दिव्य समाजा ॥

जोग सती जंगम संन्यासी । वैष्णव शैव शाक्त उदियासी ।।
सब हैं एक पुरुष की छाया । ब्रह्म सत्य झूठी सब माया ।।
नानक तब मुलतान को, गये पीरपुर पास ।
दुग्ध कटोरा फूल रख, खिला अधर का हास ।।

सबको सच्ची राह बताई । ज्ञान ज्योति जगमग छवि पाई ।।
फिर करतार पुरी मे आये । संगति जुड़ती रूप सजाये ।।
लगर नित्य अनन्त अनूठा । त्याग रहे जन जीवन झूँठा ।।
एकमात्र शुचि कचन शेषा । आत्म तत्व अन्तिम अवशेषा ।।

लहना जी के रूप समाये । श्री गुरु आनन्द नाम कहाये ।।
पन्द्रह छिनमें संवत सेले । ज्योति जली शुभ अमृत वेले ।।
एक अभेद भेद नही जाना । गुरुआई का रूपक ठाना ।।
एक जन्म की पूर्ण कमाई । जन्म जन्म में संचित पाई ।।

दूर दृष्टि अवलोकन करती । दस गुरुओं की मूर्ति उभरती ।।
मानवता हित कष्ट सहेगे । प्रभु इच्छा अनुरूप रहेंगे ।।
कष्ट प्रभजन दीख रहे थे । युग निर्झर सम फूट बहे थे ।।
एक जन्म कारणीय किया था । भावी का संकल्प लिया था ।।

विश्व वदर जिमि रखा हथेली । सुलझ चुकी थी गूढ़ पहेली ।।
हस्त आमलक वत प्रभु सृजना । निकट दीखता तन का तजना ।।
नीर मध्य ज्यो नीरज सोहे । ज्ञानी कब माया हित मोहे ?
वस्त्र पुरातन सम तन त्यागें । विश्व निशा में योगी जागें ।।

जीवन की धारा बिन बाधा । तन पुरुषार्थ त्रयी को साधा ।।
मोक्ष मध्य चेतन अविनाशी । शुभ कर्तव्य हेतु तनवासी ।।
एक जन्म पूरा हुआ, तो फिर भी अवशेष ।।
लक्ष्य साधना दूर की, करूँ प्रयास विशेष ।।

अमृत वे पिते नित्य नियम से । लौकिक निग्रह चेतन शम से ।।
रावी निर्मल जल अभिषेकी । उर निश्छल मति वारि विवेकी ।।
आत्म गहनता शुचि अवगाहन । ऊर्द्ध मुखी कुंडलिनी वाहन ।।
नाम कीर्त्तन प्रभु का ध्यान । निकट दीखता तन-अवसान ।।

कृषि को आय चलाते लंगर । जीत चुके थे दुर्गुण संगर ।।
भक्ति मुक्ति का ऐसा संगम । निर्विकार शतदल जल अंगम ।।
सकल भूमि नभ जल नवखंडी । ऊर्द्ध चेतना निरत अखंडी ।।
ज्यों रविकर प्रकाश सर्वंगी । गुरु की कृपा अनन्त निहंगी ।।

नानक निरंकार जगदीशा । शुद्ध विवेक सुदर्शी शीशा ।।
सोलह वर्षी वाणी रचना । बारह माह तुखारी वचना ।।
जपु जी साहिब लहना डेरे । करवाई श्री अंगद फेरे ।।
भाई बुड्ढा जी लिपिबद्धा । पूर्ण कर रहे अतुलित श्रद्धा ।।

अंत समय अति शान्त सुकर्मी । पट सिद्धान्त प्रचारे धर्मी ।।
अहंकार पाखण्ड त्याग लें । श्रम करने हित सभी भाग लें ।।
करें जरूरत अपनी पूरी । तन हो कहीं, न मन से दूरी ।।
दीन दुखी जन की हो सेवा । यही जगत की सच्ची मेवा ।।

सब पर दया, नम्रता धारो । एक ब्रह्म है सदा विचारो ।।
नाम जपो हर कारज करते । सांस सांस हरि रस से भरते ।।
जो प्रभु करते, अच्छा करते । यह विश्वास हृदय में धरते ।।
ज्योति निरंकारी शुचि शोभा । उर विकसित अमृत-मय गोभा ।।

वर्ष सु सत्तर पांच महीना । सात दिवस कछु जाय कहीं ना ।।
कृष्ण पक्ष आषाढ़ मास का । दसमी तिथि शुभ ब्रह्म वास का ।।
संवत पन्द्रह शत सु ध्यान में । मग्न हुये प्रभु ब्रह्म ज्ञान में ।।
एक ओंम सतिगुरु प्रसादि कह । सत्ताहरि शुभ सुचा रूप रह ।।

ज्योतिर्लीन].

एक ज्योति चिर ज्योति समाई । गगन मगन नव छटा सुहाई ॥
ब्रह्मरन्ध्र से तेज प्रकट हो । ऊर्ध्व गमन कर हरि उद्‌भट हो ॥
धरा ओर से नभ गया, एक सितारा दिव्य ।
अन्तरिक्ष वर्षा सुमन, सुर पूरित कर्तव्य ॥

धन्य धन्य की नभ ध्वनि छाई । शीतल मंद सुगंध सुहाई ॥
श्याम घोरहर बादल आये । रिमझिम रिमझिम जल बरसाये ॥
उपवन कलित कली भी । विकसित प्रतिगृह ललित लली भी ।।
पुष्प सुरभि महकी महकाई । कोकिल पंचम तान सुनाई ॥

प्रश्न हुआ सहसा आकाशी । कौन हर्ष युत रे भू वासी ।
विरह हुआ फिर हर्ष कौन सा ? चकित विश्व पल प्रेम मौन सा ॥
स्वतः एक ध्वनि गू जी प्यारी । रे नभ ! यह कुछ रीति सुन्यारी ॥
कौन कहे वह बिछुड़ा हम से । नाद कभी बिछुड़ा है तुम से ?

अपने प्राणों में हम पाते । शाश्वत मिलन गीत अब गाते ॥
नानक सांस सांस का वासी । धर्म रूप शाश्वत अविनाशी ॥
धन्य धरा यह धर्म धर, प्रकटे नानक संत ।
जब तक नानक नाम है, हो न धर्म का अंत ॥

देशवासियो ! धन्य धन्य हो । जगती मे तुम हो अनन्य हो ॥
उस थल पर तुम जनमे भाई । जो नानक की मात कहाई ॥
क्या तुम भूल सकोगे उसको ? परम ब्रह्म अवतार पुरुष को ?
जिसने सबको प्यार दिया था । सुत सम सहज दुलार दिया था ।

हिन्दू मुस्लिम सिक्ख ईसाई । उसको सब समान थे भाई ॥
जो आया वह प्यार पा गया । नानक सबके हृदय छा गया ॥
सबके हित में उसका चित था । राष्ट्र एकता हित अर्पित था ॥
एक एक जो बात कही थी । सबके हित वह सत्य रही थी ॥

उसने जो यह पंथ चलाया। उपना उर सद्भाव गलाया ।।
उसके अनुयायी तो वे है। जो हिंसा से सदा परे है ।।
हिन्दू सिक्ख मुसलमां प्यारे। उसकी आँखों के सब तारे ।।
गुरु द्वारे में भेद कहां है ? गुरु नानक है, सत्य वहां है ।।

जो हिंसा के मार्ग डटे है। वे नानक से दूर हटे हैं ।।
सच्चा सिक्ख अहिंसा प्रेमी । देश भक्त मानवता क्षेमी ।।
राष्ट्र एकता पूर्ण समर्थक । सतगुरु की वाणी का अर्थक ।।
मन्दिर मस्जिद औ गुरुद्वारे । ईश धाम सब हमको प्यारे ।।

हे गुरु नानक शक्ति दो, सत्य धर्म बल तेज ।
देश प्रेम शुभ धर्म की, थाति रखें सहेज ।।

जितने दिन जीवन जीते रहें, शुभ कर्म कुछ पुण्य करें।
सब त्याग करें बलिदान करें, अपने उर में शुभ भाव धरें ।।
निज देश हितैषी सदा ही रहें, उसके सब कोष अनिन्द्य भरें।
गुरु नानक को सब याद करें, उनके पथ में ही सदा विचरें ।।
वाहि गुरु जी का खालसा । वाहि गुरु जी की फतह ।।

□□

अमर वाणी

धन्य है वे सिद्धजन, कुछ कर गये।
भावना से विश्व का उर भर गये॥
कौन कहता है कि वे अब मर गये?
हो अमर संसार सागर तर गये॥

कौन कहता है कि नानक हैं नहीं?
जिस जगह पर सत्य है नानक वहीं॥
नाम नानक सद्‌गुणों का हो गया।
भाव मुक्ता सत्यधागा पो गया॥

अमर वाणी भूल सकते क्या कभी?
पथ गहेंगे पार होंगे हम तभी॥
कह गये जो बात समझो सत्य है।
विश्व-मानव संत जन का भृत्य है॥

भ्रात! अपने उर कमल को खोल लें।
सुधा वाणी कर्णपुट में घोल लें॥
आज भी महिमा अमित उपदेश की।
बच सकेगी लाज उससे देश की॥

कह गये नानक कि विरले लोग हैं।
काम्य जिनको सत्य, त्यागे भोग हैं॥
त्याग कर अन्तर जगत के वर्ण का।
देह उनकी रजत, मानस स्वर्ण का॥

नामरत 'निमल कटे सब कूट मल।
देशहित औ धर्महित बलिदान पल।।
एक अनुशासन प्रभो का मान्य है।
मिट गया परहित वही सम्मान्य है।।

परम तत्व है जिसका वाचक एक है?
एक ओम ही जन का परम विवेक है।।
सत्य सदा रहता है केवल एक ही।
व्याप्त उसी में रहता सत्य विवेक ही।।

है उसका अस्तित्व मुक्त चिर काल से।
सदा एक रस रहता शाश्वत हाल से।।
स्वतः प्रकाशित जन्म रहित है सर्वदा।
गुरु अनुकम्पा बनती उस हित मोक्षदा।।

माया से ही द्वैतभाव चित में रहा।
अहंकार है नाश यही अनुभव गहा।।
काम क्रोध दुख मूल सदा ही त्याज्य है।
एक निरंजन निराकार अविभाज्य है।।

दुर्मति ही रखती है ऐसा द्वैतभाव।
धरती नभ में सदा दूसरे का अभाव।।
वही एक प्रियतम है चन्दा सूर्य में।
बसा हुआ है प्राण प्राण के तूर्य में।।

सत्य पुराना कभी न होता, चिर नवीन।
गहो उसे फिर सकल ज्ञान के हो प्रवीन।।
उसने जन्म दिया ब्रह्म को सृजन को।
विष्णु और शिव उसके गाते भजन को।।

मूल्य वही आंकेगा सबमें व्याप्त जो।
वही मान लो पूर्ण सदा पर्याप्त जो॥
वही करण कारण है सक्षम है वही।
उसके त्यागे और नहीं मिलता कहीं॥

अंत नहीं परमात्म सृष्टि का मीत रे।
वही बनाता ग्रीष्म बनाता शीत रे॥
समय, दिवस, ऋतु, मास उसी के दास रे।
चमत्कार सक्षमता उसके पास रे॥

कितने रचे महेश बनाये सूर्य रे।
उसकी बाजी बीन गूंजता तूर्य रे॥
अगणित उसकी कर्म भूमियाँ कर्म रे।
अगणित उसके नाम रूप औ धर्म रे।

इन्द्र, चन्द्र, सूरज सब उसके दास रे।
दूर नहीं वह सबके घट के पास रे॥
सिद्ध बुद्ध वैरागी देवी देवता।
उसे पुकारें सब ही इसका दे पता॥

सत्य है खण्ड, सत्य ब्रह्माण्ड, सत्य है लोक सब।
सत्य तुम्हारे कार्य, सत्य सुख शोक सब॥
सत्य प्रभो की सृष्टि उसी को याद कर।
व्यर्थ विवादों मे मत मति बर्बाद कर॥

सत वही जो आत्म चीन्ह कर तत्व ले।
मनुज वही जो साधु कर्म से सत्व ले॥
धन्य धन्य उस नर की जननी धन्य रे।
जिये धर्म के लिये वही नर धन्य रे॥

कर लेरे शुभ काम दया कर दान कर।
दोनों हाथों कमा सभी का मान कर॥
भक्त बड़ा है सबसे उसकी जय कहो।
जैसे राखे सांई वैसे खुश रहो॥

भय में पवन सदा बहता है।
भय में सागर भी रहता है॥
भय में पावक झल जलती है।
भय में वर्फ शिला गलती है॥

भय में चलते सूरज चन्दा।
भय में संसृति के सब धन्धा॥
निर्भय निरंकार बस वह ही।
कोटि सत्य का सौरभ यह ही॥

निर्भय बनता वह ही मानव।
उर में भक्ति भाव का उद्भव॥
सत्य बनाता निडर मनुज को।
दूर भगाता वैर दनुज को॥

दिनचर्या हो सरल सुहाई।
अमृत वेले उठना भाई॥
शुद्ध वायु में भ्रमण करोगे।
शुद्ध भावना हृदय भरोगे॥

करो न मैत्री करो न वैर।
मांगो जीव मात्र की खैर॥
सबके सुख में अपना दु:ख है।
सबका दु:ख भी अपना दु:ख है॥

हँसा सको यदि रोते जन को।
हर्ष मिलेगा भारी मन को॥
दीन दु:खी प्रभु के ही रूप।
दया भाव है अमृत—कूप॥ □

अभिलाषा

भगवान नानक देव जी इस देश को वर दीजिये।
सद्भावना सत्प्रेम से सबके हृदय भर दीजिये॥
हम सभी भाई बहिन माता हमारी एक है।
एक होकर हम रहेंगे यह हमारी टेक है॥

एकता अपनी सदा ही हो अखंडित देश में।
रह रहे हों चाहे हम जिस क्षेत्र में जिस वेष में॥
धर्म हो कोई हमारा चाहे भाषा भिन्न हों।
विविधता में एकता लेकिन कभी ना छिन्न हो॥

धन्य भारत भूमि तू है स्वर्ग से बढ़कर हमें।
तेरी प्रगति के कर्म में ही मन हमारा चिर रमे।
जन्म तुझ से ही लिया माँ, गोद में तेरी पले।
तेरी सुनहरी धूल के कण ही सदा तन पर मले॥

अन्न खाया और तेरा जल पिया सासें गही।
वेदना कितनी जननि ! तूने हमारे हित सहीं॥
कोटि जन्मों में तुम्हारा ऋण चुका सकते
इसलिये हम गुण कथन करते कभी

सर्ग-21

सच्च खण्ड यात्रा

शीश झुका है कर जुड़े, विनती बारम्बार।
सतगुरु नानक देव जी, नाव लगाना पार॥

नानक देव ब्रह्म अवतारी। प्रकट हुये करुणा कर भारी।
कलियुग में सतयुग ले आये। भक्त जनों ने सब सुख पाये॥
म्लेच्छ जनों से धर्म बचाया। किया साधुजन का मनभाया।
...णी से अमृत बरसाया। स्वाभिमान का पाठ पढाया॥

...ो शिक्षा दीनी। सद्गुण सुरभि बहाई भीनी॥
...म मंत्र सिखाया। घृणा द्वेष विष दूर हटाया॥
... के भाई। हिन्दू मुस्लिम सिक्ख ईसाई॥
... सपना। सबको समझो भ्राता अपना॥
...ओ। दुखी जनों के कष्ट मिटाओ॥
...के। मैल मिटाओ भरे मनों के॥

...ल शुचि, भेदभाव से हीन।
..., पुण्य धर्म में पीन॥

... सदा लगी शुभ ग्रानग्रान की॥
शुभ कर्मों से पुण्य पास थे॥
... मुनतान परम सुख साजे॥
...टी जल निज तन मलते॥

अभिलाषा

भगवान नानक देव जी इस देश को वर दीजिये।
सद्भावना सत्प्रेम से सबके हृदय भर दीजिये।।
हम सगे भाई वहिन माता हमारी एक है।
एक होकर हम रहेंगे यह हमारी टेक है।।

एकता अपनी सदा ही हो अखंडित देश में।
रह रहे हों चाहे हम जिस क्षेत्र में जिस वेष में।।
धर्म हो कोई हमारा चाहे भाषा भिन्न हो।
विविधता में एकता लेकिन कभी ना छिन्न हो।।

धन्य भारत भूमि तू है स्वर्ग से बढ़कर हमें।
तेरी प्रगति के कर्म में ही मन हमारा चिर रमें।
जन्म तुझ से ही लिया माँ, गोद में तेरी पले।
तेरी सुनहरी धूल के कण ही सदा तन पर मले।।

अन्न खाया और तेरा जल पिया सासें गही।
वेदना कितनी जननि! तूने हमारे हित सहीं।।
कोटि जन्मों में तुम्हारा ऋण चुका सकते नहीं।
इसलिये हम गुण कथन करते कभी थकते नहीं।।

हो अखंडित, हो खुशी, हे मात! युग युग तक जियो।
अमर, नव नव वरद सुखदा कीर्ति का अमृत पियो।।
तुम रहो माँ! हम रहें या ना रहें चिन्ता नहीं।
गोद तेरी ही मिले हम जन्म लें चाहे कहीं।।

सर्ग-21

सच्च खण्ड यात्रा

शोश झुका है कर जुड़े, विनती बारम्बार ।
सतगुरु नानक देव जी, नाव लगाना पार ।।

नानक देव ब्रह्म अवतारी । प्रकट हुये करुणा कर भारी ।
कलियुग में सतयुग ले आये । भक्त जनों ने सब सुख पाये ।।
म्लेच्छ जनों से धर्म बचाया । किया साधुजन का मनभाया ।
वाणी से अमृत बरसाया । स्वाभिमान का पाठ पढाया ।।

सदाचार की शिक्षा दीनी । सद्गुण सुरभि बहाई भीनी ।।
देशभक्ति का मंत्र सिखाया । घृणा द्वेष विष दूर हटाया ।।
हिलमिल रहो देश के भाई । हिन्दू मुस्लिम सिक्ख ईसाई ।।
मायामय यह जग का सपना । सबको समझो भ्राता अपना ।।
जितना संभव पुण्य कमाओ । दुखी जनो के कष्ट मिटाओ ।।
पौछो आँसू दीन जनो के । मैल मिटाओ भरे मनो के ।।

सिक्ख धर्म अति विमल शुचि, भेदभाव से हीन ।
सत्य अहिंसा शुभ क्रिया, पुण्य धर्म में पीन ।।

श्री नानक की बहिन नानकी । सदा रंगी शुभ ग्यानध्यान की ।।
बहनोई जै राम दास थे । शुभ कर्मो से पुण्य पास थे ।।
श्री गुरु नानक वहीं बिराजे । पुर सुलतान परम सुख साजे ।।
अमृत वेले उठकर चलते । वेई नदी जल निज तन मलते ।।

ध्यान मग्न होते जप करते । पुण्य सुरभि से जग को भरते ॥
सेवक साथ रोज था रहता । शीतल मंद समीरण बहता ॥
एक दिवस ग्रभृत के बेले । अवतारी नव कौतुक खेले ॥
वस्त्र उतारे जल में कूदे । डुबकी से जल कर्दम खूंदे ॥
बहुत काल तक बाट निहारी । सेवक मन में चिन्तित भारी ॥
खूब पुकारा टेरम टेरा । कहाँ गुरु जी किया बसेरा ॥

ढूंढूं कहाँ बताओ अब, हे जग पालनहार ।
कण कण में हो व्याप्त तुम, ढूंढ़ थका संसार ॥

रोते रोते सेवक आया । बहिन नानकी भेद बताया ॥
नानक डूबे जल गहराई । सुनकर भीड़ द्वार पर आई ॥
बोले चलो बिलैया डालो । ढूंढो तन को खींच निकालो ॥
बोली बहिन नानकी बाई । क्यों सबकी है मति भरमाई ॥

सब जग पार उतारन हारा । सबको देता स्वयं किनारा ॥
क्या वह डूब सकेगा भाई । जिसने सारी सृष्टि बनाई ॥
जिसका पाकर एक इशारा । सप्त सिन्धु जल बदले क्षारा ॥
राई पर्वत, पर्वत राई । गोखुर सागर बन लहराई ॥
वह किस जल में डूब सकेगा । पंच तत्व को जो गति देगा ॥
क्यों घबराते हो नर नारी । स्वयं प्रकट होगा अवतारी ॥

मैं कहती सो मान लो, दो अब चिन्ता छोड़ ।
प्रकट हो गया सूर्य ज्यों, तमस कालिमा फोड़ ॥

सुनी बात सबने धृति धारी । कही नानकी तत्व विचारी ॥
करो बात की सही परीक्षा । परसों तक सब करो प्रतीक्षा ॥
बैठे जाकर नदी किनारे । नर नारी थे परम दुखारे ॥
नानक का विछोह था भारी । चिन्ता कर तन मन दुख कारी ॥

छोड़ रहे थे आहें सोरी। कुछ की देह पड़ी थी पीरी ॥
आंसू टपके कुछ नयनों में। करुणा घुली मिली वयनों मे ॥
पशु पक्षी तक हुये दुखारे। करुणा पूरित शब्द पुकारे ॥
आओ आओ उर के प्यारे। रोते है सब जीव विचारे ॥
हाहाकर मचा अंग जग में। काल चक्र अवरोधित मग मे ॥
वह समदर्शी सबका प्यारा। सभी जाति सब धर्म-सहारा ॥

चाहे हिन्दू सिक्ख हो, या मुस्लिम या और।
नानक सबका हित किया, वह सबका सिरमौर ॥

संत सभी के अपने होते। जगती भार कंध पर ढोते ॥
ना वे हिन्दू ना ईसाई। ना वे मुस्लिम ना परसाई ॥
जाति पांति के बन्धन थोथे। कहते सब धर्मों के पोथे ॥
एक पिता है ईश्वर अपना। अलग मात्र मंत्रों का जपना ॥

भाषा भिन्न भिन्न है पूजा। ईश्वर नहीं एक से दूजा ॥
जो लड़ते हैं धर्म नाम से। उत्तेजित हो क्रोध-काम से ॥
वे नादान अमित अज्ञानी। स्वार्थ पूर्ण कुत्सित अभिमानी ॥
कुर्सी की जो छिड़ी लड़ाई। लड़वाते भाई से भाई।
हिन्दू-सिक्ख मुसलमां लड़ते। वे सब पतन गर्त्त मे पड़ते ॥
ज्ञानी जन ना भ्रम में आये। कभी न लड़ते भिड़े-भिड़ाये ॥

गुरु नानक की शपथ है, शपथ कृष्ण श्री राम।
हिलमिल कर सब जन रहो, बढ़े देश का नाम ॥

रहे सोचते दो दिन बीते। देख रहे दृग रीते रीते ॥
सबके आगे जल लहराया। पड़ती नभ की निर्मल छाया ॥
तभी सलिल में कंपन आया। सबने उस पर ध्यान लगाया ॥
सबसे पहिले तेज-पुंज सा। या दिवि द्युतिमय कल्प कुंज सा ॥

प्रकट हुआ शुचि स्वर्ण मुकुट सा। शतदल सुरभित शुभ संपुट-सा ।।
नानक का मुख दिया दिखाई। विद्युत द्युति घन बीच सुहाई।।
मुख पर स्मिति की शुचि रेखा । ज्यो घन पटल ज्योत्स्ना लेखा ।।
नव परिधान सुशोभित ऐसे। कल्प विटप नव किसलय जैसे।।
युगल नयन में प्रेम समाया। मानस हित अम्बुधि लहराया ।।
कूल बिराजे जन हरषाये। ज्यों दरिद्र नव-निधि पा जाये।।

धन्य धन्य सुरलोक से, दिया सुनाई नाद।
सब जग में सद्भाव हो, मिटें द्वेष परिवाद ।।

स्वर्ण वस्त्र झिल मिल तन सोहे। देख नारि नर मानस मोहे ।।
बाजे बजे गूंज नभ चारी। जीव मात्र अब हुये सुखारी ।।
आतप से घन रक्षा कीनी। शीतल मंद सुरभि सब दीनी ।।
बोले कोकिल मोर-चकोरा। मानस प्रेम पयोधि हिलोरा ।।

खेतों में नव फसल सुहाई। विटप शाख नव फल सरसाई ।।
धनु दुग्ध द्विगुणित दरसाया। सबके हृदय प्रेम लहराया ।।
कलियुग में भी सतयुग आया। जीव जीव में मोद समाया ।।
हिंसक ने हिंसा को छोड़ा। कुकृत्यों से नाता तोड़ा ।।
सर्प मयूर पास में दीखे। सत्य-अहिंसा के गुण सीखे ।।
हिरण शेर की कटुता छूटी। सर्प नेवला अरिता टूटी ।।

लगा कि जैसे भूमि पर, उतरा स्वर्ग सुकाल।
अभय सुखी समृद्ध शुचि, हुये वृद्ध, युव, बाल ।।

जय जय जय श्री नानक देवा। बल दो, करें देश की सेवा ।।
देश हमारा उपवन प्यारा। वासी तरुवर विविध प्रकारा ।।
भांति भांति के सुमन सुहाये। लता पता किसलय मनभाये ।।
कभी न फूलों बीच लड़ाई। कभी न तरु-वल्लरि टकराई ।।

हिलमिल रहते सुषमाधारी । मातृभूमि प्राणों से प्यारी ।।
हिन्द देश हम सबको प्यारा । प्राणों से बढ़ि हमें दुलारा ।।
एक पुष्प हिन्दू छविधारी । दूजा सुमन सिक्ख सुखकारी ।।
इनमें अन्तर कभी न देखा । नही भेद की कोई रेखा ।।
जो लड़ते भारी अज्ञानी । वंशानुक्रम-गरिमा नहीं जानी ।।
राम और लवकुश के बेटे । क्यों हो गये बुद्धि के हेटे ।।

गुरु नानक ने जो कहा, कहा कबीरा सूर ।
भारत उपवन, फूल हम, महकेंगे भरपूर ।।

बैठे नानक नदी किनारे । चरणों में नत थे जन सारे ।।
कहा नानकी "वीर हमारे । तीन दिवस हित कहाँ सिधारे ।।
विरह आपका दुसह्य हुआ था । डर ने दुःख का शिखर छुआ था ।।
क्या था लक्ष्य बताओ भैया । भगिनी लेती प्रेम बलैया ।।

नानक आनन ज्योति उजारा । स्मित विद्युत द्वेध प्रसारा ।।
ध्वनि निकली ज्यो विधि की वाणी । दृष्टि सुशोभित जग कल्याणी ।।
सच्च खण्ड की यात्रा कीनी । माया चादर उतरी झीनी ।।
निरंकार का देश सुप्यारा । आत्मलीन हो मर्म निहारा ।।
सोदर अनकह अजा अनूठा । कहता पचि पचि होता भूँठा ।।
बिना कहे उर भर भर आता । जो कहता वह भी पछताता ।।

सोदर-सोदर नानका, कौन कहे सो धूर ?
सुधा कूप के चक्र में, बजता अनहद तूर ।।

कह नानक कुंडलिनी सोती । सीप मध्य ज्यों सोता मोती ।।
खुला सीप मुख मुक्ता दमके । तप से कुंडलिनी त्यों चमके ।।
इडा पिंगला मध्य सुनाड़ी । पिपीलिका अति गहरी बाड़ी ।।
अमृत ले, विष दे, बढ़ि आगे । तप की आग पन्हारी जागें ।।

ब्रम्हरंध्र के छिद्र प्रवेशा । दीखै निरंकार का देशा ।।
अधोमुखी अमृत मय कूपा । सहस्र चक्र से हुआ अरूपा ।।
अन्हद नाद गूँजे दिनराती । दीपक जले बिना ही बाती ।।
बिन जल गोला, ठोस-प्रवाहो । आकृति हीन बिना परछाई ।।
नाम बिना सब उसे पुकारें । रूप बिना गलबाहीं डारें ।।
जल से विलग कमल दल फूलें । तन बिन सुन्दरि झूला झूलें ।।

धन्य भाग्य रे नानका, निरंकार के द्वार ।
वह जागे पावे पिया, सोवे सब संसार ।।

कौन देश से दुलहिन आई; क्यों विरहा ने भरि अजमाई;
एकमेक जब पिय संग होई । जीव जगत के सब दुख खोई ।।
नानक सबद सुनावे साँचा । किस्मत अंक कोई ना बाँचा ।
आज रही फूली फुलवारी । काल-वृषभ ने कालि उजारी ।।

सिर के केश गहे भरि मूँठा । बँधे काल के औड़े खूँटा ।।
निरंकार के जप से खूटे । भव बन्धन से निर्भय छूटे ।।
सतगुरु नाविक सत की नौका । माया ब्यारि झकोरे झौंका ।।
वाहे गुरु की फतह अनंता । आतम सुन्दरि हरिजी कंता ।।
धन्य भाग्य गुरु का सिख होई । अग जग की सब पीड़ा खोई ।।
सच्चा सिक्ख वही कहलाये । सत्य अहिंसा सद्‌गुण पायें ।

कह नानक सुन नानकी, निरंकार सच खंड ।
काल बापुरा क्या करें, पचि हारे बरिवंड ।।

जो सतगुरु का ध्यान धरेगा । वह भव सागर पार करेगा ।।
सतगुरु ने यह शिक्षा दीनी । फल पाओ जो करनी कीनी ।।
आम कहाँ जो बोय बबूला ? क्यों रोये जब बीनत शूला ।।
दल दल में जब फँसा अनाड़ी । कैसे मंजिल पहुँचे गाड़ी;

सब तन एक ब्रह्म का वासा । घट घट ओही तेज प्रकाशा ।।
क्षरण क्षरण जाय उमरिया बीती । अब तक ज्ञान गगरिया रीती ।।
बड़े पुण्य मानख तन पाये । क्यों तू मूरख इसे गंवाये ।।
क्यों तन नश्वर मल मल धोवा । अविनाशी आतमा धन खोवा ।।
सबसे प्रेम, घृणा मत कीजै । अशुभ भाव से सद्गुण छीजै ।।
सब अपने, नहीं कोई पराया । सबका भला करें रघुराया ।।

जो नानक के सिक्ख है, भेद भाव को छोड़ ।।
भाई चारे से रहें सकरी सीमा तोड़ ।।

सच्चे सिक्ख शान्ति के प्रेमी । गुरुशिक्षा के पालक क्षेमी ।।
देश भक्त मर्यादा राखें । अनुचित बात न मुख से भाखें ।।
मन के सच्चे, तन के सच्चे । सिंह सदृश्य है बच्चे बच्चे ।।
परम विश्वासी धुन के पक्के । दुश्मन के छुड़वादें छक्के ।।

धोखा करें न धोखा खायें । ऊँचे भाव सदा मन लायें ।।
देश भक्त अनुशासन मानें । संविधान का आदर जानें ।।
सह अस्तित्व प्रगति सहकारी । कभी न छोटी बात विचारी ।।
सच्चे वीर सिपाही बाके । दुश्मन पकड़ शूल पर टांके ।।
दस गुरुओं को शीश नवाते । आदर देते आदर पाते ।।
सदा मित्रता खूब निवाही । गद्दारों की करी तबाही ।।

सच्ची ताकत दीजिये हे नानक भगवान ।
कभी न खंडित एकता, रहे देश की शान ।।

हिन्दू मुस्लिम सिक्ख सब, एक बाग के फूल ।
सब पतवार चलाइंगे, नौका पहुंच कूल ।।

भगवान मेरे देश को उन्नति शिखर पर कीजिये ।
सब सुख समृद्धि से रह सकें, वरदान ऐसा दीजिये ।।
हे संत नानक । शीश टेकूँ चरण में शत बार मैं ।
हिन्दवासी मग्न हो आनन्द पारावार मे ।।